साहित्य अमृत

मासिक

चैत्र-वैशाख, संवत्-२०७७-७८ ❖ अप्रैल २०२१

वर्ष-२६ ❖ अंक-९ ❖ पृष्ठ ८४ | यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित | ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

✍ **संपादकीय**

संपूर्ण विश्व के राम ४

✍ **प्रतिस्मृति**

मेरे राम का मुकुट भीग रहा है/ *पं. विद्यानिवास मिश्र* ६

✍ **कहानी**

मन चातक हुआ/ *तुलसी देवी तिवारी* १०

रिश्तों की कड़ियाँ/ राकेश भ्रमर २२

प्यार की भाषा/ *रंजना किशोर* ३४

संस्कार/ *रीता कौशल* ४६

नीला मलहम/ *लता अग्रवाल* ५०

सौंदर्यमेव सर्वम/ *संगीता गुप्ता* ६६

✍ **आलेख**

विज्ञानसम्मत भारतीय संवत्सर/ *डी.डी. ओझा* १६

रामायण-त्रिवेणी में श्रीराम/ *विजयप्रकाश त्रिपाठी* ३२

'मैला आँचल' में प्रयुक्त धार्मिक गीत/ *पवनेश ठकुराठी* ३६

संस्कृत साहित्य में कन्या महत्त्व : लिंगभेद के परिप्रेक्ष्य में/ *विशाल भारद्वाज* ४८

ललित-निबंध की लोकतांत्रिक चेतनाएँ सांस्कृतिकता और गणतांत्रिक परंपरा/ *गोविंद गुंजन* ६२

हिंदी भाषा और शहरी लहजा/ मिस्बाह अ. हमीद पुनेकर ७०

✍ **लघुकथा**

पावन संकल्प/ *सत्य शुचि* ६१

✍ **कविता**

बना भीम सरहद का रक्षक/ *शिवनारायण जौहरी विमल* ९

खनकती आवाज और/ *मालिनी गौतम* १५

गजलें/ *विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ'* २१

ग़ज़लें/ *उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'* ३०

अभिनंदन नूतन वर्ष/ *बी.डी. बजाज* ३५

एक मुट्ठी रेत/ *मनोज जैन* ४३

कविता/ *रजनी भंडारी* ५२

ग़ज़लें/ सपना 'अहसास' ५३

दो कविताएँ/ डॉ. वीरेंद्र प्रसाद यादव, भा.प्र.से. ५७

कविताएँ/ वीणा द्विवेदी ६५

✍ **रेखाचित्र**

शीत-रात का अनुराग/ *अंजीव अंजुम* २७

✍ **राम झरोखे बैठ के**

शिकारपुर के उत्पाती/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४०

✍ **ललित-निबंध**

भीलनी गाए गीत/ *तरुण दांगौडे* ५४

✍ **व्यंग्य**

गहरी निद्रा पैठ/ *धर्मपाल महेंद्र जैन* ६०

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

कन्नड़ की चार कविताएँ/ *चेन्नवीर कणवी, एल. हनुमंतय्य, के. राजेश्वरी गौड़, सरजू काटकर* ५८

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

संकटों के बीच/ *चार्ल्स बर्नस्टीन* ६८

✍ **बाल-संसार**

कौन था…/ *मनोहर चमोली 'मनु'* ६४

घर का खाना/ *प्रवीन कुमार* ७३

कविताएँ/ रामनिवास मानव ७४

✍ वर्ग-पहेली ७५

✍ पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ७६

✍ साहित्यिक गतिविधियाँ ७७

संपूर्ण विश्व के राम

वह 'थाई एयरवेज' की उड़ान थी, अर्थात् एक बौद्ध देश थाईलैंड की राष्ट्रीय एयरलाइंस; इस उड़ान में हर यात्री के लिए समाचार-पत्र, सुरक्षा संबंधी पत्रक के अतिरिक्त चित्रकथा के रूप में रामकथा भी रखी हुई थी। मुझ भारतीय के लिए यह कितनी सुखद अनुभूति थी। श्रीराम थाईलैंड के लिए एक आदर्श प्रेरणास्रोत हैं। वहाँ के राजा को 'राम' के रूप में ही माना जाता रहा है। उनका विश्वास है कि अयोध्या थाईलैंड में थी।

इसी तरह दुनिया के सबसे बड़े इसलामी देश इंडोनेशिया में भी राम राष्ट्रीय महापुरुष हैं। वहाँ स्थान-स्थान पर रामकथा का मंचन किया जाता है। एक और इसलामी देश मलेशिया में नौसेना प्रमुख को 'लक्ष्मण' कहा जाता है। वहाँ भी जगह-जगह रामकथा का मंचन होता है। रामकथा दुनिया की हर बड़ी भाषा में अनूदित की गई है। दुनिया के १००० से अधिक नगरों, कस्बों के नाम राम के नाम पर मिलते हैं, फिर वे ईसाई देश हों या मुसलिम या बौद्ध या अन्य धर्मावलंबी। राम एक आदर्श हैं, मानव सभ्यता के लिए एक सुदृढ़ संबल, एक विराट् प्रेरणा। आज पूरे विश्व में जब राजतंत्र ढह चुका है, लोकतंत्र मजबूती से जड़ें जमा चुका है, तब राम कितने प्रासंगिक प्रतीत होते हैं, जो मात्र एक व्यक्ति के आक्षेप लगाने पर अपनी पत्नी सीता का परित्याग कर देते हैं, जबकि उन्हें सीता की पवित्रता का पूरा ज्ञान है। राम के लिए लोकमत सर्वोपरि है, सबसे पवित्र है, भले ही वह किसी एक व्यक्ति से अभिव्यक्त हुआ हो।

जब पूरा विश्व राम के जीवन से प्रेरणा प्राप्त करता हो तो राम के देश के नाते यह आवश्यक हो जाता है कि हम स्वयं को राम के आदर्शों की कसौटी पर जाँचने का प्रयास करें। दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के नाते भी हमें एक आदर्श लोकतंत्र होना चाहिए। इस कसौटी पर विचार करते हुए सोचना होगा कि अनेकानेक संवैधानिक व्यवस्थाओं के बावजूद क्या एक आम आदमी किसी सरकारी कार्यालय में बिना किसी सिफारिश के अपना उचित कार्य करा सकता है? क्या हमने अभी भी अपने लोकतंत्र को 'वीआईपी तंत्र' नहीं बना रखा है? जब तक मीडिया आवाज न लगाए या न्यायपालिका निर्देश न दे तो नौकरशाही स्वयं संज्ञान लेकर जनहित के कार्य करती है? फिर 'रामराज' का आदर्श कैसे सार्थक होगा?

शहरों में वृद्धाश्रमों की संख्या निरंतर बढ़ती जा रही है, वृद्ध माता-पिता की उपेक्षा हो रही है तो फिर पिता की एक आज्ञा पर राजसिंहासन त्यागकर चौदह वर्ष वनों में कष्ट भोगने को सहर्ष स्वीकार करने वाले राम के आदर्श का क्या अर्थ?

घर-घर में भाइयों में झगड़े और अदालत में मुकदमे चल रहे हों तो फिर राम-लक्ष्मण या राम-भरत के आदर्श का क्या मतलब? राम तो केवट को मित्र बनाते हैं, शबरी के झूठे बेर खाते हैं, सुग्रीव और जामवंत से मित्रता करते हैं, किंतु हम उन्हीं राम के देश में जातिगत वैमनस्य पालते हैं, ऊँच-नीच का भेदभाव मानते हैं : हम बहुत बड़ा प्रपंच कर रहे हैं। राम तो करुणा का साकार रूप हैं; सहनशीलता, धैर्य, संयम के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। यहाँ उस प्रसंग का उल्लेख उचित होगा, जब अनेक संहारक शस्त्रों से सुसज्जित रावण की विशाल सेना के समक्ष खड़े राम-लक्ष्मण को देख विभीषण व्यथित हो उठते हैं और राम मानवीय मूल्यों, मानवीय गुणों को ही शक्ति का स्रोत बताते हैं। यही रामकथा का सबसे महत्त्वपूर्ण संदेश है। यदि हम मानवीय गुणों से तनिक भी दूर होते हैं तो फिर कितनी ही बड़ी उपलब्धियाँ प्राप्त कर लें, सब व्यर्थ हैं।

रामनवमी के पवित्र अवसर पर प्रभु श्रीराम के आदर्शों को पुनः अपने जीवन में उतारें, अपने आप को, अपने समाज को, अपने देश को राम के संदेश के अनुरूप ढालें, तभी हम प्रभु श्रीराम की सच्ची वंदना के योग्य बन सकेंगे।

साहित्य अकादेमी सम्मान

उन दिनों आकाशवाणी कठुआ (जम्मू-कश्मीर) में कार्यरत था। एक अवसर विशेष पर 'डोगरी' में एक भव्य कवि-सम्मेलन आयोजित करने का विचार बना। केंद्र पर वर्षों से कार्य कर रहे उद्घोषकों आदि ने सलाह दी कि छोटे से शहर कठुआ में इतने बड़े कार्यक्रम के लिए स्थानीय डोगरी कवियों से बात नहीं बनेगी। तय किया गया कि जम्मू से कुछ प्रतिष्ठित डोगरी कवियों को आमंत्रित कर लिया जाए। जम्मू से छह डोगरी कवि बुलाए गए। इन छह कवियों में पाँच को 'साहित्य अकादेमी' सम्मान प्राप्त हो चुका था। छठे कवि युवा कवि से प्रौढ़ कवि की राह के मध्य थे तथा अगले वर्ष अथवा उसके अगले वर्ष 'साहित्य अकादेमी' सम्मान प्राप्त कर लेने के प्रति पूरी तरह आश्वस्त थे। उनका विश्वास पूरी तरह सही निकला और दो वर्ष बाद उन्हें साहित्य अकादेमी सम्मान मिल गया। यहाँ डोगरी कवियों-लेखकों के लेखन पर कोई आक्षेप नहीं है, वरन् एक विषमता की ओर ध्यान आकर्षित करने का प्रयास मात्र है। डोगरी भाषा एक सीमित क्षेत्र में बोली जाती है, इसलिए स्वाभाविक है कि उसमें लिखने वालों की संख्या भी सीमित है। अत: जो भी अच्छा कवि या लेखक होगा, उसे 'साहित्य अकादेमी' सम्मान मिलना भी सुनिश्चित है। नेपाली, बोडो आदि भी बहुत सीमित आबादी, सीमित क्षेत्रों की भाषाएँ हैं तो साहित्य अकादेमी सम्मान प्राप्त करना कठिन या असंभव जैसा कार्य नहीं होता, जैसाकि हिंदी में है।

तुलना करें तो मात्र 'चौदह लाख' बोडो भाषियों के लिए भी एक साहित्य अकादेमी सम्मान तथा 'नौ हजार लाख' हिंदी भाषियों के लिए भी एक ही साहित्य अकादेमी सम्मान।

इसी कारण हिंदी में अमृतलाल नागर और धर्मवीर भारती जैसे साहित्यकार साहित्य अकादेमी सम्मान से वंचित रह जाते हैं। इन दो नामों के अलावा ऐसे कितने ही यशस्वी साहित्यकारों के नाम गिनाए जा सकते हैं, जिन्हें अपने मूल्यवान साहित्यिक योगदान के बावजूद साहित्य अकादेमी सम्मान नहीं मिल पाया। नागार्जुनजी को मैथिली भाषा के लिए सम्मान मिला अन्यथा हिंदी में मिल पाता या नहीं, कहना मुश्किल है। नब्बे करोड़ की हिंदी भाषा में स्वाभाविक है कि सैकड़ों उत्कृष्ट कवि, कहानीकार, नाटककार या अन्य विधाओं के रचनाकार सक्रिय रहते हैं। अब दर्जनों देशों में श्रेष्ठ लेखन कर रहे भारतवासी या भारतवंशी भी इसमें जुड़ गए हैं।

इस भयानक विषमता का एक उपाय तो यही हो सकता है कि हिंदी भाषियों की विराट् संख्या को ध्यान में रखते हुए हिंदी के लिए एक से अधिक सम्मान दिए जाने पर विचार हो; जैसे कि कविता, कहानी, उपन्यास, नाटक, अन्य विधाएँ (जीवनी, संस्मरण, यात्रा-वृत्तांत आदि), यदि बड़ी भाषाओं जैसे तमिल, तेलुगु, बांग्ला आदि के रचनाकारों से आपत्ति का प्रश्न उठता है तो गंभीर विचार-विमर्श से कुछ सूत्र निकाले जा सकते हैं। लेकिन 'कुछ लाख' और 'नौ हजार लाख' की भयानक विषमता तो विचारणीय प्रश्न है ही, इससे कौन इनकार कर सकता है ? इस बार हिंदी में मिलने वाले साहित्य अकादेमी सम्मान की बात करें तो यह अत्यंत सुखद है कि इतने वर्षों के इतिहास में पहली बार कविता के लिए एक कवयित्री को यह सम्मान मिला है। महादेवी वर्माजी का स्मरण हो आना स्वाभाविक है, किंतु उन्हें भी यह सम्मान नहीं मिल सका। एक सुखद बात यह भी है कि इस बार अनामिकाजी को यह सम्मान मिलने पर भरपूर हर्ष व्यक्त किया गया तथा स्वागत किया गया। एक-दो विवादी स्वर उठे किंतु वे भर्त्सना और निंदा के ही पात्र बने।

अमूमन हर सम्मान-पुरस्कार की घोषणा के उपरांत वाद-विवाद का एक लंबा सिलसिला चल निकलता है और यह एक स्वस्थ विमर्श न होकर प्राय: अत्यंत कड़वाहट भरा होता रहा है। विचारधाराओं में विभक्त साहित्यिक संगठनों, गुटों का टकराव ही उनमें प्रमुख रहता रहा है।

याद आता है कि जब कुँवर नारायणजी को प्रतिष्ठित ज्ञानपीठ सम्मान मिला तो एक प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका के यशस्वी संपादक ने संपादकीय में लिखा—"इस बार का ज्ञानपीठ 'किन्हीं' कुँवर नारायणजी को दिया गया है!" क्या यह सचमुच माना जा सकता है कि संपादकजी कुँवर नारायणजी के साहित्यिक योगदान से अपरिचित थे। यों भी आए दिन किसी-न-किसी बयान पर, किसी आलोचना या टिप्पणी पर जोरदार बहस सोशल मीडिया पर छिड़ी ही रहती है। इससे हिंदी साहित्य का क्या भला हो सकता है—सिवाय एक तुच्छ अहंपूर्ति के। होना तो यह चाहिए कि सभी साहित्यिक संगठन एवं रचनाकार मिलकर साहित्यकारों के समक्ष उपस्थित अनेकानेक चुनौतियों के समाधान पर विचार करें कि कैसे साहित्य का प्रकाशन सुगम हो, पुस्तकें देश भर में सरलता से उपलब्ध हों, साहित्य-समाज में अपनी स्वस्थ-सार्थक भूमिका का निर्वाह कर सके।

अनामिकाजी के अतिरिक्त साहित्य अकादेमी बाल साहित्यकार सम्मान बालस्वरूप राहीजी को मिला है, यह भी अत्यंत हर्ष का विषय है। 'साहित्य अमृत परिवार' की ओर से अनामिकाजी एवं बालस्वरूप राहीजी तथा सभी सम्मानित रचनाकारों को अनेकानेक बधाइयाँ।

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

मेरे राम का मुकुट भीग रहा है

• पं. विद्यानिवास मिश्र

महीनों से मन बेहद-बेहद उदास है। उदासी की कोई खास वजह नहीं, कुछ तबीयत ढीली, कुछ आसपास के तनाव और कुछ उनसे टूटने का डर, खुले आकाश के नीचे भी खुलकर साँस लेने की जगह की कमी, जिस काम में लगकर मुक्ति पाना चाहता हूँ, उस काम में हजार बाधाएँ; कुल ले-देकर उदासी के लिए इतनी बड़ी चीज नहीं बनती। फिर भी रात-रात नींद नहीं आती। दिन ऐसे बीतते हैं, जैसे भूतों के सपनों की एक रील पर दूसरी रील चढ़ा दी गई हो और भूतों की आकृतियाँ और डरावनी हो गई हों। इसलिए कभी-कभी तो बड़ी-से-बड़ी परेशानी करने वाली बात हो जाती है और कुछ भी परेशानी नहीं होती, उलटे ऐसा लगता है, जो हुआ, एक सहज क्रम में हुआ; न होना ही कुछ अटपटा होता और कभी-कभी बहुत मामूली सी बात भी भयंकर चिंता का कारण बन जाती है।

अभी दो-तीन रात पहले मेरे एक साथी संगीत का कार्यक्रम सुनने के लिए नौ बजे रात गए, साथ में जाने के लिए मेरे एक चिरंजीव ने और मेरी एक मेहमान, महानगरीय वातावरण में पली कन्या ने अनुमति माँगी। शहरों की, आजकल की असुरक्षित स्थिति का ध्यान करके इन दोनों को जाने तो नहीं देना चाहता था, पर लड़कों का मन भी तो रखना होता है, कह दिया, एक-डेढ़ घंटे सुनकर चले आना।

रात के बारह बजे। लोग नहीं लौटे। गृहिणी बहुत उद्विग्न हुईं, झल्लाईं; साथ में गए मित्र पर नाराज होने के लिए संकल्प बोलने लगीं। इतने में जोर की बारिश आ गई। छत से बिस्तर समेटकर कमरे में आया। गृहिणी को समझाया, बारिश थमेगी, आ जाएँगे, संगीत में मन लग जाता है, तो उठने की तबीयत नहीं होती, तुम सोओ, ऐसे बच्चे नहीं हैं। पत्नी किसी तरह शांत होकर सो गईं, पर मैं अकुला उठा। बारिश निकल गई, ये लोग नहीं आए। बरामदे में कुरसी लगाकर राह जोहने लगा। दूर कोई भी आहट होती तो, उदग्र होकर फाटक की ओर देखने लगता। रह-रहकर बिजली चमक जाती थी और सड़क दिप जाती थी। पर सामने की सड़क पर कोई रिक्शा नहीं, कोई चिरई का पूत नहीं। एकाएक कई दिनों से मन में उमड़ती-घुमड़ती पंक्तियाँ गूँज गईं—

मोरे राम के भीजै मुकुटवा
लछिमन के पटुकवा
मोरी सीता के भीजै सेनुरवा
त राम घर लौटहिं।

(मेरे राम का मुकुट भीग रहा होगा, मेरे लखन का पटुका (दुपट्टा) भीग रहा होगा, मेरी सीता की माँग का सिंदूर भीग रहा होगा, मेरे राम घर लौट आते।)

बचपन में दादी-नानी जाँते पर वह गीत गातीं, मेरे घर से बाहर जाने पर, विदेश में रहने पर वे यही गीत विह्वल होकर गातीं और लौटने पर कहतीं—'मेरे लाल को कैसा वनवास मिला था।' जब मुझे दादी-नानी की इस आकुलता पर हँसी भी आती, गीत का स्वर बड़ा मीठा लगता। हाँ, तब उसका दर्द नहीं छूता। पर इस प्रतीक्षा में एकाएक उसका दर्द उस ढलती रात में उभर आया और सोचने लगा, आने वाली पीढ़ी पिछली पीढ़ी की ममता की पीड़ा नहीं समझ पाती और पिछली पीढ़ी अपनी संतान के संभावित संकट की कल्पना मात्र से उद्विग्न हो जाती है। मन में यह प्रतीति ही नहीं होती कि अब संतान समर्थ है, बड़ा-से-बड़ा संकट झेल लेगी। बार-बार मन को समझाने की कोशिश करता, लड़की दिल्ली विश्वविद्यालय के एक कॉलेज में पढ़ाती है, लड़का संकट-बोध की कविता लिखता है, पर लड़की का खयाल आते ही दुश्चिंता होती, गली में जाने कैसे तत्त्व रहते हैं! लौटते समय कहीं कुछ हो न गया हो और अपने भीतर अनायास अपराधी होने का भाव जाग जाता, मुझे रोकना चाहिए था या कोई व्यवस्था करनी चाहिए थी, पराई लड़की (और लड़की तो हर एक पराई होती है, धोबी की मुटरी की तरह घाट पर खुले आकाश में

कितने दिन फहराएगी, अंत में उसे गृहिणी बनने जाना ही है) घर आई, कहीं कुछ हो न जाए!

मन फिर घूम गया कौसल्या की ओर, लाखों-करोड़ों कौसल्याओं की ओर, और लाखों-करोड़ों कौसल्याओं के द्वारा मुखरित एक अनाम-अरूप कौसल्या की ओर, इन सबके राम वन में निर्वासित हैं, पर क्या बात है कि मुकुट अभी भी उनके माथे पर बँधा है और उसी के भीगने की इतनी चिंता है? क्या बात है कि आज भी काशी की रामलीला आरंभ होने के पूर्व एक निश्चित मुहूर्त्त में मुकुट की ही पूजा सबसे पहले की जाती है? क्या बात है कि तुलसीदास ने 'कानन' को 'सत अवध समाना' कहा और चित्रकूट में ही पहुँचने पर उन्हें 'कलि की कुटिल कुचाल' दीख पड़ी? क्या बात है कि आज भी वनवासी धनुर्धर राम ही लोकमानस के राजा राम बने हुए हैं? कहीं-न-कहीं इन सबके बीच एक संगति होनी चाहिए।

अभिषेक की बात चली, मन में अभिषेक हो गया और मन में राम के साथ राम का मुकुट प्रतिष्ठित हो गया। मन में प्रतिष्ठित हुआ, इसलिए राम ने राजकीय वेश उतारा, राजकीय रथ से उतरे, राजकीय भोग का परिहार किया, पर मुकुट तो लोगों के मन में था, कौसल्या के मातृ-स्नेह में था, वह कैसे उतरता, वह मस्तक पर विराजमान रहा और राम भीगें तो भीगें, मुकुट न भीगने पाए, इसकी चिंता बनी रही। राजा राम के साथ उनके अंगरक्षक लक्ष्मण का कमर-बंद दुपट्टा भी (प्रहरी की जागरूकता का उपलक्षण) न भीगने पाए और अखंड सौभाग्यवती सीता की माँग का सिंदूर न भीगने पाए, सीता भले ही भीग जाएँ। राम तो वन से लौट आए, सीता को लक्ष्मण फिर निर्वासित कर आए, पर लोकमानस में राम की वनयात्रा अभी नहीं रुकी। मुकुट, दुपट्टे और सिंदूर के भीगने की आशंका अभी भी साल रही है। कितनी अयोध्याएँ बसीं, उजड़ीं, पर निर्वासित राम की असली राजधानी, जंगल का रास्ता अपने काँटों-कुशों, कंकड़ों-पत्थरों की वैसी ही ताजा चुभन लिए हुए बरकरार है, क्योंकि जिनका आसरा साधारण गँवार आदमी भी लगा सकता है, वे राम तो सदा निर्वासित ही रहेंगे और उनके राजपाट को सँभालने वाले भरत अयोध्या के समीप रहते हुए भी उनसे भी अधिक निर्वासित रहेंगे, निर्वासित ही नहीं, बल्कि एक कालकोठरी में बंद जिलावतनी की तरह दिन बिताएँगे।

सोचते-सोचते लगा कि इस देश की ही नहीं, पूरे विश्व की एक कौसल्या है; जो हर बारिश में बिसूर रही है—"मोरे राम के भीजै मुकुटवा" (मेरे राम का मुकुट भीग रहा होगा)। मेरी संतान, ऐश्वर्य की अधिकारिणी संतान वन में घूम रही है, उसका मुकुट, उसका ऐश्वर्य भीग रहा है, मेरे राम कब घर लौटेंगे; मेरे राम के सेवक का दुपट्टा भीग रहा है, पहरुए का कमरबंद भीग रहा है, उसका जागरण भीग रहा है, मेरे राम की सहचारिणी सीता का सिंदूर भीग रहा है, उसका अखंड सौभाग्य भीग रहा है, मैं कैसे धीरज धरूँ? मनुष्य की इस सनातन नियति से एकदम आतंकित हो उठा ऐश्वर्य और निर्वासन पहले से बदा है। जिन लोगों के बीच रहता हूँ, वे सभी मंगल नाना के नाती हैं, वे 'मुद मंगल' में ही रहना चाहते हैं, मेरे जैसे आदमी को वे निराशावादी समझकर बिरादरी से बाहर ही रखते हैं, डर लगता रहता है कि कहीं उड़कर उन्हें भी दुःख न लग जाए, पर मैं अशेष मंगलाकांक्षाओं के पीछे से झाँकती हुई दुर्निवार शंकाकुल आँखों से झाँकता हूँ, तो मंगल का सारा उत्साहफीका पड़ जाता है और बंदनवार, बंदनवार न दिखकर बटोरी हुई रस्सी की शक्ल में कुंडली मारे नागिन दिखती है, मंगल-घट औंधाई हुई अधफूटी गगरी दिखता है, उत्सव की रोशनी का तामझाम धुएँ की गाँठों का अंबार दिखता है और मंगल-वाद्य डेरा उखाड़ने वाले अंतिम कारबरदार की उसाँस में बजकर एकबारगी बंद हो जाता है।

लागति अवध भयावह भारी,
मानहुँ कालराति अँधियारी।
घोर जंतु सम पुर नरनारी,
डरपहिं एकहि एक निहारी।
घर मसान परिजन जनु भूता,
सुत हित मीत मनहुँ जमदूता।
बागन्ह बिटप बेलि कुम्हिलाहीं,
सरित सरोवर देखि न जाहीं।

कैसे मंगलमय प्रभात की कल्पना थी और कैसी अँधेरी कालरात्रि आ गई है? एक-दूसरे को देखने से डर लगता है। घर मसान हो गया है, अपने ही लोग भूत-प्रेत बन गए हैं, पेड़ सूख गए हैं, लताएँ कुम्हला गई हैं। नदियों और सरोवरों को देखना भी दुस्सह हो गया है। केवल इसलिए कि जिसका ऐश्वर्य से अभिषेक हो रहा था, वह निर्वासित हो गया। उत्कर्ष की ओर उन्मुख समष्टि का चैतन्य अपने ही घर से बाहर कर दिया गया, उत्कर्ष की, मनुष्य की ऊर्ध्वोन्मुख चेतना की यही कीमत सनातन काल से अदा की जाती रही है। इसीलिए जब कीमत अदा कर ही दी गई, तो उत्कर्ष कम-से-कम सुरक्षित रहे, यह चिंता स्वाभाविक हो जाती है। राम भीगें तो भीगें, राम के उत्कर्ष की कल्पना न भीगे, वह हर बारिश में, हर दुर्दिन में सुरक्षित रहे। नर के रूप में लीला करने वाले नारायण निर्वासन की व्यवस्था झेलें, पर नर-रूप में उनकी ईश्वरता का बोध दमकता रहे, पानी की बूँदों की झालर में उसकी दीप्ति छिपने न पाए। उस नारायण की सुख-सेज बने अनंत के अवतार लक्ष्मण भले ही भीगते रहें, उनका दुपट्टा, उनका अहर्निशि जागरण न भीजे, शेषी नारायण के ऐश्वर्य का गौरव अनंत शेष के जागर-संकल्प से ही सुरक्षित हो सकेगा और इन दोनों का गौरव जगज्जननी आद्याशक्ति के अखंड सौभाग्य, सीमंत सिंदूर से रक्षित हो सकेगा, उस शक्ति का एकनिष्ठ प्रेम पाकर राम का मुकुट है, क्योंकि राम का निर्वासन वस्तुतः सीता का दुहरा निर्वासन है। राम तो लौटकर राजा होते हैं, पर रानी होते ही सीता राजा राम द्वारा वन में निर्वासित कर दी जाती हैं। राम के साथ लक्ष्मण हैं, सीता हैं, सीता वन्य पशुओं से घिरी हुई विजन में सोचती हैं—प्रसव की पीड़ा हो रही है, कौन इस वेला में सहारा देगा, कौन प्रसव के समय प्रकाश दिखलाएगा, कौन मुझे सँभालेगा, कौन जनम के गीत गाएगा?

कोई गीत नहीं गाता। सीता जंगल की सूखी लकड़ी बीनती हैं, जलाकर अँजोर करती हैं और जुड़वाँ बच्चों का मुँह निहारती हैं। दूध की तरह अपमान की ज्वाला में चित्त कूद पड़ने के लिए उफनता है और बच्चों की प्यारी और मासूम सूरत देखते ही उस पर पानी के छींटे पड़ जाते हैं, उफान दब जाता है। पर इस निर्वासन में भी सीता का सौभाग्य अखंडित है, वह राम के मुकुट को तब भी प्रमाणित करता है, मुकुटधारी राम को निर्वासन से भी बड़ी व्यथा देता है और एक बार और अयोध्या जंगल बन जाती है, स्नेह की रसधार रेत बन जाती है, सब कुछ उलट-पुलट जाता है, भवभूति के शब्दों में पहचान की बस एक निशानी बच रहती है, दूर ऊँचे खड़े तटस्थ पहाड़ राजमुकुट में जड़े हीरों की चमक के सैकड़ों शिखर, एकदम कठोर, तीखे और निर्मम—

पुरा यत्र स्रोतः पुलिनमधुना तत्र सरितां
विपर्यासं यातो घनविरलभावः क्षितिरुहाम्।
बहोः कालाद् दृष्टं ह्यपरमिव मन्ये वनमिदं
निवेशः शैलानां तदिदमिति बुद्धिं द्रढयति।

राम का मुकुट इतना भारी हो उठता है कि राम उस बोझ से कराह उठते हैं और इस वेदना के चीत्कार में सीता के माथे का सिंदूर और दमक उठता है, सीता का वर्चस्व और प्रखर हो उठता है।

कुरसी पर पड़े-पड़े यह सब सोचते-सोचते चार बजने को आए, इतने में दरवाजे पर हलकी सी दस्तक पड़ी, चिरंजीव निचली मंजिल से ऊपर नहीं चढ़े, सहमी हुई कृष्णा (मेरी मेहमान लड़की) बोली—"दरवाजा खोलिए।" आँखों में इतनी कातरता कि कुछ कहते नहीं बना, सिर्फ इतना कहा कि तुम लोगों को इसका क्या अंदाज होगा कि हम कितने परेशान रहे हैं। भोजन-दूध धरा रह गया, किसी ने भी छुआ नहीं, मुँह ढाँपकर सोने का बहाना शुरू हुआ, मैं भी स्वस्ति की साँस लेकर बिस्तर पर पड़ा, पर अर्धचेतन अवस्था में फिर जहाँ खोया हुआ था, वहीं लौट गया। अपने लड़के घर लौट आए, बारिश से नहीं संगीत से भीगकर, मेरी दादी-नानी के गीतों के राम, लखन और सीता अभी भी वन-वन भीग रहे हैं। तेज बारिश में पेड़ की छाया और दुःखद हो जाती है, पेड़ की हर पत्ती से टप-टप बूँदें पड़ने लगती हैं, तने पर टिकें, तो उसकी नस-नस से आप्लावित होकर बारिश पीठ गलाने लगती है। जाने कब से मेरे राम भीग रहे हैं और बादल हैं कि मूसलधार ढरकाए चले जा रहे हैं, इतने में मन में एक चोर धीरे से फुसफुसाता है, राम तुम्हारे कब से हुए, तुम, जिसकी बुनावट पहचान में नहीं आती, जिसके व्यक्तित्व के ताने-बाने तार-तार होकर अलग हो गए हैं, तुम्हारे कहे जाने वाले कोई हो भी सकते हैं कि वह तुम कह रहे हो, मेरे राम! और चोर की बात सच लगती है, मन कितना बँटा हुआ है, मनचाही और अनचाही दोनों तरह की हजार चीजों में। दूसरे कुछ पतियाएँ भी, पर अपने ही भीतर प्रतीति नहीं होती कि मैं किसी का हूँ या कोई मेरा है। पर दूसरी ओर यह भी सोचता हूँ कि क्या बार-बार विचित्र-से अनमनेपन में अकारण चिंता किसी के लिए होती है, वह चिंता क्या पराए के लिए होती है, वह क्या कुछ भी अपना नहीं है? फिर इस अनमनेपन में ही क्या राम अपनाने के लिए हाथ नहीं बढ़ाते आए हैं, क्या न-कुछ होना और न कुछ बनाना ही अपनाने की उनकी बढ़ी हुई शर्त नहीं है?

तार टूट जाता है, मेरे राम का मुकुट भीग रहा है, यह भीतर से कहाँ पाऊँ? अपनी उदासी से ऐसा चिपकाव, अपने सँकरे से दर्द से ऐसा रिश्ता, राम को अपना कहने के लिए केवल उनके लिए भरा हुआ हृदय कहाँ पाऊँ? मैं शब्दों के घने जंगलों में हिरा गया हूँ। जानता हूँ, इन्हीं जंगलों के आसपास किसी टेकड़ी पर राम की पर्णकुटी है, पर इन उलझने वाले शब्दों के अलावा मेरे पास कोई राह नहीं। शायद सामने उपस्थित अपने ही मनोराज्य के युवराज, अपने बचे-खुचे स्नेह के पात्र, अपने भविष्यत् के संकट की चिंता में राम के निर्वासन का जो ध्यान आ जाता है, उनसे भी अधिक बिजली से जगमगाते एक शहर में एक पढ़ी-लिखी चंद दिनों की मेहमान लड़की के एक रात कुछ देर से लौटने पर अकारण चिंता हो जाती है, उसमें सीता का खयाल आ जाता है, वह राम के मुकुट या सीता के सिंदूर के भीगने की आशंका से जोड़े-न-जोड़े, आज की दरिद्र अर्थहीन, उदासी को कुछ ऐसा अर्थ नहीं दे देता, जिससे जिंदगी ऊब से कुछ उबर सके?

और इतने में पूरब से हलकी उजास आती है और शहर के इस शोर भरे बियाबान में चक्की के स्वर के साथ चढ़ती-उतरती जँतसार गीति हलकी-सी सिहरन पैदा कर जाती है। 'मोरे राम के भीजै मुकुटवा' और अमचूर की तरह विश्वविद्यालयीय जीवन की नीरसता में सूखा मन कुछ जरूर ऊपरी सतह पर ही सही भीगता नहीं, तो कुछ नम तो जरूर ही हो जाता है, और महीनों की उमड़ी-घुमड़ी उदासी बरसने-बरसने को आ जाती है। बरस न पाए, यह अलग बात है (कुछ भीतर भाप हो, तब न बरसे), पर बरसने का यह भाव जिस ओर से आ रहा है, उधर राह होनी चाहिए। इतनी असंख्य कौसल्याओं के कंठ में बसी हुई जो एक अरूप ध्वनिमयी कौसल्या है, अपनी सृष्टि के संकट में उसके सतत उत्कर्ष के लिए आकुल, उस कौसल्या की ओर, उस मानवीय संवेदना की ओर ही कहीं राह है, घास के नीचे दबी हुई। पर उस घास की महिमा अपरंपार है, उसे तो आज वन्य पशुओं का राजकीय संरक्षित क्षेत्र बनाया जा रहा है, नीचे ढँकी हुई राह तो सैलानियों के घूमने के लिए, वन्य पशुओं के प्रदर्शन के लिए, फोटो खींचने वालों की चमकती छवि यात्राओं के लिए बहुत ही रमणीक स्थल बनाई जा रही है। उस राह पर तुलसी और उनके मानस के नाम पर बड़े-बड़े तमाशे होंगे, फुलझड़ियाँ दगेंगी, सैर-सपाटे होंगे, पर वह राह ढँकी ही रह जाएगी, केवल चक्की का स्वर, राह तलाशता रहेगा—किस ओर राम मुड़े होंगे, बारिश से बचने के लिए? किस ओर? किस ओर? बता दो सखी!

बना भीम सरहद का रक्षक

• शिवनारायण जौहरी विमल

सरहद के सिपाही

निशा-सुंदरी रजनी बाला
तिमिरांगन की अद्‌भुत हाला

हीरक हारों से भरा थाल ले
कहाँ चली जाती हर रात
और बेचकर हार रुपहले
सुबह लौटती खाली हाथ

पूरा थाल खरीदा मैंने
चलो आज तुम मेरे साथ
उस सरहद पर जहाँ पराक्रम
दिखा रहा है अपने हाथ

बना भीम सरहद का रक्षक
रिपु की गरदन तोड़ रहा है,
पहना दो सब हार उसी को
भारत जय-जय बोल रहा है।

कोरोना

विश्व के इतिहास में
यह राक्षस पहिला नहीं
भस्मासुर जिसके सिर
हाथ रखता भस्म हो जाता
हाहाकार था सारे जगत् में
अपने सर पर हाथ रख कर
मर गया एक दिन
कोरोना भी खुद ही मर
जाएगा कल सबेरे तक।

जब-जब महामारी आई
अपने साथ अपनी मौत
का हथियार भी लाई
बैठकर छिन डाल पर
उड़ जाती कोई चिड़िया।

यह सच है कि आज
लाशों से पटा कुरुक्षेत्र
समूचे विश्व में दहशत
घर में बंद हैं बच्चे
बाहर कर्फ्यू लगा है
आदमी की साँस से
आदमी डरने लगा है।

किसी की जेब में पैसा नहीं
दुकानें क्या करें ग्राहक नहीं
सन्नाटा पसरा है बाजार में
बंद यातायात के साधन।

माना इस बार संक्रमण की
गति ने बिजली को हराया
महामारी से पटे हैं भू-खंड
भय से भूत भगाए नहीं जाते
संकल्प साहस सावधानी से।

करोना वायरस भी पराजित
हो ही जाएगा एक दिन।

बुलंद हैं होंसले इस आदमी के
वायरस की जिंदगी कितनी
मेघ का टुकड़ा छोटा या बड़ा
सूरज को ढक नहीं सकता।

हे कवि हे महान्

शब्दों में दावानल भर दे
कालकूट सारा जल जाए

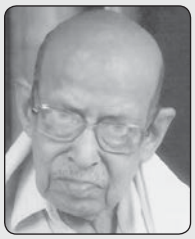

सुप्रसिद्ध रचनाकार। 'रुपा' (खंड काव्य), अंतर्मन, जीजीविषा, त्रिपथगा, अंतरिक्ष की ओर से, प्रपात (काव्य-संग्रह), कानून से संबंधित पुस्तकें व लेख प्रकाशित। बुंदेलखंडीय सम्मान कलमवीर, सृजनवीर सम्मान सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

नागराज फन नाचे कन्हैया
वृंदावन निर्विष हो जाए
ऐसी झड़ी लगे सावन की
सारा मैल बहा ले जाए
ऐसा दीप जला दे मन में
सूरज से बातें कर पाए
जटा हटा निकले सुरसरिता
नीरक्षीर सागर हो जाए
डुबकी एक लगा यह दुनिया
नई नवेली फिर हो जाए।

दूसरी दुनिया

हरे-भरे पेड़ पौधों की
हँसती-हँसाती दुनिया
ओस की बूँदों सी जहाँ
टपकती रहती हैं खुशियाँ
गुलाबी अधरों पर खेलती
रहती है रेशमी मुसकान।
पवन के संगीत पर
झूमते हैं सब बड़े छोटे।
यह दुनिया शांतिनिकेतन है
गीतांजलि के बोल गूँजते
रहते यहाँ वातारण में
यहाँ भी संघर्ष करना
पड़ता है जीने के लिए
बीज को प्रस्फुटन के लिए
हवा-पानी और मिट्‌टी चाहिए
होड़ मची रहती है सूरज की
रश्मियों में बहती संजीवनी
ऊर्जा को पकड़ने के लिए
पर टाँग घसीटन नहीं होता
स्वावलंबी है अपना भोजन
बना लेते हैं अपने आप
जड़ों से खींच लेते हैं पानी
यहा दूसरों की थाली पर
नजर गढ़ाई नहीं जाती।
न कोलाहल न छीना-झपटी
न मारपीट न महाभारत
न कृष्ण को अवतरित
होने की जरूरत।

२४/डी के देवस्थली फेज-२
दाना पानी रेस्टोरेंट के पास
बाबडिया कला, भोपाल (म.प्र.)

मन चातक हुआ

• तुलसी देवी तिवारी

"अरे, ऐसे माँजो नऽ यार!'' उसने मूठा भर पैर में पहले मिट्टी, फिर घड़ी डिटर्जेंट पाउडर लगाया, फिर पूरी ताकत से लोहे की बड़ी वाली कड़ाही झाँय-झाँय करके माँजने लगा। भुजाओं की सारी शक्ति वह इस काम में झोंक देना चाहता था। उसने अपने दाँत भींचकर अपनी भावनाओं को वश में करने की कोशिश की। उसका मुँह बिगड़ा और रक्त वर्ण नेत्रों से अश्रुधार बह चली, जो नाक से निकलने वाले पानी के साथ मिलकर काली तैलीय कड़ाही की कालिख में मिल गई।

"लाओ भइया, हम करते हैं, जब माँज लें तब देखना!'' काले रंग का भील युवक जीवन उसे कड़ाही माँजते देखकर शर्मिंदा हो गया था।

उसने अपने आस-पास निगाहें दौड़ाईं, चारों ओर जूठे पत्तल-दोने, डिस्पॉजल गिलास आदि पड़े हुए थे। टेंट वालों के बरतन साफ करवा रहा था वह। कल जहाँ शोर-शराबा था, बाजे-गाजे थे, आज वहाँ सन्नाटा पसरा हुआ था, जिसे बीच-बीच में वे लोग तोड़ते थे, जिन्हें अपना सामान लेना था। कई रातों से जगे लोग जहाँ-तहाँ कोंटा पकड़कर सो रहे थे। कहते भी हैं, "क्या तुम्हारे मड़वा का बिहान है, जो ऐसे सब सो रहे हैं?'' नाम लेकर पुकारने पर भी कोई उठने का नाम नहीं ले रहा था। जिसे भूख लग रही है, वह स्वयं लेकर खा-पी ले रहा है, अभी-अभी दीना आया था अपना चौका-बेलन लेने, कल पूड़ी बेलने के लिए मोहल्ले वालों के चौके-बेलन आए थे आज लौटाने की गरज किसे है? एक वक्त का न्योता था तो क्या आज भी भूख नहीं लगेगी? वह चार बातें सुनाकर गया था। वह तो सुनाकर ही गया है, टेंट वाले, लाइट वाले, कैटरिंग वाले तो आज का भी बिल बना लेंगे, सालों के पास है कहाँ फूटी कौड़ी भी जो देंगे? इन्हें तो कोई किराए पर भी कुछ न दे। वह तो गजानन की अगुआई है, जो सारे सामान समय से पहले पहुँचा गए। जानते हैं, जो बनेगा उससे दो पैसा अधिक ही मिल जाएगा। वक्त-बेवक्त का सहारा बना रहेगा।

इन लोगों के विश्वास को बनाए रखने के लिए ही तो हिम्मत जुटाकर मोर्चे पर डटा था वह। सारा सामान एकजाई करा के उसने रास्ते की ओर देखा, अब आ जाए, जिसे आना हो। उसी समय टेंट वाले का

सुपरिचित कथाकार। अब तक आठ कहानी-संग्रह, दो यात्रा-संस्मरण, एक वृहद उपन्यास, दस बालोपयोगी पुस्तकें, 'पुकार जगन्नाथ की' (यात्रा-संस्मरण) प्रकाशित। छत्तीसगढ़ी राजभाषा सम्मान, न्यू कबीर सम्मान, राज्यपाल शिक्षक सम्मान, छत्तीसगढ़ रत्न, राष्ट्रपति पुरस्कार एवं साहित्य मंडल, नाथद्वारा से मानद उपाधि।

ट्रैक्टर आ गया। वे जल्दी-जल्दी अपना सामान गिन-गिनकर ट्रॉली में रखने लगे। किसी को आवाज देना व्यर्थ था, सो उसने उसका बिल पेमेंट कर दिया। पाँच बज गए उसे मैदान साफ करते। उसने उदास नजरों से उस रास्ते को देखा, जिससे आज सुबह-सुबह शुभि गेंदे के फूलों से सजी कार में बैठकर मनोज के साथ चली गई थी। वैसे ही उसकी खूबसूरती का कोई जवाब नहीं है, उस पर दुलहन का रूप! सोने को मात देते रंग पर लाल कामदार साड़ी, जिसे उसने बनारस के कारीगर से ऑर्डर देकर बनावाया था। हीरे जड़ी बड़ी सी नथ, जिसे उसने इसी कजरी के समय उसके गाने पर मुग्ध होकर बनवा दिया था, नाभि के ऊपर झूलता चार लड़ी वाला हार, जिसे उसने उसके अठारहवें जन्मदिन पर तोहफे में दिया था, उसे एक अनजानी सी आशा ने अपनी गिरफ्त में ले लिया था, "अब तो शुभि अपनी इच्छानुसार अपना जीवनसाथी चुन सकती है।''

उसकी सोच कहीं से गलत नहीं थी, शुभि ने अपनी मर्जी से अपना जीवन साथी चुना, किंतु उसका चुनाव गजानन को पूरी तरह चाट गया। वह मोटा सा कंगन जो उसकी कलाइयों के बीच अपनी द्युति बिखेर रहा था, उसके बी.ए. पास होने की खुशी में उसने अपने हाथों से पहनाया था; उसे गर्व हुआ था अपनी किस्मत पर, भले ही उसके भाग्य में विद्या नहीं लिखी थी, किंतु उसके जीवन में कोई तो है, जो बी.ए. पास है। जिस सामग्री से ब्यूटिशियन ने उसे सजाया था, उस दस हजार के मैकअप बक्स को उसने ही तो खरीदकर दिया था। उसका सजा-सजाया रूप दुनिया की सारी सुंदरियों से उसे पृथक् करता था। मनोज के गले में पड़ी

मोटी सी चैन उसने उसे पहली बार अपने घर आने की खुशी में दी थी, जमाने से स्त्री के संसर्ग के लिए तरसते उसके कमरे में जैसे बहार आ गई हो। उसकी भाभियाँ दौड़-दौड़कर शुभि की खातिरदारी कर रही थीं। उसके बेटे-बेटी उसकी बगल में घुसे जा रहे थे। उसे लगा था, जैसे वह हमेशा के लिए उसके घर आ गई है, उसने अपने गले से उतारकर चैन उसके गले में डाल दी थी।

"कहाँ जाने वाला है सोना? एक दिन अपना सबकुछ लेकर शुभि उसी के घर तो आने वाली है!'' उसके मन के इतने अंदर से सोचा गया कि उसका सुखद आभास उसे भी बहुत हलका सा हो पाया, जैसे गरमी से व्याकुल दोपहरी में कहीं से ठंडी हवा का झोंका स्पर्श करता हुआ आगे बढ़ जाए। जिस लहँगे-चोली को पहनकर उसने मनोज के गले में जयमाला डाली थी, उसे तीस हजार में उसी ने दिलवाया था। सुनहरी कामदार चप्पलें उसने कानपुर से मँगवाई थीं, महँगे मैकअप को धोने वाली आँसू की धार उसी के लिए थी, वह जानता है। बस वह जो शुभि की माँग में दमक रहा है पीला सिंदूर! वही उसका नहीं था।

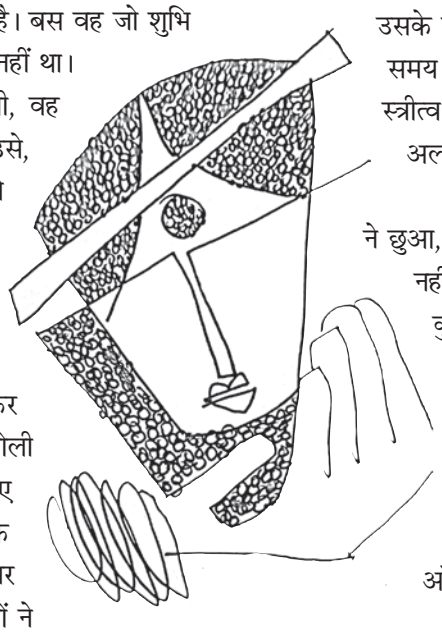

उसकी आहों को वह महसूस कर रही होगी, वह जानता है। पास आने का मौका तो बहुत मिला उसे, लेकिन उसे लगता था, जैसे छू लेने से वह मैली हो जाएगी। अलंकारों से अनजान होना उसे तब बहुत खलता था, जब वह उसकी उपयुक्त प्रशंसा न कर पाता था। जब बहुत प्यार आता, वह कोई भारी-भरकम उपहार देकर उसे प्रसन्न कर देता था। उसे उसका पहला स्पर्श आज भी याद है, वह घायल होकर उसके घर के एक कोने में पड़ा था। उसकी बाँह में गोली लगी थी। एक दिन पहले ही विधान सभा के लिए वोट पड़े थे। अपने पसंदीदा प्रत्याशी को जिताने के लिए अपने कुछ साथियों के साथ मिलकर बूथ कैप्चर कर लिया था उसने। सारे बैलेट पेपर पर उन लोगों ने मोहर लगा दी। मतदाताओं को बीच में ही रोक दिया गया था। पोलिंग पार्टी मुँह बाएँ देख रही थी। व्यवस्था के लिए एक सिपाही था, जिसके हाथ में एक डंडा था, क्या कर लेता इन लोगों का? (उस समय आज की तरह सुरक्षा बल तैनात नहीं किया जाता था।)

एक गड़बड़ हो गई, विरोधी पार्टी वाले प्रत्याशी का भाई मारा गया। जैसे ही कांस्टेबल का मोबाइल खड़का, पलक झपकते ही पुलिस ने पूरा इलाका घेर लिया। शुभि के बाप नारायण ने गोबर ढोने वाले ठेले में लादकर रात के अँधेरे का लाभ उठा उठाते हुए उसे अपने दोस्त के घर में छिपा दिया। उसकी गोली निकालकर मरहम-पट्टी की। पूरे गाँव में पुलिस की घेराबंदी हो गई। हर घर की तलाशी ली जाने लगी। नारायण ने उस घर के दरवाजे पर आग जला दी और बैठकर तापने लगा। जैसे ही पुलिस वाले तलाशी लेने आए, तीन स्टार वाले के पैरों में गिर पड़ा, "हुजूर, मेरी बहू के बच्चा हुआ है, अंदर कैसे जाएँगे? परदे वाली मेरी बहू हुजूर, दया करें! जैसी मेरी इज्जत वैसी ही आपकी इज्जत!" वह रोने लगा। तभी अंदर से छोटे बच्चे के रोने की आवाज आई, जिसे सुनकर पुलिस पार्टी आगे बढ़ गई। अब यह तो संयोग था कि सचमुच उस घर में नव प्रसूता थी, जिसकी जानकारी नारायण को भी नहीं थी।

बाकी सारे आरोपी पकड़े गए थे। उसकी खोज जारी थी। माघ की ठिठुरती रात में नारायण उसी ठेले में सुलाकर उसे अपने घर अमलडीहा ले आया था। वहाँ वह ज्यादा सुरक्षित था। उसी के संकेत पर नारायण ने उसके घर वालों को समाचार पहुँचा दिया था, ताकि वे अग्रिम जमानत करवा सकें। उसे कई दिन रहना पड़ गया था इस घर के सबसे पिछले कमरे में। वहाँ पहुँचने के दूसरे ही दिन सुबह-सुबह आई थी वह उसके पास, अपने नन्हे-नन्हे कोमल हाथों से उसके माथे का स्पर्श करते हुए मीठे स्वर में पूछा था उसने, "चाचा! आपको बहुत दर्द है?'' उसने आँखें खोलकर देखा था, बेसन की गुड़िया सी वह कजरारे नैनों वाली लड़की उसके सामने खड़ी थी। लगभग ग्यारह वर्ष की होगी उस समय शुभि। एक दम हलका सा बोध होने लगा था उसके स्त्रीत्व का। शायद अभी सोकर ही उठी थी, उसकी काली अलकें उसके गुलाबी गालों पर झूम रही थीं।

"पहले तो बहुत दर्द था, जब से शुभि बिटिया ने छुआ, दर्द एकदम से गायब हो गया।'' उसने कुछ झूठ नहीं कहा था, उसके स्पर्श में अवश्य कोई जादू था। कुछ दिन में वह अच्छा होकर अपने घर चला गया। उसके भाइयों ने उसकी अग्रिम जमानत करा ली थी। लेकिन यह घर न छूट सका। परंतु हाँ, आज छूट गया, शुभि चली गई इस घर से। अब क्या करने आएगा यहाँ? उसने एक बार निगाहें उठाकर उस दरवाजे को देखा और डबडबाई आँखों से आँसुओं की धार बह चली।

"हाय मेरी माँ! अब कल से मैं क्या करूँगा? कैसे कटेगा मेरा दिन?'' उसने लंबी आह भरी। सामान बटोरते लोग अपने हाथ रोककर उसे देखने लगे थे। वह बड़ी बेदर्दी से अपनी आँखें मल रहा था। जैसे गीले कपड़े निचोड़ रहा हो। वैसे ही रुमाल से उसने अपनी आँखें सुखाईं, जेब से बोरोप्लस का छोटा पैक निकालकर चेहरे पर लगाया, परंतु अपनी आँखों की सुर्खी नहीं ढँक सका।

"जिस लड़की की कल शादी हुई न ये उसे बहुत मानते थे। शादी का सारा खर्च इन्होंने ही वहन किया है, देख रहे हो न? माँ-बाप से भी ज्यादा रो रहे हैं।'' काम करते लोग आपस में बातें कर रहे थे।

वह बिना किसी को बुलाए सबका हिसाब करता जा रहा था। "ले जा बेदर्दी पचीस-पचास हजार और ले जा! मेरे लिए तो अब दौलत का भी कोई अर्थ न रह गया। तेरे लिए ही तो इतनी मेहनत की, रात को रात और दिन को दिन न समझा। सोया तो तेरी नींद जागा तो तेरी याद लिये। रात को कौर उठाने से पहले तुझे फोन करता, शुभि ने खाना खा लिया न?''

"हाँ चाचा! खा लिया, आप भी खा लो!''

"सुबह के लिए क्या पसंद आएगा अभी बता दो!'' वह मोबाइल कान से लगाए मुँह में कौर डालता।

"गुरुवार का व्रत है, चाचा!''

"बस-बस समझ गया।'' वह मोबाइल रखकर खाने लगता। नींद में भी रटता रहता सेव, संतरा, मौसंबी, पपीता, पेड़ा, बरफी, दूध; परसों सुबह के लिए आलू, गोभी, मटर, टमाटर, बाकी सब तो सब्जी वाला स्वयं ही भर देता है झोले में। दस बजे तक पहुँच जाना चाहिए उसे; भूख का जरा सा भी एहसास नहीं होना चाहिए शुभि को। फूल सी मुरझा जाती है। पहले वह मोटर स्टैंड जाकर गाड़ियों की व्यवस्था देखता, चार प्राइवेट बसें हैं उसकी। कई मुरुम खदानें उसने लीज पर ले रखी हैं। चौबीस घंटे उसके ट्रक नदी से रेत ढोते रहते हैं, ऊपर से नीचे सबकुछ सेट है। रातो-रात लाखों की रेत कहाँ-से-कहाँ पहुँच जाती है, किसी को पता नहीं चलता। अपनी तरक्की को भी वह शुभि की तकदीर मानता है। और क्या? जब उसकी बीवी जलकर मरी थी दो बच्चे छोड़कर, तब क्या था उसके पास पुस्तैनी खेती-बाड़ी के सिवा? और यदि कुछ था तो वह थी उसकी बदनामी।

"गजानन ने अपनी घरवाली को इतना सताया कि जल मरी बेचारी! अपने कुल का नाश करने के लिए जनमा है यह दुष्ट, पुलिस की हिरासत में कैसे जा रहा था, जैसे गौ वध किया हो, अब तो इससे डरकर रहना पड़ेगा, निहायत क्रूर इनसान है।'' उसके पीछे और भी लोग न जाने क्या-क्या कहते होंगे, अपनी जमा-पूँजी लगाकर बाप ने बचाया था जेल जाने से। उस समय उसकी उम्र बीस के अंदर ही थी। पत्नी की भावनाओं की ओर उसने कभी ध्यान नहीं दिया था। जैसे अन्य लड़कियों से उसके उत्तरदायित्व विहीन संबंध बनते थे, वैसे ही पत्नी से भी बनते थे, बल्कि बेहद सुलभ और सुरक्षित संबंध थे उसके साथ। बच्चे होते गए, माँ-बाप के रहते उसे चिंता भी क्या हो सकती थी। अकसर वह देर रात घर पहुँचता, गालियाँ बकता, मीनू कुछ कहती तो उसे मारता-पीटता, कभी गरम खाना उसके ऊपर फेंक देता, वह अपना जला बदन दूसरों से छिपाती हुई दिन-रात घर के काम में लगी रहती। उसे विश्वास था कि वह कुछ सोचती नहीं, न उसकी कोई भावना है, न ही आवश्यकता। पाँच वर्ष के वैवाहिक जीवन में वह कभी उसकी पसंद की कोई वस्तु लेकर घर नहीं गया, न उसे लेकर कहीं घर से बाहर निकला। अचानक एक दिन उसने सदा के लिए संसार से नाता तोड़ लिया। जीते जी जो नहीं किया, वह मरकर गई, वह एक घृणित मनुष्य के रूप में पहचाना जाने लगा।

जैसे ही उसका मुकदमा खारिज हुआ, कुछ लोगों में उसकी पूछ-परख बढ़ गई। विधानसभा चुनाव के समय उसने बहुत पैसा बनाया किंतु बाप-भाई की आफत कर दी, बूथ कैप्चरिंग करके अपने प्रत्याशी को जिताया उसने, आगे लाभ मिला उसे अपना धंधा जमाने में, थाने में बैठे लोग उसे जानते हैं, उसकी पहुँच को जानते हैं।

काम में लगाने की अंतिम कोशिश के रूप में पिताजी ने एक ऑटो रिक्शा खरीद कर दिया था। देखो बेटा गजानन! तुम हुए सयाने, कब तक तुम्हारे बच्चों को पालेंगे? भाई-भतीजे किसी के अपने नहीं होते, यदि चार पैसे कमाकर लाओगे, तो कहीं-न-कहीं देखकर तुम्हारा घर फिर से बसा देंगे। वरना हमारे बाद तुम्हारा कौन होगा? मन लगाकर काम करोगे तो लक्ष्मीजी जरूर कृपा करेंगी। बूढ़े की आँखों के आँसुओं ने उसे कुछ सोचने पर मजबूर कर दिया। उसी समय तो शुभि भी मिली थी न उ से । वह उसके लिए बहुत दौलत कमाना चाहता था। उसका दामन खुशियों से भरना चाहता था। आगे उसने हर साल एक नई गाड़ी खरीदी। उसके ऊपर दोहरा नशा छाया हुआ था, एक शुभि के सौंदर्य का दूसरा दौलत का।

समय की रफ्तार को वह जैसे भूल सा गया। धीरे से दिन ढला और रात की स्याही ने सब कुछ ढँक लिया। कल तो यहाँ रोशनी जगमगा रही थी। बाजे बज रहे थे। नहीं-नहीं, शादी में डेढ़-दो हजार लोग जुटे थे। उसने सैकड़ों प्रकार के व्यंजन बनवाए थे। आगे बढ़-बढ़कर घरातियों-बरातियों को सँभाल रहा था। सब कह रहे थे, गाँव में इतनी शानदार शादी किसी की नहीं हुई। गजानन बड़ा पुण्यात्मा व्यक्ति है, जिसने एक गरीब की बेटी का उद्धार कर दिया। जिसे मानता है, उसे पूरे दिल से मानता है। लोग आपस में बातें कर रहे थे।

वह एकांत पाकर रोता, यदि कोई अकेला मिल जाता तो उसे अपने गम का साक्षी बना लेता। अम्मा, मेरे साथ भयानक धोखा किया इन पापियों ने, मेरे बीसो लाख खा गए, और लड़की दूसरे के हाथ सौंप दी, जिसे सौंपा है, उसके पास है क्या, जो लड़की को सुखी रखेगा? मैंने फूल की तरह रखा उसे। जरा सी गरम हवा न लगने दी। इसके मुँह से बात बाद में निकलती, मैं पूरा पहले करता। कहा कई बार इन मलेक्छों को कि लड़की मेरे यहाँ कर दो, तुम्हारे परिवार का उद्धार कर दूँगा। एक जो इसका भाई है, अरे वही जो लफुट जैसे घूमता रहता है! उसे कोई दुकान खुलवा देता परंतु इनकी समझ में कुछ नहीं आया। मेरी हाय लगेगी इन्हें। अगले जन्म तक भरेंगे मेरा कर्ज, जो कुछ दिख जाता, उसी से वह अपने आँसू पोंछता। मुँह धोकर बोरोप्लस लगाता और हलवाइयों को कोई निर्देश देने लगता।

"आप कोर्ट मैरिज कर सकते थे, आपको रोकने वाला भला कौन

माई का लाल है ? लड़की भी पूरे पच्चीस की है।'' उसके आँसू से द्रवित होकर शुभि के किसी रिश्तेदार ने प्रश्न किया था। वह क्या उत्तर देता कि शुभि ने स्वयं अपने लिए जीवनसाथी चुन लिया। फेसबुक पर मित्रता हुई और परछाइयाँ साकार होकर एक-दूसरे की होने के लिए मचल उठीं। पहले जहाँ हर आधे घंटे में वह उसे फोन लगाती थी, इधर साल भर से जब भी वह फोन लगाता, बिजी पाता। वह बहाने करना सीख गई थी। अब बातें मात्र फरमाइश तक सिमटकर रह गईं।

"चाचा, गरमी से बुरा हाल है, लाइट बार-बार चली जाती है।''

"इनवर्टर लेकर आ रहा हूँ, घर पर ही रहना!'' वह सामान लेकर पहुँच गया एक घंटे में। इनवर्टर लग गया। शुभि की माँ चाय-नाश्ता दे गई, जिसे उसने हाथ भी न लगाया। बार-बार आँखें दरवाजे की ओर उठ जातीं, शुभि की एक झलक पाने के लिए। जब न रहा गया, तब उसकी माँ से पूछ बैठा, "शुभि दिखाई नहीं दे रही है ?''

"सो रही है भइया, रात को मच्छरों के कारण सो नहीं पाई थी, जगा दूँ क्या ?''

"अरे नहीं-नहीं, बेचारी की नींद उचट जाएगी! मैं तो आता ही रहता हूँ।" कहते-कहते उसके स्वर में पीड़ा उतर आई थी।

"भाभी! मुझे आप से एक बात कहनी थी।'' संकोच के मारे उसका स्वर बैठा जा रहा था। स्वर में थरथराहट उभर आई थी।

"हाँ भइया, कहें!''

"मैं चाहता हूँ कि शुभि मेरे घर जाए!''

"इसमें कौन सी बड़ी बात है, चली जाएगी।'' उसने जान-बूझकर नासमझ बनते हुए कह दिया।

"ऐसे नहीं भाभी! हमेशा के लिए!''

"ए तो और अच्छी बात है, हमारा भार उतर जाएगा।'' वह उसकी बात हलके में ले रही थी।

"अब आप को कैसे समझाऊँ, समझ में नहीं आता।'' उसकी निगाहें झुकी जा रही थीं।

"समझ रही हूँ, आपने उसे बड़े प्यार से पाला है, काम न करना पड़े, इसलिए नौकरानी लगा रखी है। अपनी आँखों के सामने रखना चाहते हैं परंतु एक बात समझ में नहीं आई, आप का बेटा तो शुभि से छोटा है, फिर कैसे शुभि आपके घर में सदा रह सकती है भइया ? बेटियाँ तो पराया धन होती हैं न ?'' उसने ऐसे समझाया कि वह कुछ कह ही न सका।

"हैलो! शुभि बोल रही हो ?''

"हाँ चाचा! दशहरी आम आ गए हैं बाजार में, मेरा केश किंग और मैकअप का सामान भी समाप्त हो गया है।''

"चली आओ, दिला देता हूँ सबकुछ।''

"कैसे आऊँ, ऑटो से ?''

"अरे नहीं! मैं आ रहा हूँ न गाड़ी लेकर।'' वह उत्साहित हो गया।

"कहीं जाने का मूड नहीं है, चाचा ? आप किसी से भेज दीजिए सामान!'' उसकी उदासीन आवाज सुन कर उसके उत्साह पर पानी फिर गया।

"मैं देख रहा हूँ शुभि कि आजकल तुम मुझसे दूरी बनाकर चल रही हो, क्या मुझसे सेवा में कुछ कमी हो गई ?" उसकी आवाज रुआँसी हो गई थी।

"चाचा! आप हर वक्त पीए रहते हैं न, इसीलिए। मुझे शराबी लोग पसंद नहीं हैं।'' उसके स्वर का रूखापन उसे अंदर तक चीर गया। अब तक तो कभी ऐसी बात नहीं कही शुभि ने! उसका बाप भी तो हरदम डूबा रहता है। शुभि के सान्निध्य की चाह में उसने न जाने कितनी शराब पिला दी नारायण को।

'अब तक तो चाचा से अच्छा कोई था ही नहीं, अब चाचा शराबी हो गया ?' उसने स्वयं से जैसे पूछा। उसकी आँखों में आँसू भर आए, उसकी शुभि ने उसे शराबी कह दिया। दिल में पीड़ा का सैलाब उमड़ पड़ा।

"जब नादान थी, तब की बात अलग थी, अब पढ़-लिख गई, समझदार हो गई, मेरा भला चाहती है, तभी तो कहा है, जिसके मन में प्रेम न होगा, उसे क्या गर्ज है कहने की ? अपनी शुभि की खुशी के लिए आज से शराब से तौबा! छोड़कर बताऊँगा। उसके अंदर एक प्रकार की चुनौती स्वीकारने की भावना का उदय हुआ। शराब के कारण ही तो उसकी पत्नी बच्चों का मोह छोड़कर उससे दूर चली गई। कितनी जगह झगड़ा हुआ ? कितने मुकदमें चले ? वह याद करने लगा। यों तो आदत बड़ी पुरानी हुई, लेकिन शुभि की खुशी के लिए वह छोड़ देगा शराब!'' उसने प्रतिज्ञा की।

कई दिन वह घर से बाहर नहीं निकल सका। जी मिचलाता, दिमाग कुछ काम न करता, शराब की गंध उसके मन-मस्तिष्क में तारी रहती। वह पागल की तरह लंबी दूरी तय करता तेज चाल चलकर। चार बार नहाता, हनुमानजी की पूजा करता। घर वाले हैरान थे कि यह क्या हो गया इसे। अचानक इस परिवर्तन का कारण कोई नहीं समझ सका।

पंद्रह दिन बाद उसने शुभि को फोन किया।

"कैसी हो शुभि ? इतने दिन तुम्हें मेरी याद भी न आई ?'' वह जैसे कराह रहा था।

"ठीक हूँ, चाचा! मुझे लगा, आप मेरी बात से नाराज हो गए।''

"इसीलिए तो मनाने आ गई ?''

"मैं जानती थी, आप अधिक दिन नाराज नहीं रह सकते थे, इसीलिए चुप थी।''

"कुछ लाना है क्या ? मैं उधर ही आ रहा हूँ।''

"आइए! एक नए मेहमान से भेंट कराती हूँ। कुछ फल-मिठाइयाँ आ जाएँ।"

"तो अच्छा हो।''

कौन हो सकता है नया मेहमान ? हर एक पल बाद यह सवाल उसके जेहन में उथल-पुथल मचाने लगा था। सब से पहले वह नाई के

यहाँ गया, उसने नए चलन के अनुसार बाल कटवाए, कलर करवाया। क्लीनशेव चेहरा खिल उठा। उसने नई टी शर्ट और जिंस पहना। स्टाइलिश जूते खरीदकर पहने। उसने आइना नहीं देखा, शुभि की आँखों में वह अपनी छवि देखना चाहता था। अपनी मोटर साइकिल में उसने दो बड़े झोले लटकाए, एक में ताजे फल और दूसरे में मिठाइयाँ थीं। उस दिन वह अपने मन की बात शुभि को बता देना चाहता था।

शाम का झुटपुटा! लोगों ने अपने-अपने दरवाजे पर आग जला रखी थी, अलाव के धुएँ के साथ मिलकर रसोई घर का धुआँ एक धुंध का निर्माण कर रहा था। अकसर वह इसी समय यहाँ आया करता था। उसने अपनी मोटरसाइकिल नारायण के दरवाजे पर खड़ी की। एक बच्चा दौड़कर आया और दोनों झोले ले गया। वह अंदर आया। आँगन में खाट बिछी हुई थी, उस पर एक दरम्याने कद का युवक बैठा हुआ था। शुभि उसके साथ बैठी हँस-हँसकर बातें कर रही थी। उसने सहज ढंग से गजानन का स्वागत किया। युवक का परिचय कराते हुए उसने कहा, "ये मेरे मित्र हैं चाचा, मनोज नाम है इनका, हैदराबाद में सर्विस करते हैं।

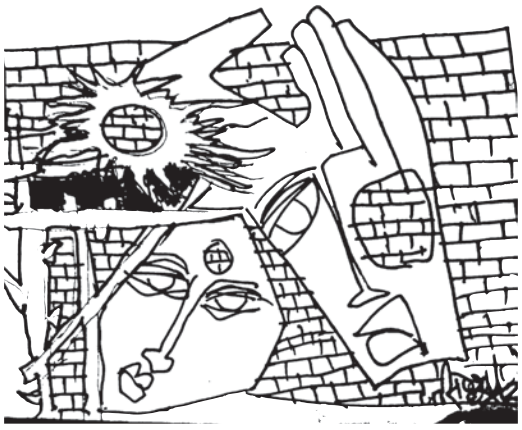

पहले फेसबुक मित्र बने, अब आमने-सामने की दोस्ती हो गई। मेरे साथ ही घर-परिवार से मिलने आए हैं। और मनोज! ये मेरे सबसे प्यारे चाचा हैं गजानन शुक्ल, अब इतने से ही समझ लो कि मैं इन्हें अपने पापा से अधिक मानती हूँ!'' मनोज ने प्रणाम किया। उसके मुँह से आशीर्वाद का कोई शब्द न निकला। शुभि की सहज ढंग से कही गई बात उसके सीने में अलाव जला रही थी। 'उसने देर तो नहीं कर दी अपनी बात कहने में?' उसे लगा, मनोज का आज रात रुकने का प्रोग्राम है, इस विचार से वह और व्यथित हो रहा था। अपनी बात कहने का यह उचित अवसर भी तो नहीं था। दस बजते न बजते मनोज फिर मिलने का वादा करके चला गया। वह हर पल सोच रहा था कि शुभि उसके नए गेटअप की ओर ध्यान दे।

"हाय चाचा! आज तो एकदम हीरो लग रहे हैं, अब ऐसे ही रहा करें! सब कुछ होते हुए भी रूप बनाए रहते हैं ।'' शुभि ने प्यार भरी नजरों से देखा, वह निहाल हो उठा।

"तुम जैसे रखोगी, वैसे ही रहूँगा शुभि, और मेरी परीक्षा न लो, मैं तुमसे शादी करना चाहता हूँ।'' वह एक ही साँस में अपने मन की बात कह गया। सुनकर एक पल को शुभि काठ हो गई किंतु दूसर ही पल ठठाकर हँस पड़ी, "आज तो अच्छे मजाक के मूड में हैं चाचा, कहीं चाचा भतीजी की शादी होती है? मुझे विदा करने के दु:ख से ऐसा कह रहे हैं न? मैं समझ रही हूँ।''

"मैं मजाक नहीं कर रहा शुभि, हमारा कोई खून का रिश्ता नहीं है, सभी लड़कियाँ चाचा कहती रहती हैं, इससे कोई किसी की बेटी नहीं हो जाती। मैं शुरू से ही तुम्हें जीवनसाथी के रूप में देख रहा हूँ।''

"नहीं चाचा! ऐसा कभी मत कहना! मैं आपकी बेटी की उम्र की हूँ, फिर आप ने हमेशा मुझे बिटिया कहा है। संसार क्या कहेगा? कितनी बदनामी होगी आपकी? ऐसा होने से पहले मैं अपनी जान दे दूँगी चाचा!'' वह रोती हुई कमरे में भाग गई थी।

"नहीं शुभि, ऐसा कभी न सोचना! मैंने तो मजाक किया था, मैं तो तुम्हारी परीक्षा ले रहा था। शुभि! तुम जहाँ चाहोगी मैं स्वयं वहाँ तुम्हारी शादी करूँगा।'' वह रोता हुआ यहाँ से निकला था।

उसके बाद से वह ज्यादातर रिश्तेदारों के यहाँ रहने लगी। जहाँ जाकर वह उसे नहीं देख सकता था। जब वह सुनता कि शुभि आई है, उसकी जरूरत का सामान लेकर दौड़ा आता। उसे हँसाता। अपने जीते जी वह उसे किसी अभाव में कैसे रहने दे सकता था।

"हाँ! अपनी मजाक बन गई जिंदगी का तमाशा देखने अब क्यों आएगा इस दरवाजे पर? बस हो गया!'' उसने एक उच्छ्वास ली। अब तक मैदान साफ हो चुका था। कुछ कुत्ते अभी भी कचरे के पास आपस में लड़ते कुछ खोज रहे थे। वह घर जाने के लिए मोटर साइकिल उठा ही रहा था कि भाभी आँखें मलती बाहर आ गईं।

"भइया! जो आपने कर दिया, संसार में कोई नहीं कर सकता। हमारी हर तरह से इज्जत रखी। कुछ पानी-वानी पीकर जाओ! पूरा दिन अकेले काम में लगे रहे, हम दाना-पानी भी नहीं पूछ सके।'' उनकी आँखें अधिक रोने के कारण सूजी हुई थीं।

"नहीं भाभी! कुछ मत लाइए! भूख-प्यास सब शुभि के साथ ही चली गई।" कहते-कहते गला रुँध गया। लाल-लाल आँखों से खारा जल बह चला।

"आते रहना भइया! हमारी गलतियों को माफ कर देना।''

'आना तो है ही, नहीं तो शुभि की बदनामी न होगी? लोग कहेंगे, लड़की के लिए ही आता था।' उसने मन-ही-मन कहा। अभी गाड़ी स्टार्ट हुई ही थी कि उसे चक्कर आया और गाड़ी का एक्सीलेटर उसके हाथ से छूट गया।

सा.अ.

बी-२८, हरसिंगार, राजकिशोर नगर
बिलासपुर (छ.ग.)
दूरभाष : ०९९०७१७६३६१

खनकती आवाज और

• मालिनी गौतम

सुपरिचित रचनाकार। अब तक 'बूँद-बूँद एहसास' (कविता-संग्रह); 'दर्द का कारवाँ' (गजल-संग्रह); 'गीत अष्टक तृतीय' (साझा गीत-संकलन) एवं प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति एसोसिएट प्रोफेसर (अंग्रेजी), कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, संतरामपुर (गुजरात)।

महँगे का माल सस्ते में ले लो

छोटे से कस्बेनुमा शहर की एक गली में
काँधे पर बड़ा सा गठ्ठर टाँगे
एक फेरीवाले ने आवाज लगाई,
ले लो···ले लो···जल्दी ले लो
महँगे का माल सस्ते में ले लो
खिड़की और दरवाजे के परदे ले लो,
सोफा-कुशन, फ्रिज-टी.वी.
मिक्सी और वॉशिंग मशीन के कवर ले लो
घड़ी भर में औरतों का जमघट लग गया
फेरीवाले ने किसी को थमाये परदे
यह कहकर
कि बाहर वालों की घूरती नजरें
अब नहीं झाँक सकेंगी
घर के भीतर,
तो किसी को पकड़ाए सोफा के कवर
कि बच्चों के कूदने पर भी
अब गंदे नहीं होंगे सोफा,
मिक्सी बची रहेगी
चटनी और पालक पीसते समय
उड़कर पड़ने वाले छींटों से,
वॉशिंग मशीन पर भी
नहीं पड़ेंगे दाग
सिर्फ-पानी और मैल के,
और फ्रिज लगेगा नया-नकोर
पाँच-दस बरस बाद भी।

दिनभर यहाँ-वहाँ घूम
थका-माँदा वह
चल दिया अपने झोंपड़ीनुमा घर की तरफ,
घर के बाहर
बच्चे को धूल-मिट्टी में खेलता देख
मुसकराया
जोर से चिल्लाया—
खेलो बबुआ···जी भर खेलो
धरती मैया के बिछौने पर।

फिर पटक कर गट्ठर
एक कोने में उसने
बीबी की परोसी हुई रोटी
सिलबट्टे पर पीसी
लहसन की चटनी से खाई,
एक बीड़ी फूँकी
एक आलस भरी ऐड़ लगाई
और नदी किनारे कपड़े धोने जाती पत्नी को
'जल्दी आ जाना' की आवाज लगाई।

लोगों ने फेरीवाले से खरीद-खरीदकर
बाजार अपने घर में बसाया
फेरीवाले ने देर रात
उसी बाजार का
अपने सिरहाने तकिया लगाया
और नींद में फिर से आवाज लगाई
ले लो···ले लो···जल्दी ले लो
महँगे का माल सस्ते में ले लो।

छल

छल
कई रूप धरकर आया
जीवन में
भरोसे का
विश्वास का
दोस्ती का
प्रेम का
लेकिन हर रूप में
पहचाना गया
अपनी कुटिल मुसकान से।

मुसकान पर
खनकती आवाज और
भाषा का चमकीला
मुलम्मा नहीं चढ़ाया जा सकता,
जगजीत की गजलों का
खालिस दर्द नहीं सजाया जा सकता,
देर तक भोलेपन का
राग नहीं बजाया जा सकता।

छल हर बार खा गया पटखनी
हुआ चारों खाने चित्त
पकड़ा गया सरे बाजार
और फिर कर दिया गया बेदखल
विश्वास-भरोसे, दोस्ती और प्रेम की दुनिया से।

छल, मत दस्तक देना
बिन बुलाए मेहमान की तरह
किसी की निश्छल दुनिया में
कि हर बार पहचाने जाओगे
अपनी कुटिल मुसकान से।

५७४, मंगलज्योत सोसाइटी
संतरामपुर-३८९२६०
जिला-महीसागर (गुजरात)
दूरभाष : ९४२७०७८७११
malini.gautam@yahoo.in

विज्ञानसम्मत भारतीय संवत्सर

• डी.डी. ओझा

समय का हिसाब रखना आज के मानव के लिए कोई कठिन कार्य नहीं है। छपे कलेंडर, हाथ में बँधी घड़ी, मोबाइल फोन, कंप्यूटर आदि अनेक साधन समय का हिसाब रखने में मनुष्य की मदद करने को तत्पर हैं। जब इनमें से कोई भी नहीं था, तब भी हमारे बुजुर्गों ने आम आदमी को समय जानने का अद्‌भुत उपकरण उपलब्ध करा दिया था। अंतर केवल इतना था कि प्राचीन काल में विकसित वह उपकरण आदमी के पास व्यक्तिगत रूप से उपलब्ध नहीं था। उस सार्वजनिक साधन को दुनिया का कोई भी व्यक्ति कहीं से भी देख सकता था। उसी उपकरण को 'संवत्सर' के नाम से जानते हैं। संवत्सर को एक ऐसा कलेंडर माना जा सकता है, जो आज भी आकाश में उसी तरह टँगा है, जैसा हजारों वर्ष पूर्व टाँगा गया था। वर्तमान में समय जानने के अन्य सरल एवं अधिक प्रभावी साधन उपलब्ध हो जाने के कारण आम आदमी ने उसे देखना छोड़ दिया है। कई लोग तो उनके विषय में जानते भी नहीं हैं।

क्या है संवत्सर?

प्रकृति में एक ऋतुचक्र के पूर्ण होने में लगने वाले कालखंड को भारत में 'संवत्सर' नाम दिया गया है। मोटे तौर पर देखा जाए तो संवत्सर वह समय है, जिसमें पृथ्वी सूर्य की एक परिक्रमा पूरी कर लेती है। यहाँ यह जानना उचित ही होगा कि संवत्सर केवल सूर्य आश्रित नहीं है। संवत्सर सूर्य, चंद्रमा तथा नक्षत्र, तीनों की समन्वित स्थिति पर आधारित है। हमारे मनीषियों ने संवत्सर का आविष्कार बदलते मौसम की पूर्व सूचना पाने के उद्‌देश्य से किया होगा। ऐसी सूचना के अभाव में खेतों में सही समय पर बुआई-कटाई आदि कार्य का होना संभव नहीं होता। ऐसी स्थिति में पर्याप्त उत्पादन के अभाव में लोगों के भूखे मरने की स्थितियाँ निरंतर बनी रहती थीं। भारतीय संस्कृति का आधार-स्तंभ ऋतु त्योहारों, जैसे दीपावली, होली, मकर संक्रांति, बसंत पंचमी, चातुर्मास आदि को मनाने की परंपरा भी संवत्सर के अभाव में फलीभूत नहीं हो पाती है।

सुप्रसिद्ध विज्ञान-लेखक। पुरातन एवं अद्यतन विज्ञान विषयों पर हिंदी में ५० से अधिक पुस्तकें, सहस्राधिक विज्ञान आलेख एवं शताधिक शोध-पत्र प्रकाशित। पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर लेखन, अनेक राष्ट्रीय पुरस्कारों एवं सम्मानोपाधियों से अलंकृत।

आज आम भारतीयों के जीवन में संवत्सर का अर्थ जीवन के कुछ विशिष्ट अवसरों की तिथियाँ, मुहूर्त तथा तीज-त्योहार का दिन जानने तक ही रह गया है। अंग्रेजी वातावरण में विकसित युवा पीढ़ी तो इसे काल मापन की रूढ़िवादी विधि मानकर हेय दृष्टि से भी देखती है। वस्तुत: संवत्सर अनेक ऋषियों के सैकड़ों वर्षों के वैज्ञानिक अनुसंधान का परिणाम है। जिस समय वैज्ञानिक उपकरण के नाम पर मनुष्य के पास कुछ नहीं था, तब मात्र अपने नेत्रों से किए गए अवलोकन तथा चिंतन-मनन से आविष्कृत संवत्सर किसी आधुनिक आविष्कार से कम नहीं है।

भारतीय परंपरा की सृष्टि का वर्णन सबसे विलक्षण है। यहाँ के चातुर्वणीय समाज द्वारा जितने भी धार्मिक क्रियाकलाप संपन्न किए जाते है, उनमें संकल्प करने का विधान है। संकल्प करवाने में संवत् अयन, ऋतु, मास, तिथि, वार तथा नक्षत्र का उच्चारण होता है। भारतीय काल गणना कल्प, मन्वंतर, युगादि के पश्चात् संवत्सर से प्रारंभ होती है। सत्युग में ब्रह्मा संवत्, त्रेता में वामन संवत्, द्वापर में युधिष्ठिर संवत् और कलियुग में विक्रम संवत् प्रचलन में है अथवा रहे हैं। तुलनात्मक दृष्टि से देखें तो भारतीय काल गणना वैदेशीय काल गणना की तुलना में अत्यंत प्राचीन है। भारतीय काल गणना का पुण्य प्रवाह जहाँ कल्पाबद्ध संवत् १ अरब ९७ करोड़ २९ लाख ८५ हजार १०८ वर्ष, सृष्टि संवत् १ अरब ९५ करोड़ २९ लाख ८५ हजार १०८ वर्ष, श्रीराम संवत् १ करोड़ २५ लाख ६९ हजार १०८ वर्ष, श्रीकृष्ण संवत् ५ हजार २३२ वर्ष, विक्रम संवत् २०७७ वर्ष से प्रवाहित है। वहीं वैदेशीय संवतों में चीनी संवत् ९ करोड़

६० लाख २ हजार ३१९ वर्ष; पारसी संवत् १ लाख ८७ हजार ९८८ वर्ष; मिस्र २७ हजार ६७५ वर्ष; तुर्की ७६२८ वर्ष; यूनानी ३५९४ वर्ष; ईस्वी २०२१ वर्ष तथा हिजरी सन् मात्र १४४२ वर्ष पुराना है।

भारतीय काल गणना की सबसे छोटी इकाई कलियुग की है, जो कि ४ लाख ३२ हजार वर्ष का है। वर्तमान काल श्वेत वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वतंर का अट्ठाईसवाँ कलियुग है। इसकी भी यदि आयु निकाली जाए तो वह भी आज ५१२२ वर्ष होती है। यह तुलनात्मक स्थिति सिद्ध करती है कि भारतीय काल गणना अत्यंत प्राचीन एवं वैज्ञानिक है। इतना ही नहीं, भारतीय वाङ्मय में संवत्सर प्रारंभ करने की भी शास्त्रीय विधि का उल्लेख मिलता है। अपने नाम से संवत्सर चलाने वाले सम्राट् को संवत्सर प्रारंभ करने से पूर्व अपने राज्य के प्रत्येक जन को ऋण-मुक्त करना पड़ता है।

अंग्रेजी महीनों का नामकरण

वर्तमान में प्रचलित अंतरराष्ट्रीय कलेंडर के महीनों से हम सभी परिचित हैं। इन महीनों का नामकरण किस प्रकार हुआ, ये महीने किस प्रकार प्रारंभ हुए तथा इनके नामों से हमें क्या सूचना मिलती है, इसकी जानकारी भी रोचक है।

इस कलेंडर का प्रारंभ रोम के पौराणिक राजा रोम्युलस ने किया। रोम्युलस के इस कलेंडर में वर्ष दस महीनों में बँटा हुआ था। मार्टियुस, एप्रिलिस, मेयुस, जूनियुस, पिवंटिलिस, सेप्टिलियस, सैटेंबर, ओट्टोबर, नवंबर और दिसंबर। इस प्रकार इस कलेंडर में पहला महीना जनवरी न होकर मार्टियुस यानी मार्च था। इसमें फरवरी माह भी नहीं था। वर्ष में बारह महीनों का विचार राजा न्यूमा पोंपीलियुस के शासन काल में विकसित हुआ। उन्होंने ही इस कलेंडर में जैन्युएरियुस और फुब्रेएरियुस नामक दो महीने और जोड़े। यह कलेंडर ई.पू. ४६ के आसपास तक चलता रहा। इस दौरान नया वर्ष मार्च से प्रारंभ होता रहा। इसके पश्चात् जूलियस सीजर से मार्च के बजाय जनवरी को वर्ष का पहला महीना बनाया।

जूलियस सीजर के कलेंडर का संशोधित रूप पोप ग्रेगरी १३वें के नाम पर मार्च १५८२ से चलन में आया। ब्रिटेन में इसे न्यू स्टाइल कलेंडर ऐक्ट नामक विधेयक पास करके लागू किया गया। इसमें महीनों के सुधरे हुए नाम रखे गए। इनके नामकरण के बारे में निम्न बातें कही जाती हैं—

जनवरी : यह शब्द लातीनी के जैन्युएरियुस शब्द से बना है। इसका नामकरण रोमन देवता जानुस के नाम पर किया गया है। इस देवता को सामान्यत: दो मुख वाला तथा कहीं-कहीं चार मुखवाला बताया गया है। रोम के गणतंत्रीय कलेंडर में यह महीना ग्यारहवाँ महीना था तथा इसमें २९ दिन थे। इस कलेंडर में वर्ष में ३५५ दिन होते थे। बताया जाता है कि जूलियस सीजर ने एक आज्ञा जारी करके जनवरी के दिनों की संख्या बढ़ाकर ३१ कर दी।

फरवरी : यह शब्द लातीनी के फुब्रेएरियुस का बदला हुआ रूप है। रोम के गणतंत्रीय कलेंडर में यह अंतिम महीना था। यह शब्द फबुअरी धातु से बना है, जिसका अर्थ है—शुद्ध करना। प्राचीन रोमन सभ्यता में यह महीना आत्म-शुद्धि, प्रायश्चित्त और परिमार्जन का माना जाता है। इस महीने में आत्म-शुद्धि की अनेक रस्में अदा की जाती थीं।

मार्च : यह प्राचीन रोम कलेंडर का पहला महीना था। उनके धार्मिक पर्वों और व्रतानुष्ठानों का प्रारंभ इसी महीने में होता था। यह शब्द लातीनों भाषा के मार्टियुस से बना है। यह महीना युद्ध और वृद्धि के रोमन देवता के नाम पर आधारित है।

अप्रैल : यह शब्द लातीनी भाषा के एप्रिलिस शब्द से बना है। एप्रिल का महीना उर्वरता की देवी एप्रेरिते के नाम पर आधारित है। इसीलिए अप्रेल को फसल के अंकुरित होने का महीना भी माना जाता था।

मई : यह लातीनी भाषा के ही मेयुस शब्द से बना है। संभवत: इसका नाम बसंत की देवी मेईया के नाम पर आधारित है। मई का महीना शस्य और वनस्पति की बुद्धि का सूचक था। रोमनवासी इस समय कृषि संबंधी धार्मिक अनुष्ठान किया करते थे। यूरोप में इस महीने में मई राजा तथा मई रानी के साथ हरी-भरी टहनियों का जुलूस निकला जाता था।

जून : इस महीने का नामकरण लातीनी भाषा के जुनियुस शब्द से हुआ है। यह उनकी मुख्य देवी जूनों की याद दिलाता है। जूनों शब्द जूवेनिस धातु से बना है, जिसका अर्थ है—विवाह योग्य कुमारी।

जुलाई : यह रोमन कलेंडर का पाँचवाँ महीना होता था, लेकिन आज से कलेंडर का यह सातवाँ महीना है। जुलाई को प्राचीन रोमनवासी पिवंटिलिस कहते हैं। इस महीने में ही जूलियस सीजर का जन्म हुआ था।

अगस्त : यह लातीनी भाषा के आगुस्टस शब्द से बना है। जब रोमन कलेंडर मार्च से प्रारंभ होता था, तब यह महना सेप्टिलियस यानी छठा महीना कहलाता था। जूलियस सीजर के उत्तराधिकारी रोमन सम्राट् आगस्टम सीजर के नाम से इसका नया नाम रखा गया।

सितंबर : यह लातीनी भाषा के सेप्टेम शब्द पर आधारित है, जिसका अर्थ होता है सात। उस समय यह सातवाँ महीना होता था। आज यह महीना ३० दिन का है तथा वर्ष का नौवाँ महीना है।

अक्तूबर : प्राचीन रोमन में यह आठवाँ महीना होता था। अलग-अलग रोमन सम्राटों के साथ इस महीने के नाम को बदलने की कोशिश की गई, परंतु यही नाम बना रहा। रोमनों के युद्ध के देवता मार्स की इस महीने में विशेष पूजा होती है।

नवंबर : यह लातीनी भाषा के नोवज् शब्द पर आधारित है। इसका अर्थ नौ है। प्राचीन रोमन कलेंडर में यह नौवाँ महीना होता था। रोमन सम्राट् टाइबेरियस के नाम पर इसका नया नामकरण करने का प्रयास किया गया, परंतु स्वंय टाइबेरियस ने ऐसा नहीं होने दिया।

दिसंबर : यह लातीनी भाषा के डेसेज शब्द से निकला है, जिसका आशय है दस। प्राचीन रोमन कलेंडर में यह दसवाँ महीना था। आधुनिक कलेंडर में यह बारहवाँ तथा अंतिम माह है। इसमें ३१ दिन हैं। प्राचीन

रोमनों में यह उत्सवों का महीना माना जाता है।

इस प्रकार वर्ष के बारहों महीने अपना विशिष्ट अर्थ लिये हुए हैं। प्रत्येक महीने में अलग-अलग देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना तथा विभिन्न उत्सवों का आयोजन किया जाता रहा है।

भारतीय वाङ्मय के अनुसार सृष्टि का प्रारंभ चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से होता है। परंपरा के साक्ष्य से हम जानते हैं कि सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा ने इसी दिन ब्रह्मांड की रचना प्रारंभ की। भारतीय काल-गणना के अधिकांश संवत्सर इसी दिन से प्रारंभ होते हैं। खगोलीय दृष्टिकोण में देखें तो भी यह दो खगोलीय पिंडों की कलाओं में पूर्ण सामंजस्य रखते हुए ऐसी ऋतु से प्रारंभ होता है, जब सूर्य भूमध्य रेखा पर होता है और पृथ्वी पर वातावरण सर्वथा सम होता है। जबकि ईस्वी सन् का प्रारंभ १ जनवरी से होता है, उस समय पृथ्वी के दो गोलार्द्धों में सर्वथा विपरीत ऋतुएँ रहती हैं।

टूटती तिथि की वैज्ञानिकता

संवत्सर में प्रतिदिन की तिथि देखने हेतु चंद्रमा का उपयोग किया गया। भारतीय पंचांग में तिथि एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक चलती है। जिस दिन चंद्रमा सूर्य के साथ उदय होकर सूर्य के साथ ही अस्त होता है, उसे अमावस्या कहते हैं। जिस दिन चंद्रमा सूर्यास्त के बाद उदय होता है, उसे पूर्णिमा नाम दिया गया। आकाश में चंद्रमा का पथ वृत्ताकार होने के कारण ३६० अंश का होता है। एक माह में ३० दिन होने के कारण इसे ३० बराबर भाग बाँटने से प्राप्त एक भाग १२ अंश का होता है। चंद्रमा के अपने पथ पर १२ अंश चलने को एक तिथि माना गया है। यह वैज्ञानिक विभाजन है। चंद्रमा आकाश में सदैव एक समान चाल से नहीं चलता। कभी १९ घंटे में १२ अंश चलता है तो कभी इसी दूरी को तय करने में २६ घंटे ले लेता है। इस कारण तिथि परिवर्तन प्रतिदिन सूर्योदय के समय नहीं होकर दिन में किसी भी समय हो सकता है। इस कारण एक ही दिन में दो तिथियाँ भी हो जाती हैं।

एक ही दिन में दो तिथियों का होना व्यवहार की दृष्टि से उचित नहीं जान पड़ा तो यह तय किया गया कि सूर्योदय के समय जो तिथि होगी, उसे ही पूरे दिन की तिथि माना जाएगा। इस नियम के कारण जब कोई तिथि २४ घंटे से लंबी होती है तो एक ही तिथि में दो सूर्योदय हो जाते हैं और दो दिन एक ही तिथि रहती है। इसके विपरीत कोई दूसरी तिथि सूर्योदय के बाद प्रारंभ हुई तथा छोटी होने के कारण अगले सूर्योदय से पूर्व समाप्त हो जाती है। इस कारण इसकी गिनती नहीं हो पाती। इसे ही तिथि का क्षय होना या 'तिथि टूटना' कहते हैं। यदि किसी दिन सूर्योदय से पूर्व ही कोई तिथि प्रारंभ होकर अगले दिन सूर्योदय के बाद भी चालू रहती है तो उस दिन तिथि की वृद्धि हो जाती है। यह स्थिति असुविधाजनक भले ही हो, मगर है वैज्ञानिक। आकाश में चंद्रमा की स्थिति तथा चंद्रमा की कला देखकर बिना कलेंडर व घड़ी के समय व तिथि का अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

संवत्सर में प्रतिदिन की तिथि देखने हेतु चंद्रमा का उपयोग किया गया। भारतीय पंचांग में तिथि एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक चलती है। जिस दिन चंद्रमा सूर्य के साथ उदय होकर सूर्य के साथ ही अस्त होता है, उसे अमावस्या कहते हैं। जिस दिन चंद्रमा सूर्यास्त के बाद उदय होता है, उसे पूर्णिमा नाम दिया गया। आकाश में चंद्रमा का पथ वृत्ताकार होने के कारण ३६० अंश का होता है। एक माह में ३० दिन होने के कारण इसे ३० बराबर भाग बाँटने से प्राप्त एक भाग १२ अंश का होता है। चंद्रमा के अपने पथ पर १२ अंश चलने को एक तिथि माना गया है। यह वैज्ञानिक विभाजन है।

सनातन काल गणना सूक्ष्मतम से विराटतम तक

दो परमाणु	=	१ अणु	२ नाड़िका	=	१ मुहूर्त
३ अणु	=	१ त्रसरेणु	३० कला	=	१ मुहूर्त
३ त्रसरेणु	=	१ त्रुटि	३० मुहूर्त	=	१ दिन-रात
१०० त्रुटि	=	१ वेध	७ दिन-रात	=	एक सप्ताह
३ वेध	=	एक लव	२ सप्ताह	=	१ पक्ष
३ लव	=	एक निमेष	२ पक्ष	=	१ माह
३ निमेष	=	एक क्षण	२ मास	=	१ ऋतु
५ क्षण	=	एक काष्टा	३ ऋतु	=	१ अयन
१५ काष्टा	=	एक लघु	२ अयन	=	१ वर्ष
१५ लघु	=	१ नाड़िका	एक वर्ष	=	१ संवत्सर

कलेंडर के विभिन्न रूप

मानव ने देखा कि हर मौसम एक निश्चित क्रम के अनुसार बदलता रहता है। चंद्रमा के दिखने का क्रम भी निश्चित है, जो २९½ दिनों में पूरा होता है, इस समय को उसने एक महीने का नाम दिया। पृथ्वी ३६५¼ दिनों में सूर्य की एक परिक्रमा पूरी कर लेती है, इस समय को एक वर्ष की इकाई माना, ताकि काल-गणना में सुविधा रहे।

इस तरह मानव ने अपनी सुविधानुसार समय को बाँटा, परंतु उसके तरीके अलग-अलग थे। उसका रोचक विवरण प्रस्तुत है—

माया कलेंडर

इसका निर्माण प्राचीन में मेक्सिको के लोगों ने किया। इसमें वर्ष के ३६५ दिन होते थे तथा हर वर्ष में १८ महीने तथा हर महीने में २० दिन होते थे। बाकी बचे ५ दिन अलग से हर वर्ष में जोड़ दिए जाते थे। इस कलेंडर के महीनों के नाम थे— पोष, उओ, जिप, जोटा, जेक, जुल, याक्सकिम, मोल, चेन, वाक्स, जैक, सेट, मेक, कावकिन, मुआन, पैक्स, कायाब और कुम्हूं।

माया कलेंडर मुख्यत: उत्सवों तथा तांत्रिक कार्यों में ही काम आता था। इसे केवल पुजारी व धार्मिक लोग ही पढ़ते थे, क्योंकि इसकी भाषा जनसाधारण की भाषा नहीं थी।

प्राचीन यूनानी कलेंडर

यह यूनान का अत्यंत प्राचीन कलेंडर था, जिसका वर्ष चाँद के दिखने के साथ शुरू होता था। इस कलेंडर में वर्ष में १२ महीने होते थे तथा हर महीने का नाम यूनानी पर्व, उत्सव से संबंधित था। इसमें १२ महीनों के नाम थे—हेक्टमबियन, मेटोगेनियन, बेड्रोमियन, पियोपसियन, मेमेक्टोरियन, पेसीडियन, गेमिलियन, एंथेस्टेरियन, इलाफेबोलियन, मूंचियन, थारगेलियन और सिरोफेरियन।

यूनान के प्राचीन गिरजाघरों में कहीं-कहीं आज भी इस कलेंडर का उपयोग किया जाता है।

समय के साथ-साथ सभ्यता का विकास हुआ। उद्योग, व्यापार, बाजार, धार्मिक व सामाजिक कार्यों के लिए मनुष्य को अलग-अलग दिन निश्चित करने की आवश्यकता पड़ने लगी। प्रारंभ के हर दस दिनों को विभिन्न कार्यों के लिए तय किया जाता रहा। कुछ दूसरे स्थानों पर हर पाँच दिन या सात दिनों को इन कार्यों के लिए तय किए जाने लगा। प्रारंभ में बेबेलोनिया में हर सातवें दिन को एक विशेष दिन माना जाता था। यहूदियों में भी हर सातवें दिन केवल धार्मिक पूजा किए जाने का रिवाज था।

भारतीय पंचांग

भारत में करीब ३० प्रकार के पंचांग प्रचलित हैं। हिंदी में कलेंडर का अर्थ पंचांग-पत्रा या तिथि-पत्रक होता है। सूर्य तथा चंद्रमा की गति के आधार पर भारत में कई पंचांग बने व प्रचलित हुए। परंतु सबसे पहला प्राचीन कलेंडर था 'कलियुग संवत्', यह ईसा से ३१०२ वर्ष पहले बना था।

भारतीय कलेंडरों में से जो दो सबसे अधिक प्रचलित हैं, वे हैं—

विक्रम संवत्

यह सर्वाधिक प्रचलित संवत् ईसा से ५७ वर्ष पहले बना। इसे उज्जियनी के प्रसिद्ध राजा विक्रमादित्य ने शुरू किया। इसमें साल में १२ महीने होते हैं, जिसके नाम हैं—चैत्र, बैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़, श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, मार्गशीर्ष, पौष, माघ और फाल्गुन।

शक संवत्

इसकी शुरुआत शक राजा कनिष्क ने ७८ ई. में की। यह कलेंडर नक्षत्रों पर आधारित है, जिससे यह अपेक्षाकृत अधिक वैज्ञानिक है। इसमें भी साल में १२ महीने होते हैं। जिनके नाम विक्रम संवत् वाले ही हैं। भारत सरकार ने इसे राष्ट्रीय पंचांग के रूप में मान्यता दे रखी है।

रोम का प्राचीन कलेंडर

इसमें एक साल में १० महीने होते थे, ४ महीने ३१ दिनों के तथा ६ महीने २९ दिनों के। ३१ दिनों वाले महीनों के नाम थे—मार्टियस, मेयस, क्विन्टिल्स और अक्तूबर। २९ दिनों वाले महीनों के नाम थे—एप्रिलिस, इथुनस, सेक्सटिलिस, सेप्टेमबर, नवंबर और दिसंबर।

बाद में इसमें २ महीने और जोड़ दिए गए, इनुएरियस २९ दिन का तथा फेबुएरियस २८ दिनों का।

यहूदी कलेंडर

इसमें भी साल में १० महीने होते थे, जो २९ व ३० दिनों के थे। पर इसमें हर तीसरे, छठे, आठवें, ग्यारहवें, चौदहवें, सत्रहवें और उनतीसवें वर्ष में ३० दिनों का एक महीना और जोड़ दिया जाता है। इस कलेंडर के महीनों के नाम थे—निवासान, सिवान, आब्र, तिश्ती, शेबत, अदर, प्रथम, इय्यार, तम्युज, इलुलतेवेत और अदर उन्नीस।

जूलियस कलेंडर

ईसा पूर्व पहली शताब्दी में रोम के सम्राट् जूलियस सीजर ने 'रोम के प्राचीन कलेंडर' में कुछ सुधार किया। उसने प्रत्येक वर्ष में १२ महीने ३६५ दिनों का बनाया और यह बढ़ा हुआ। १ दिन फरवरी मास में जोड़ा गया, क्योंकि प्राचीन रोम के कलेंडर में जब दस महीने होते थे तो फरवरी उसका अंतिम महीना पड़ता था। इस नवीन कलेंडर की जूलियस कलेंडर कहा जाने लगा।

जूलियस सीजर ने रोमन कलेंडर में से 'क्विनिटल्स' महीने का नाम बदल कर अपने नाम के आधार पर, उस महीने का नाम 'जुलाई' रख दिया। उसके कई सालों बाद आगस्टम सीजर ने रोमन कलेंडर में से 'सेक्सटिलिस' महीने का नाम अपने राम के आधार पर 'अगस्त' रखा।

ग्रेगरियन कलेंडर

जूलियस कलेंडर करीब सारे ईसाई देशों में लोकप्रिय हो गया। पोप ग्रेगरी ने जूलियस कलेंडर में थोड़ा और सुधार किया व बताया कि एक वर्ष ३६५) दिन का न होकर ३६५ दिन ५ घंटे ४८ मिनट ४६.०५४ सेकंड का होता है। (यानी ३६५.२४२२ दिन का) अत: हर चौथे साल १ दिन बढ़ाकर फरवरी २९ दिन की कर देने से थोड़ा सा समय ज्यादा जुड़ जाता है। (०.०३१२ दिन)। जो १०० साल से बढ़कर ०.७८ दिन हो जाता है। उसे हटाने के लिए यह निश्चित किया गया कि हर शताब्दी १८००, १९०० आदि ३६५ दिन की हुआ करेगी, चाहे उसमें ४ का भाग चला जाए।

इससे फिर ०.२२ दिन घट जाता है, जो ४०० साल में बढ़कर .३८ दिन हो जाता है। उसे जोड़ने के लिए यह निश्चित किया गया कि हर ४०० साल बाद १६००, २००० में फरवरी २९ दिनों की होगी तथा साल में ३६६ दिन होंगे। पर १७००, १८०० में फरवरी २८ दिनों की ही होगी।

इस कलेंडर को अठारहवीं शताब्दी में इंग्लैंड ने अपना लिया। आज सारे संसार में यही कलेंडर प्रचलित है।

चीनी पंचांग

सूर्य तथा चंद्रमा की गतियों के आधार पर चीन ने एक पंचांग बनाया, जिसे 'सौर-चांद्र-पंचांग' कहा जाता है। उस साल में ३६५.२५ दिन होते थे।

आजकल प्राय: सभी देशों में व्यावहारिक रूप से ग्रेगेरियन कलेंडर ही प्रचलित है। धार्मिक रीति-रिवाजों के अनुसार हिंदू-मुस्लिम व अन्य धर्मावलंबी धार्मिक कार्यों के लिए अपने-अपने पंचांग इस्तेमाल करते हैं। सरकारी कामकाज के लिए 'वित्त वर्ष' १ अप्रैल से ३१ मार्च तक माना जाता है, बैंकों में भी इसी का प्रचलन है। पंजाब में लोग बैसाख से नया साल आरंभ होना मानते हैं तो दक्षिण भारत में ओणम से तथा असम में बाहाग से। व्यापारी लोग दीवाली से अगली दीवाली तक एक वर्ष मानते हैं।

विदेशों में सप्ताह का नामकरण कैसे हुआ?

एक सप्ताह में सात दिन होते हैं और प्रत्येक दिन को अलग-अलग नामों से जाना जाता है। इनके नामकरण का इतिहास हजारों वर्ष पुराना है। हजारों वर्ष पूर्व मनुष्य केवल महीनों के बारे में जानता था। प्रत्येक माह के प्रत्येक दिन के लिए वह अलग-अलग नाम रखता था।

समय के साथ-साथ सभ्यता का विकास हुआ। उद्योग, व्यापार, बाजार, धार्मिक व सामाजिक कार्यों के लिए मनुष्य को अलग-अलग दिन निश्चित करने की आवश्यकता पड़ने लगी। प्रारंभ के हर दस दिनों को विभिन्न कार्यों के लिए तय किया जाता रहा। कुछ दूसरे स्थानों पर हर पाँच दिन या सात दिनों को इन कार्यों के लिए तय किए जाने लगा। प्रारंभ में बेबेलोनिया में हर सातवें दिन को एक विशेष दिन माना जाता था। यहूदियों में भी हर सातवें दिन केवल धार्मिक पूजा किए जाने का रिवाज था।

मिस्र के लोगों ने भी सात दिनों की पद्धति अपनाई। उन्होंने सातों दिनों के अलग-अलग नाम भी रखे। ये नाम पाँच ग्रहों सूर्य व चंद्रमा के आधार पर रखे गए। मिस्र के लोगों में सप्ताह के सात दिनों के नाम रविवार, चंद्रवार, बुधवार, बृहस्पतिवार, शुक्रवार तथा शनिवार रखे और सप्ताह के दिनों के इन्हीं नामों को रोम वालों ने भी अपनाया।

वर्तमान में सप्ताह के नामों को पद्धति के आधार पर निर्धारित किया गया है। सप्ताह के इन सात दिनों के नाम देवताओं के नामों के आधार पर रखे गए हैं। सूर्य वाले दिन को सुनानदेग या संडे (रविवार) कहा जाता है। चंद्रमा वाले दिन को मोननदेग या मंडे (सोमवार)। मंगल ग्रह के दिन को टिवैसदेग या ट्यूजडे (मंगलवार)। बुध के दिन को बौडेल या वैन्सडे (बुधवार), बृहस्पति के दिन को थौर या थर्सडे (बृहस्पतिवार), देवता शुक्र के दिन को फिग या फ्राइडे (शुक्रवार) और शनि के दिन को सैंटसंदिग या सैटरडे (शनिवार) कहा जाता है। इस प्रकार देवताओं के नाम पर आधारित सप्ताह के सात नाम काफी प्रचलित हुए और आज भी सारे विश्व में सप्ताह के सात दिनों के यही नाम प्रचलित हैं।

वारों का वैज्ञानिक क्रम

वस्तुत: अथर्ववेद के 'अथर्व ज्योतिष' में वारों के नाम का क्रम तथा वैज्ञानिक आधार मिलता है, जो कि हजारों वर्ष पुराना है, जबकि पश्चिमी देश वारों का प्रयोग मात्र दो हजार वर्षों से कर रहे हैं।

भारत ऋषि-मुनियों ने ठोस वैज्ञानिक आधार पर सप्ताह के चारों का क्रम निर्धारित किया है। पृथ्वी और सूर्य से घनिष्ठ संबंध रखने वाले सात ग्रहों की कक्षाओं के अनुसार सात वार निश्चित किए गए हैं, जो संपूर्ण विश्व में प्रचलित हैं। वस्तुत: वार शब्द (वासर) दिन का ही संक्षिप्त रूप है। आज भी कई समाचार-पत्र रविवारीय अंक के स्थान पर रविवासरीय अंक लिखते हैं। एक अहोरात्र (दिन-रात) एक वासर अर्थात् एक दिन होता है। अहोरात्र से ही होरा शब्द लिया गया है, जो कालमान की एक छोटी इकाई है। होरा एक अहोरात्र का २४वाँ भाग होता है, जिसे अंग्रेजी में ऑवर्स कहते हैं।

दिन-रात्रि में २४ घंटे होते हैं। अत: एक होरा एक घंटे अथवा २½ घटी के बराबर होती है। इसी होरा से वारों की गणना प्रारंभ हुई। यह उल्लेखनीय है कि भारतीय ज्योतिष में संपूर्ण गणना पृथ्वी को केंद्र मानकर की गई है, जबकि वास्तव में सौर परिवार का केंद्र सूर्य है, जिसके चारों और अपनी-अपनी कक्षाओं में पृथ्वी सहित सभी ग्रह परिक्रमण करते है। परंतु भारतीय ज्योतिष दृश्य स्थिति को स्वीकारता है। पृथ्वी से देखने पर विभिन्न राशियों में से अन्य ग्रहों की भाँति सूर्य भी परिक्रमण करता हुआ प्रतीत होता है। अत: सूर्य को भी ज्योतिष विज्ञान में एक ग्रह माना गया है। अंतरिक्ष में ग्रहों की कक्षाओं की वास्तविक स्थिति इस प्रकार है—"सूर्य, बुध, शुक्र, पृथ्वी, मंगल, गुरु, शनि। वास्तव में यही कक्षा-क्रम सप्ताह के वारों के क्रम का आधार है।

अत: वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हमें हमारी काल गणना की पुरातन वैज्ञानिक संवत्सर परंपरा को पुन: जाग्रत् करना होगा और हमें हमारे जन्मदिन, पर्व, त्योहार, विवाह एवं प्रतिष्ठान की वर्षगाँठ, पूर्वजों की पुण्य तिथियों को भी भारतीय परंपरा अनुसार मनाना होगा, न कि अंग्रेजी दिनांक अनुसार। चैत्र शुक्ल प्रतिपदा ब्रह्माजी द्वारा सृष्टि रचना का प्रथम दिन, भगवान् राम के राज्याभिषेक का दिन, शक्ति उपासन का प्रथम दिन, आर्य समाज की स्थापना का दिन, डॉ. हेगेडवार का भी जन्म दिन होता है, अत: इन्हें हर्षोल्लास से मनाना चाहिए।

सा.अ.
हजारी चबूतरा, ब्रह्मपुरी
जोधपुर-३४२००१ (राज.)
दूरभाष : ९४१४४७८५६४
ddozha@gmail.com

गजलें

• विनोद प्रकाश गुप्ता 'शलभ'

: एक :

पीठ जब लगने को थी वो रहबर मुझको मिले,
पैकरों में ढल के वो शम्स-ओ-कमर मुझको मिले।

पार वो सब लग गए थी जिनसे सागर को गरज,
हर कदम पर ही नए गहरे भँवर मुझको मिले।

जिस तरफ को थी हवा हम थे अड़े उसके खिलाफ,
हौसलों के सामने सब बेअसर मुझको मिले।

भाषणों में घुल गए जो वो उजाले हैं कहाँ,
भाग्य में तो बस तिमिर गर्दो-सफर मुझको मिले।

मैं बजाहिर दोस्तों के ही निशानों पर रहा,
दुश्मनों की सफ में मेरे मो'तबर मुझको मिले।

गुलमुहर की चाह में दीवानगी हद से बढ़ी,
बन के यूँ बहरुपिए सब जलवागर मुझको मिले।

हूँ 'शलभ' पर्वत का बेटा फितरतें चट्टान सी,
जो मुखालिफ थे मेरे सब दर-ब-दर मुझको मिले।

: दो :

गाँव के हर झूठ सच का साक्षी पीपल हुआ,
देवता अंधे हुए 'ओझा' कवच-कुंडल हुआ।

जिंदगी ख्वाबों का ही बिस्तर बिछौना तो नहीं,
रास्ता काँटों का ये किसके लिए मखमल हुआ।

आस्तीनों में छुपे रहते हैं काले नाग बन,
हैं कहाँ अब दोस्त कोई जो शजर संदल हुआ।

मीडिया तो है तरंगित वक्ता जन सब चीखते,
इनके इस उन्माद से ही देश इक दंगल हुआ।

रक्त रंजित हो रहे हैं आपसी रिश्ते बहुत,
स्नेह के झरने हैं प्यासे जीवन अब मरुथल हुआ।

फूल शबनम तितलियाँ भँवरे चमन का बागबाँ,
कैद में है पत्ता-पत्ता हर नफस बेकल हुआ।

जब 'शलभ' ने हाथ थामा अपने तालिसमान का,
महका फिर किरदार उसका और गंगाजल हुआ।

: तीन :

तल्खियाँ सब दूर करने का असर पैदा किया,
हाँ, सुखन से धूप में भी गुलमोहर पैदा किया।

लग्जिशें भी जिंदगी के साथ ही चलती रहीं,
हर कदम पर हर नया फिर मो'तबर पैदा किया।

सुपरिचित गजलकार, कथाकार, लेखक व स्तंभकार। काव्य-संग्रह 'चारों दिशाएँ', काव्य अनुवाद 'उतरार्द्ध', गजल-संग्रह 'आओ नई सहर का नया शम्स रोक लें' तथा गजलें एवं कविताएँ अनेक पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर प्रकाशित।

बस उजालों से ही जीवन चक्र तो चलता नहीं,
संतुलन को ज़िंदगी के ही तिमिर पैदा किया।

देख मौला का करिश्मा चाह को हर शख्स की,
कुछ-न-कुछ तो हर बशर में इक हुनर पैदा किया।

अब तेरे रुखसार की चाँदी छुपाने के लिए,
इक नईं दुनिया नया शम्सो-कमर पैदा किया।

भूख रोटी नौकरी से त्रस्त हो वो चल पड़े,
मौत की जब आहटों ने ये हजर पैदा किया।

टूट जाएगा तिलिस्म ऐयारियों का ऐ 'शलभ',
हर हुकूमत के लिए इक काँचघर पैदा किया।

: चार :

कहीं इक हाथ तक उठता नहीं है,
कोई अब प्रश्न भी करता नहीं है।

मुझे वो आज ले कर जा रहे हैं,
किसी ने जाते भी देखा नहीं है।

हजारों तो समुंदर पी गए वो,
किसी का पेट ही भरता नहीं है।

पहाड़ों की व्यथा को कौन जाने,
जहाँ इक पेड़ भी उगता नहीं है।

सभी तो ख्वाब हैं सतरंगी बाबू,
जमीं पर एक भी फलता नहीं है।

बने युद्धों वबाओं में जो धन्ना,
कि इनका बाल तक बिगड़ा नहीं है।

रहोगे चुप तो फिर रोटी मिलेगी,
'हमें' भी फिर कोई चिंता नहीं है।

बहुत सच कहना सुनना है बगावत,
ये मीठा जहर अब पचता नहीं है।

तुझे! मोनालिजा मैं कैसे कह दूँ,
कफस से चेहरा तक दिखता नहीं है।

हो खेवनहार कोई 'ऐटलस' सा,
वो ब्रूटुस भी तो अब अपना नहीं है।

'शलभ' किस तीर से मारोगे इनको,
तेरे तो पास अँगूठा नहीं है।

'विनोद किरण' बी-८९/१, फेज-२
सेक्टर-३, न्यू शिमला-१७१००९
(हिमाचल प्रदेश)
दूरभाष : ९८१११६९०६९
vinjisha55@yahoo.co.in

रिश्तों की कड़ियाँ

● राकेश भ्रमर

पोता-पोती सुबह ही स्कूल चले गए थे। बेटा-बहू अभी-अभी ऑफिस के लिए निकले थे। अब वह फ्लैट में नितांत अकेली थीं। इसे वह काल-कोठरी कहती थीं। कहने को तो वह तीन कमरों का फ्लैट था, परंतु उन्हें काल-कोठरी से कम नहीं लगता था। बंद दरवाजों का फ्लैट, जहाँ केवल सूनापन था, कोई बोलने वाला नहीं, केवल सन्नाटा। जब तक पोता-पोती और बेटा-बहू लौटकर नहीं आते, उन्हें इसी काल-कोठरी में कैद रहना होगा, बिना बोले, बिना किसी को देखे। वह बाहर नहीं जा सकती थीं, क्योंकि वह इस महानगर के परिवेश और गली-कूचों से पूरी तरह अनभिज्ञ थीं। भीड़ उन्हें डराती थी।

पता नहीं यह कैसा शहर था, जहाँ कोई किसी से बात नहीं करता था। सभी बंद दरवाजों के अंदर रहते थे। बाहर निकलते थे, परंतु अजनबियों की तरह। सीढ़ी या लिफ्ट में भी लोग एक-दूसरे से बात नहीं करते थे। उन्होंने पड़ोस के फ्लैट्स के दरवाजे कभी खुले नहीं देखे। यों भी वह बाहर कहाँ निकलती थीं? सप्ताह में एक बार बेटा-बहू और बच्चे होटल में खाना खाने जाते थे, परंतु उन्हें साथ नहीं ले जाते थे। वह होटल से भी उनके लिए खाना लेकर नहीं आते थे। उन्हें या तो बासी खाना खाना पड़ता था, या वह स्वयं कुछ-न-कुछ अपने लिए बना लेती थीं। गनीमत थी कि उन्हें गैस जलानी आती थी। आजकल गाँव-कस्बों में भी गैस आ गई है।

वह केवल पाँच या छह बार फ्लैट से बाहर गई थीं, वह भी बेटे के साथ। वह उन्हें अस्पताल लेकर गया था, उन्हें खाँसी और बलगम की शिकायत थी। उसी के इलाज के लिए बेटा उसे मुंबई लेकर आया था। टी.बी. की आशंका थी, परंतु ऐसा कुछ नहीं निकला था। सर्दी के कारण उनके सीने में बलगम जमा हो गया था। अब ठीक थीं।

शरीर से ठीक थीं, परंतु मन से कहाँ ठीक थीं? कहाँ गाँव का जीवन, सबकुछ खुला-खुला···आसमान की तरह साफ हँसते-मुसकराते चेहरे, एक-दूसरे से बतियाते लोग, सुख-दुःख में काम आते लोग, खेतों की असीमित हरियाली, हरे-भरे लहराते-झूमते पेड़-पौधे और खुशी में फैली मिट्टी, फूल और पौधों की खुशबू, जिसे सूँघकर आदमी की उम्र दस वर्ष बढ़ जाती है।

और यहाँ शहर में वह जैसे जेल में बंद होकर रह गई थीं। खुला वातावरण तो छोड़िए, यहाँ उन्हें खुलकर साँस लेने की भी आजादी नहीं थी। उनसे कोई बात करने वाला तक नहीं था। जब घर में सब होते, तब भी कोई उनसे बात नहीं करता था। बेटा भी नहीं, बहू ने तो जैसे उनसे बात न करने की कसम खा रही थी। पास-पड़ोस तो जैसे यहाँ था ही नहीं। वह बात करतीं तो किससे? सारा दिन किसी से बात किए बिना कोई मनुष्य कैसे सुखी रह सकता है?

कहने को यह उनके बेटे का घर था, परंतु इसमें सबकुछ होते हुए भी परिवार कहाँ था? पोती और पोता दस और सात साल के थे, परंतु दादी से उनका कोई लगाव नहीं था। पहले बच्चे दादी-नानी से रातों को किस्से-कहानी सुनते थे, परंतु अब जमाना बदल गया था। घर के बच्चे ज्यादातर समय होमवर्क में व्यस्त रहते थे। इससे समय बचता था, तो या तो टी.वी. देखते रहते थे या फिर मोबाइल और टैबलेट में गेम्स खेलते रहते थे। दादी के बुलाने पर भी उसके पास नहीं आते थे। अपने पोता-पोती के बीच वह कितनी अकेली और असहाय थीं।

और बेटा निशांत तो जैसे उनका बेटा ही नहीं था। दिन में एक बार भी उनका हाल-चाल नहीं पूछता था। बहू तो उसकी जन्म की दुश्मन थी। शादी के बाद से ही उन दोनों में कभी नहीं बनी। वह बनाना चाहती थीं, परंतु बहू उनसे बात नहीं करती थी। वह कैसे उसे समझातीं कि वह उनकी दुश्मन नहीं है, बहू है। आधुनिक शिक्षा क्या हमें यही संस्कार देती हैं कि नई पीढ़ी बुजुर्गों को उनके आदर-सम्मान से वंचित कर दे। शारदा इस बात से दुखी रहती थीं कि बहू कभी तो उन्हें अपनी सास समझे, कभी तो उनसे बात करे, जिससे उन्हें लगे कि यह उनका घर-परिवार है। उनका बड़ा मन करता था कि पोता-पोती के साथ खेलकर अपने मन को बहलाएँ, परंतु वह उनसे दूर ही रहते थे। बहू पोता-पोती को रोकती होगी, तभी तो वह बुलाने पर भी उनके पास नहीं आते थे।

जाने-माने साहित्यकार। 'जंगल बबूलों के', 'हवाओं के शहर में' (गजल-संग्रह), 'उस गली में' (उपन्यास), 'अब और नहीं' (कहानी-संग्रह)। 'प्राची' पत्रिका का संपादन। पत्र-पत्रिकाओं में सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। दूरदर्शन लखनऊ तथा आकाशवाणी रामपुर, जबलपुर और मुंबई से रचनाओं का प्रसारण। संप्रति केंद्र सरकार में अधिकारी।

फ्लैट में बॉलकनी थी, परंतु वह वहाँ कभी नहीं बैठती थी। उनका फ्लैट तेईसवीं मंजिल पर था और वह जब भी नीचे की तरफ देखतीं तो उन्हें इतना डर लगता, जैसे बॉलकनी से नीचे गिरकर पाताल लोक में समा जाएँगी।

घर में उनके लायक कोई काम नहीं था। वह अपने कमरे में लेटी-लेटी विगत जीवन की घटनाओं पर विचार करती रहतीं। टी.वी. भी नहीं चलाती थीं। डरती थीं, कहीं कुछ खराब हो गया तो बहू आसमान सिर पर उठा लेगी और उनको एक दिन भी घर में नहीं रहने देगी। यों तो वह इस घर में रहना भी नहीं चाहती थीं। यहाँ उनका दम घुटता था। परंतु करें तो क्या करें। बेटा उन्हें गाँव छोड़ आने को तैयार नहीं था। कहता था, ''अभी कंपनी में काम बहुत है। छुट्टी नहीं मिलेगी। बाद में छोड़ आऊँगा।''

वह मुंबई नहीं आना चाहती थीं। खाम-ख्वाह उनकी छोटी बहन ने अंशुल को फोन कर दिया था। तभी वह माँ को लेने गाँव आया था, वरना उसे माँ की कहाँ परवाह थी। रिश्तेदारी में नाक न कटे, इसकी परवाह करता था। मुंबई लाकर भी उसने कौन सा माँ का खयाल रखा था—सबके रहते हुए भी वह अकेली थीं। दो बातें करने के लिए तरसती थीं। अब उनकी खाँसी ठीक थी और वह गाँव जाना चाहती थीं, परंतु बेटे को अभी फुरसत नहीं थी।

मन जब ऊबता है तो बीते दिनों की याद आती है। वह एकांत कमरे में बैठी अपने जीवन के सुखद पलों की याद में खो गईं। उनके परिवार में तब तक सब ठीक था, जब तक बेटे अंशुल की शादी नहीं हुई थी। वह स्वयं एक सरकारी पाठशाला में टीचर थीं और पति सुजीत तहसीलदार के ऑफिस में क्लर्क। बेटा इंजीनियर बनकर जब मुंबई की एक कंपनी में लग गया तो स्वाभाविक तौर पर हर माँ-बाप की तरह शारदा और सुजीत को भी बेटे को शादी की चिंता सताने लगी। अंशुल की तरफ से कोई प्रतिरोध नहीं था।

शारदा और सुजीत पहले पुश्तैनी गाँव में रहते थे, परंतु उनकी सोच आधुनिक थी। बेटे की पढ़ाई अच्छी तरह से हो सके, इसलिए उन्होंने गाँव के पास के कस्बे में एक मकान बनवा लिया था। वहीं एक अच्छे पब्लिक स्कूल में उसका दाखिला करवा दिया था। बाद में वह उच्च शिक्षा के लिए शहर चला गया था। उसने एम.टेक. किया था।

शारदा और सुजीत ने बेटे के लिए इंजीनियर लड़की ही पसंद की; ताकि बेटे-बहू की जिंदगी सहज-सरल और सुचारू रूप से समानांतर पटरियों पर दौड़ती रहे। वह शादी के पहले नोएडा में जॉब कर रही थी। अब मुंबई में ही कोई कंपनी ज्वॉइन कर ली थी। बहू सुचिता सुंदर थी, सुशिक्षित थी, परंतु वह अति आधुनिक भी थी, पर उसमें संस्कारों का अभाव था। उसका स्वभाव शादी के बाद खुला था। पहले तो उसकी खूबसूरती और शिक्षा ही देखी गई थी। सभी को वह पसंद आई थी। अंशुल और सुचिता की शादी हो गई।

शादी''हनीमून और फिर जीवन अपने ढर्रे पर लौटने लगा। दोनों ने कुछ दिन माता-पिता के साथ कस्बे में भी बिताए, परंतु सुचिता को वहाँ रहना बिल्कुल पसंद नहीं था। किसी-न-किसी बात को लेकर रोज वह बखेड़ा खड़ा कर देती। सास से लड़ती। शारदा उसकी बात का ज्यादा जवाब नहीं देती। सोचती, शहर की है, इसलिए कस्बेनुमाँ गाँव का जीवन उसे रास नहीं आ रहा। बाद में सब ठीक हो जाएगा, परंतु वैसा कुछ नहीं हुआ। वह सीधे-सादे सुजीत से भी लड़ने लगी थी। जब सुचिता बोलती, सुजीत बेचारगी से बस अंशुल का चेहरा देखते रह जाते। अंशुल किसी का पक्ष नहीं लेता, परंतु उसका मौन सुचिता की उद्दंडता को बढ़ावा ही दे रहा था। यह बात माँ-बाप को खल जाती। बहू के सुंदर होने का अर्थ यह नहीं था कि वह नाजायज सभी को दबा लेगी।

अंशुल की छुट्टियाँ समाप्त होने के पहले ही सुचिता ने म्यान से तलवार खींच ली—''क्या मुझे इसी घर में रखने के लिए ब्याहकर लाए थे?''

अंशुल ने हैरानी से कहा, ''क्यों, यहाँ क्या परेशानी है? यह हमारा घर है।''

''यह तुम्हारे माँ-बाप का घर हो सकता है, परंतु मेरी ससुराल नहीं। मेरा घर वह है, जहाँ तुम रहते हो। मुझे मुंबई ले चलो। यहाँ मेरा दम घुटता है।''

''अभी छुट्टियाँ बाकी हैं!''

''तो क्या छुट्टियों के नाम पर इस गाँव में सड़ते रहेंगे। कहीं और नहीं जा सकते?''

अंशुल पत्नी की परेशानी समझ गया। सुचिता लखनऊ में पली-बढ़ी थी। गाँव के जीवन की आदी नहीं थी। हालाँकि उसके घर में सारी सुख-सुविधाएँ थीं। बस बड़े शहर की तरह घूमने की आजादी नहीं थी। सुचिता आजादी चाहती थी। पता नहीं वह क्यों सुचिता को समझाना नहीं चाहता था या सुचिता में उसे ऐसा क्या पसंद आ गया था कि पत्नी के लिए वह माँ-बाप की बेइज्जती भी बर्दाश्त करने के लिए तैयार था, परंतु सुचिता को नाराज करने का जोखिम नहीं उठा सकता था।

उसने माँ-बाप से आज्ञा भी नहीं ली। बस इतना ही कहा कि हम लोग मुंबई जा रहे हैं। यहाँ सुचिता का मन नहीं लग रहा है। शारदा और सुजीत क्या कहते? वह तो पहले ही सुचिता के व्यवहार से परेशान और तंग थे। रोकने का मन होते हुए भी नहीं रोका और अंशुल सुचिता को लेकर मुंबई चला गया था।

तब से आज तक लगभग पंद्रह साल बीत गए थे, परंतु सुचिता ने गाँव का रुख नहीं किया था। हर साल बच्चों के साथ अपने मायके लखनऊ जाती थी, परंतु मात्र साठ किलोमीटर दूर अपनी ससुराल नहीं जाती थी। आधुनिक बहुओं की सोच को क्या कहा जाए। वह अपने ससुर की मृत्यु पर भी गाँव नहीं गई थी। अंशुल अकेला गया था। सुजीत की तेरहवीं की औपचारिकताएँ पूरी होने के बाद सगे नाते-रिश्तेदारों ने अंशुल से पूछा, ''अब तो माँ को अपने साथ ही रखो।''

अंशुल के मन में सुचिता का चेहरा आकर बैठ गया। जिस प्रकार का उसका व्यवहार था, वह अपनी सास से एक पल भी निभा नहीं सकती थी। वह नहीं चाहता था, उसके जीवन में कलह के ग्रह उत्पन्न हों। बोला, ''अभी माँ स्वस्थ हैं। अपने को सँभाल सकती हैं। मुंबई का जीवन उन्हें रास नहीं आएगा। उन्हें यहीं रहने दो। बाद में अगर उनका मन होगा, तो लेने चला आऊँगा।'' उसने शारदा के मन की सुनी भी नहीं और अपना

निर्णय सुना दिया। अच्छा ही हुआ। शारदा से पूछता तो वह भी मना कर देतीं। सुचिता के साथ बिताए गए दिन उन्हें अच्छी तरह याद थे। उनकी कटुता अभी तक उनके मन से दूर नहीं हुई थी। वह नहीं चाहती थीं कि वैसे ही दु:स्वप्न भरे दुर्दिनों से फिर उनका सामना हो।

रिश्तेदार कुछ कहते, इसके पहले ही शारदा बोल पड़ी, ''बेटा, तुम्हें मेरे बारे में कुछ सोचने और करने की आवश्यकता नहीं है। मैं सब प्रकार से सक्षम हूँ। तुम अपना परिवार सँभालो और सुखी रहो। मैं यहाँ आराम से रह लूँगी।''

अंशुल सिर झुकाए बैठा था। शारदा उसके मन की बात समझती थी। वह उसके सुखी परिवार में आग नहीं लगाना चाहती थी। शारदा के मन में सुचिता के प्रति कोई दुर्भाव नहीं था। वह अपनी ससुराल नहीं आती थी, इससे भी उन्हें कोई गिला नहीं था। ठीक है, उसे गाँव का जीवन रास नहीं आता था, इसलिए वह ससुराल नहीं आती थी, परंतु ससुर के मरने पर भी न आए, यह तो संवेदनहीनता की पराकाष्ठा थी। एक दिन के लिए ही आ जाती, तो क्या उसके हाथ-पैर टूट जाते। उसके नहीं आने से नाते-रिश्तेदारों को बातें बनाने का मौका मिल गया था। सास का व्यवहार बहू के प्रति ठीक नहीं होगा, इसीलिए नहीं आई होगी। सभी यही समझ रहे थे।

दबे-घुटे स्वरों में शारदा को इतनी कड़वी बातें सुनने को मिलीं कि बहू के प्रति उनका मन खट्टा हो गया और मन-ही-मन तय कर लिया था कि मरते दम तक वह बहू का मुँह नहीं देखेगी, परंतु समय की किताब में तो कुछ और ही लिखा था।

एक साल पहले शारदा को सर्दी ने ऐसा जकड़ा कि खाँसी ने उनके शरीर में स्थायी रूप से घर बना लिया। सामान्य इलाज के बाद भी जब उनकी खाँसी ठीक नहीं हुई तो उन्होंने डॉक्टर को दिखाया। उसने भी सामान्य सी दवाइयाँ लिख दीं, परंतु खाँसी ने उनका साथ न छोड़ा। यह कैसी विडंबना है कि बुढ़ापे में सगे-संबंधी मनुष्य का साथ छोड़ जाते हैं, परंतु बीमारियाँ स्थायी रूप से शरीर के अंदर घुसकर बैठ जाती हैं।

घरेलू नुस्खों और कस्बे के डॉक्टर की दवाइयों से भी जब शारदा की खाँसी ठीक नहीं हुई, तो वह उसे बुढ़ापे की बीमारी मानकर चुप बैठ गईं, परंतु उनकी छोटी बहन कौशल्या उनसे मिलने आती रहती थी। उसी ने सलाह दी कि बेटे के पास मुंबई चली जाएँ।

''इतनी छोटी सी बात के लिए इतनी दूर मुंबई क्या जाना? अपने आप ठीक हो जाएगी।''

''दीदी, आप एक शिक्षिका थीं और इस बात को मामूली कहकर टाल रही हैं। खाँसी ज्यादा दिन तक रहे, तो टी.बी. बन जाती है। आपको बेटे से कहने में संकोच हो रहा हो, तो मैं बात करती हूँ।'' फिर उन्होंने तुरंत अंशुल को फोन मिलाया। औपचारिक बातों के बाद कौशल्या ने कहा, ''अंशुल, माँ-बाप के प्रति भी तुम्हारा कोई कर्तव्य है, इसकी तरफ कभी ध्यान दिया है।''

''क्या हुआ मौसी?'' उधर से अंशुल ने पूछा।

''तुम कभी ध्यान दोगे, तभी न पता चलेगा। यह मत भूलो कि तुम भी दो बच्चों के पिता हो और एक दिन तुम भी बूढ़े होगे।''

अंशुल की आवाज दूसरी तरफ से नहीं आई, तो कौशल्या ने आगे कहा, ''यहाँ तुम्हारी बूढ़ी माँ अकेली मर रही है। कभी तो आकर उनकी खैर-खबर ले लेते। इतने गैर तो दुश्मन भी नहीं होते।''

''मम्मी को क्या हुआ?'' उसने जैसे फर्ज अदायगी के लिए पूछ लिया। उसकी आवाज में उपेक्षा का भाव था। कौशल्या को बुरा लगा।

''मैं कुछ नहीं बताऊँगी, तुम खुद आकर पता करो। बस इतना बता देती हूँ कि दीदी बहुत बीमार हैं। तुम उनके बेटे हो, अगर तुम ही उनका खयाल नहीं करोगे तो और कौन करेगा। रिश्तेदार केवल नसीहत देने के काम आते हैं, समझे?''

पता नहीं, यह कौशल्या की बातों का असर था या अंशुल की आत्मा ने उसे झकझोरा था, अगले ही हफ्ते वह माँ को लेने का गया था। घर पहुँचते ही उसने कहा था, ''मम्मी, यहाँ रहकर आपका इलाज करवाना और देखभाल करना मेरे वश में नहीं है। आप मेरे साथ मुंबई चलिए, वहीं डॉक्टर को दिखा दूँगा।''

और इस प्रकार बेमन से ही सही, शारदा मुंबई आ गई थीं। उनका इलाज भी हो गया था। अब वह गाँव वापस जाना चाहती थीं, परंतु बेटे को छुट्टी नहीं मिल रही थी या वह जान-बूझकर टाल रहा था। हालाँकि सच तो यही था कि उसे छुट्टी नहीं मिल रही थी, वरना सुचिता तो उसे एक मिनट भी अपनी आँखों के सामने बरदाश्त नहीं कर सकती थी। वह उन्हें कब की गाँव भेज देती।

वह मुंबई में रह भी लेतीं, अगर बहू उनसे ढंग से बात करती, पोता-पोती उनके साथ खेलते, उनसे बात करते; परंतु अपनों के बीच मौन धरण करके परायों की तरह रहते हुए वह कैसे खुश रह सकती थीं। पराए लोग भी आपस में बात कर लेते हैं, परंतु यहाँ तो सभी ने जैसे मौन धारण करने की घुट्टी पी रखी थी। वह मन-ही-मन घुटती थीं, परंतु मन की व्यथा किसी से नहीं कह सकती थीं। दिन के समय उस सूने वीरान फ्लैट में उनके सिवा और था कौन? बाहर भी जातीं तो किसके पास? किससे अपना दुखड़ा रोतीं।

जब घुटन ज्यादा बढ़ गई तो एक दिन फिर उन्होंने बेटे से कहा, ''बेटा, मेरा मन यहाँ नहीं लगता। मुझे गाँव छोड़ आओ।'' उनके स्वर में अनुनय-विनय नहीं, बल्कि रूखेपन का भाव था।

अंशुल सुचिता के साथ डाइनिंग टेबल पर बैठा था। अभी-अभी नाश्ता किया था। सुचिता अभी नाश्ता कर रही थी। वह अखबार देख रहा था। माँ की बात पर सिर उठाकर देखा। माँ एक कोने में खड़ी थीं। उनका चेहरा आवेग से तमतमा रहा था। वह माँ की परेशानी समझता था, परंतु उसकी भी मजबूरी थी। वह धीरे से बोला, ''अगले महीने विवान का बर्थडे है। उसके बाद छोड़ आऊँगा।''

शारदा के कुछ कहने के पहले ही सुचिता बोल पड़ी, ''तब तक

यहाँ रहकर क्या करेंगी। वैसे भी विवान के बर्थडे में इनका क्या काम? छोड़ आइए न, तीन दिन का नुकसान ही सही।'' उसके स्वर में हिकारत और गुस्सा भरा था।

शारदा के दिल में जैसे किसी ने घूँसा मार दिया हो। उन्होंने आहत भाव से बहू को देखा और फिर अंशुल को। वह सिर नीचा करके अखबार पढ़ने का बहाना कर रहा था। शारदा ने अपने आपको बहुत अपमानित महसूस किया। क्या बहू की निगाह में उनका महत्त्व किसी गंदे कीड़े से भी कम था?

सच है, पोते के बर्थडे में दादी का क्या काम? यह आधुनिक शिक्षा का असर था कि हम अपनी संस्कृति और संस्कारों से विमुख होते जा रहे हैं। पारिवारिक रिश्ते महत्त्वहीन हो गए हैं। सभी व्यक्तिवादी हो गए हैं। सबकी आँखों में भौतकवाद की चमक है। अर्थवाद की दौड़ में रिश्तों के प्रति लोगों का मोह समाप्त हो गया है।

एक शिक्षिका होने के नाते शारदा ने जीवन भर दूसरों को अच्छाई का पाठ पढ़ाया था। पूरी कोशिश की कि बेटे को भी अच्छे संस्कार दे सकें। परंतु लगता है, वह अपने अनुष्ठान में असफल हो गईं। बेटे के हृदय में माँ के प्रति कोई लगाव नहीं था। उसकी सोच के दायरे में केवल पत्नी और उसके बच्चे थे। धन और वैभव था, सुख था, परंतु अपनों के प्रति कोई चाह नहीं थी। रिश्ते उनके लिए बेमानी थे। फिर वही क्यों रिश्तों का मान रखे?

अगले दिन सबके जाते ही शारदा ने अपने मन को कड़ा किया और फ्लैट को बंद कर बिल्डिंग के नीचे आईं। नीचे उतरकर वह कुछ देर तक गेट के सामने खड़ी रहीं, जैसे दुविधा में हों कि क्या करें, क्या न करें? शारदा इधर-उधर देख रही थीं। कोई दिखाई दे तो उससे कुछ पूछें। तभी बिल्डिंग का चौकीदार उनके पास आया, ''माँ जी, कुछ ढूँढ़ रही हैं? कहीं जाना है आपको?'' उसने पूछा।

शारदा ने पूछा ''यहाँ कहीं पास में कोई रेलवे स्टेशन है, जहाँ से लखनऊ का रिजर्वेशन होता हो।''

''आप लखनऊ की रहने वाली हैं?'' चौकीदार ने जिज्ञासावश पूछा।

''हाँ, तुम भी वहीं के लगते हो।'' बातचीत से शारदा समझ गई थीं।

''हाँ माँजी, मैं उन्नाव जिले का रहनेवाला हूँ।''

''तब तो तुम हमारे गाँव के ही हो। भैया, मेरा एक काम कर दोगे?'' उन्होंने करुण स्वर में कहा।

''हाँ माँजी, बताइए।''

''मुझे लखनऊ का रिजर्वेशन करवाना है।''

''कब का?''

''जिस दिन का भी कन्फर्म मिल जाए, परंतु जल्दी...''

''ठीक है, मैं करवा दूँगा। आजकल तो साइबर कैफे से भी रिजर्वेशन हो जाता है। लखनऊ के लिए सबसे अच्छी ट्रेन पुष्पक एक्सप्रेस है। उसी में करवा दूँगा।''

चौकीदार की मदद से शारदा का रिजर्वेशन पुष्पक एक्सप्रेस में हो गया था। पाँच दिन बाद का टिकट मिला था। यात्रा वाले दिन से एक दिन पहले शाम को उन्होंने अपने कपड़े-लत्ते बैग में भर लिये, फिर अंशुल से कहा, ''कल मैं गाँव जा रही हूँ।''

जैसे आस-पास कोई धमाका हुआ हो। अंशुल ने चौंककर शारदा को देखा, ''किसके साथ?'' सुचिता भी पास बैठी थी, परंतु उसने कुछ कहा नहीं।

''अकेले!''

''अकेले कैसे जाओगी इतनी दूर?''

''क्यों, क्या इस संसार में कोई अकेले यात्रा नहीं करता। मैं पढ़ी-लिखी हूँ। रिजर्वेशन करवा लिया है। चली जाऊँगी।''

''रिजर्वेशन किसने करवाया?'' अंशुल को और अधिक आश्चर्य हुआ।

''यह सब क्यों पूछते हो? तुम्हारे पास तो मुझसे बात करने की भी फुरसत नहीं है। बहू मुझे अपना दुश्मन समझती है। पोता-पोती मुझसे ऐसा व्यवहार करते हैं, जैसे मैं इस घर की नौकरानी से भी गई-गुजरी हूँ।'' शारदा के स्वर में भारीपन आ गया था। वह रुआँसी हो गई थीं।

अंशुल और सुचिता सन्न से बैठे थे, जैसे उनकी जबान तालू से चिपककर रह गई थी। भावनाओं के अतिरेक में शारदा का गला भर आया। वह आगे कुछ न कह सकीं। भागकर अपने कमरे में गईं और बिस्तर पर गिरकर रोने लगीं। आज उन्हें पति की बहुत याद आ रही थी। पति होते तो क्या वह इतना असहाय होतीं। जीवन में पति-पत्नी का रिश्ता ही सबसे मजबूत और अनमोल होता है। बाकी सारे रिश्ते अपने होते हुए भी पराए हो जाते हैं। उस रात फिर किसी ने शारदा से बात नहीं की। शायद वह शारदा को रोकना नहीं चाहते थे। वह किसी के काम में दखल नहीं देती थीं, किसी को परेशान नहीं करती थीं, फिर भी उनका वहाँ रहना किसी को पसंद नहीं आ रहा था। ऐसे विषैले माहौल में वह रह भी कैसे सकती थीं?

दूसरे दिन सुबह छह बजे वह तैयार हो गई थीं। आठ बजे की गाड़ी थी। उन्होंने देखा कि अंशुल और सुचिता ड्राइंगरूम में बैठे थे। वह निकलते हुए बोली, ''मैं जा रही हूँ।''

''मैं स्टेशन तक चलता हूँ।'' अंशुल ने खड़े होते हुए कहा।

शारदा के चेहरे पर एक विद्रूप मुसकराहट तैर गई। मन की भड़ास निकालते हुए उन्होंने कहा, ''नहीं बेटा, मैं अभी अपंग नहीं हूँ। चली जाऊँगी। मुझसे अधिक तुम्हारी पत्नी और बच्चों को तुम्हारी जरूरत है। उनके साथ खुश रहो। लेकिन बेटा इतना याद रखना—पत्नी और बच्चे तो सबके लिए महत्त्व रखते हैं, परंतु इतना नहीं कि कोई अपने माँ-बाप को दिल से दूर कर दे, इतनी दूर कि वह कभी पास न आ सकें। तुम भी बाप हो और एक दिन तुम्हारा बेटा भी बड़ा होगा। वर्तमान में भविष्य छिपा होता है। परंतु तुम अभी यह नहीं समझोगे। समय के साथ लोग कैसे एक-दूसरे से दूर हो जाते हैं, यह समय ही बताता है। तुम मेरे बेटे होते हुए भी आज मुझसे दूर हो गए हो। वैसे तुम हम सबसे दूर तो तभी हो गए थे, जब शादी के बाद से तुमने हमारी खोज-खबर लेनी बंद कर दी थी और अब यहाँ आने के बाद मैं अच्छी तरह समझ गई कि तुम तो मेरे कभी थे

ही नहीं। अपनों के बीच इतना परायापन। काश, तुम सब मेरे अपने नहीं होते, तो इतना दु:ख नहीं होता।''

वह फिर भावुक हो गई थीं। इसके पहले कि उनके आँसू निकलते, वह बैग उठाकर बाहर निकल गईं। बिल्डिंग से नीचे आकर उन्होंने टैक्सी के लिए इधर-उधर देखा। वहीं चौकीदार फिर उनकी मदद के लिए आगे आया। वह बाहर से उनके लिए टैक्सी ले आया। वह टैक्सी में बैठकर सी.एस.टी. स्टेशन के लिए प्रस्थान कर गई।

गाँव पहुँचकर शारदा को लगा, जैसे वह एक लंबी कैद के बाद आजाद होकर घर पहुँची हों। बहुत दिनों बाद उन्होंने खुली हवा में साँस ली थी। उनके जीवन में नई स्फूर्ति और नई ऊर्जा आ गई थी। पड़ोसियों से मिलकर उन्हें लगा, वह फिर से अपनों के बीच आ गई हैं। अपने वही होते हैं, जो निस्स्वार्थ भाव से आपसे बात करते हैं, प्रेम करते हैं और आपके सुख-दु:ख में काम आते हैं।

मुंबई की घुटन से उबरते ही उन्होंने जीवन के शेष दिनों के बारे में गंभीरता से सोचना आरंभ किया। बेटा, बहू और पोता-पोती उनके लिए पराए हो गए थे। वह उनके लिए एक महत्त्वहीन जानवर के समान थीं। यह बात उनके लिए इतनी दु:खदायी थी कि उन्हें अपना जीवन व्यर्थ लगने लगा था। अपने जीवन में उन्होंने क्या कमाया और क्या संचित किया? बस धन और संपत्ति! रिश्ते तो उनके अपने न रहे। अब इस धन-संपत्ति का क्या करें? बेटों के लिए अगर वह महत्त्वहीन थीं, तो वह अपनी और अपने पति की कमाई भी बेटे के लिए छोड़कर क्यों मरें? इसका कोई और अच्छा उपयोग हो सकता था। इस बात पर वह कई दिनों तक मनन करती रहीं और अंत में अपनी बहिन कौशल्या से सलाह-मशविरा करके उन्होंने एक कड़ा निर्णय लिया। एक वकील के माध्यम से उन्होंने अपनी वसीयत बनवाई और उसे रजिस्टर्ड करवा लिया।अब वह बिना किसी चिंता के अपना जीवन व्यतीत कर रही थीं। उनका जीवन अकेले होते हुए भी सुखमय था। इस बीच अंशुल ने उनकी कोई खोज-खबर नहीं ली थी।

कई महीने बाद अंशुल को माँ की तरफ से रजिस्टर्ड डाक से एक पत्र प्राप्त हुआ। उसमें माँ द्वारा तैयार की गई वसीयत की फोटो कॉपी के साथ एक छोटा-पत्र भी था। उस पत्र में लिखा था—

''बेटे अंशुल, बहुत-बहुत प्यार! मुंबई से मैं सकुशल पहुँच गई हूँ। यहाँ लौटने के बाद मैंने एक निर्णय लिया है। तुम्हें अच्छा तो नहीं लगेगा, परंतु रिश्तों की कड़ियाँ जब कमजोर होकर टूटने लगें, तो मजबूरन मनुष्य को ऐसे निर्णय लेने पड़ते हैं। मैंने भी तुमसे सलाह लिए बिना यह निर्णय लिया है। मैं अच्छी तरह जान गई हूँ कि तुम्हें मेरी जरूरत नहीं है। ऐसी अवस्था में तुम्हें मेरी संपत्ति से भी कोई वास्ता नहीं होगा, अतएव पैतृक संपत्ति को छोड़कर मैंने अपनी और अपने पति की अर्जित की हुई सारी संपत्ति तथा धन एक चैरिटेबल ट्रस्ट को दान कर दिया है। पैतृक संपत्ति के तुम वारिस हो, उस पर तुम्हारा अधिकार है। जब चाहे लेने आ जाना। मेरी मृत्यु तक मैं अपने बनाए घर में रहूँगी। मेरी मृत्यु के बाद यह भी ट्रस्ट को चला जाएगा। मेरा गुजारा मेरी पेंशन से हो जाएगा। तुमको मेरे लिए कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। तुम अपने परिवार के साथ खुश रहो, यही कामना करती हूँ।''

पत्र मिलते ही अंशुल, पत्नी और बच्चों के साथ गाँव आया, परंतु शारदा ने उनके लिए अपने घर का दरवाजा नहीं खोला। उन्होंने साफ कह दिया कि वह किसी का मुँह नहीं देखना चाहतीं। उनके बीच अब ऐसी कोई कड़ी नहीं बची, जो सबको जोड़ सके। उन्होंने किसी को पानी तक के लिए नहीं पूछा और सबको बाहर का रास्ता दिखाकर अंदर से दरवाजा बंद कर लिया। रात भर शारदा को नींद नहीं आई। अतीत की यादों ने उन्हें सोने नहीं दिया।

दूसरे दिन सुबह जब उन्होंने घर का दरवाजा खोला तो देखा कि बेटा, बहू और पोता-पोती दरवाजे के बाहर ही नंगी जमीन पर सोए थे। शारदा का जी धक्क से रह गया। कई क्षणों तक उनकी समझ में न आया कि क्या करें? यह क्या कर डाला उन्होंने? गुस्से के अतिरेक में उन्होंने अपने ही सगों के लिए घर का दरवाजा बंद कर दिया था और रात भर उन्हें खुले आसमान के नीचे नंगी जमीन पर भूखे-प्यासे सोने के लिए मजबूर कर दिया था। इतनी निष्ठुर और कठोर वह कैसे हो गईं। वह एक शिक्षिका ही नहीं, माँ भी थीं। माँ अपने बच्चों के प्रति इतनी कठोर कैसे हो सकती है?

यह सच था कि बेटा और बहू का व्यवहार उनके प्रति ठीक नहीं था, परंतु उन्होंने खुद क्या किया है? वह भी तो उन्हीं के जैसी हो गईं। उनमें और बेटा-बहू में क्या अंतर रहा? कुछ भी तो नहीं, सोचकर उनका मन आत्मग्लानि से भर गया। काँपते हाथों से उन्होंने अंशुल को जगाया, ''बेटा, उठो!'' वह हड़बड़ाकर उठा। खटपट होते ही सुचिता भी उठकर बैठ गई।

शारदा ने रुआँसी आवाज में कहा, ''बेटा, मुझे माफ कर दो। नफरत और गुस्से में मैं अपना विवेक खो बैठी। मैं इस सत्य को नहीं समझ पाई कि बेटा-बहू चाहे हमसे कितनी दूर हों जाएँ, परंतु हम उनसे दूर नहीं हो सकते। चलो उठो, घर के अंदर चलो।''

उन्होंने लपककर पोता-पोती को गोदी में भर लिया। दोनों बड़े थे, परंतु पता नहीं कहाँ से उनमें इतनी शक्ति आ गई कि उन दोनों को अपनी बगल में दबाकर उठा लिया। अंदर लाकर उन्हें पलंग पर लिटा दिया और फिर सुबककर रोने लगीं।

तब तक अंशुल और सुचिता भी सामान उठाकर घर के अंदर आ गए थे। उन दोनों ने माँ के पैर छुए और कहा, ''मम्मी, हमें माफ कर दो। आधुनिकता की चमक में हम भी रिश्तों को भूल गए थे।''

शारदा की हिचकी फूट पड़ी। वह जोर-जोर से रोने लगीं। बिना कुछ बोले उन्होंने दोनों को अपने सीने से लगा लिया।

किसी को कुछ कहने की आवश्यकता नहीं थी। रिश्तों की कड़ियाँ फिर से जुड़ गई थीं।

सा.अ.

२८, तीसरा तल, गली नं. ११, प्रताप नगर,
मयूर विहार-I, दिल्ली-११००९१
दूरभाष : ९९६८०२०९३०

शीत-रात का अनुराग

● **अंजीव अंजुम**

रात के एक बजे ट्रेन ने पेंड्रा रोड स्टेशन पर उतारा। अनजाने मुझे और सुनील को शीत का आभास तब हुआ, जब हम प्लेटफॉर्म पर उतरे। कोच की गरमी में बाहर की ठंडक का थोड़ा भी अंदाजा हमें नहीं था। अपने शहर में जहाँ हम गरमी की गुनगुनाहट छोड़कर आए थे, वहीं मध्य प्रदेश के सिरमौर अमरकंटक के नजदीकी कस्बे में वह गरमी गरम लिहाफों में, ऊनी वस्त्रों और कंबलों की आड़ में सिमटी दिखाई दी। वहाँ के शीत का प्रकोप हमारे शहर के दिसंबर-जनवरी माह जैसा ही हमें महसूस हुआ। चारों ओर उड़ती धुंध और कोहरे ने जैसे ही तन को छुआ, एक अप्रत्याशित ठंड भरी सिहरन विद्युत् गति से बदन पर दौड़ पड़ी।

इस ठंड से बचने के प्रथम प्रयास में हम दोनों ने हाथों से अपनी छाती को कस लिया। ट्रेन ज्यों बिना किसी के कहे रुकी थी, वह बिना किसी से बोले खट-खट की आवाज के साथ चल निकली। ट्रेन के जाने के साथ ही प्लेटफॉर्म पर आवाजाही खत्म हो गई। स्टेशन पर शीत का प्रवाह और अधिक पसर गया। कोहरे की चादर में बल्बों एवं ट्यूबलाइटों का प्रकाश घुल-घुलकर प्रसारित हो रहा था। प्लेटफॉर्म पर बिछी कुरसियों का खालीपन अब कोहरा ही भर रहा था। सुनसान प्लेटफॉर्म के दरवाजे में प्रवेश करते हुए मैंने यात्री प्रतीक्षालय के फर्श, कुरसियों और कोनों में लोगों को कंबलों, गरम दुशालों और उधड़ी रजाइयों में लिपटे हुए देखा। स्टेशन की दुकान और थड़ियाँ धुँधलके में अपने होने का प्रमाण दे रही थीं। लेकिन हाँ, इन सब से इतर मूँगफली, गुटखे, बीड़ी बेचने वाले एक साये को मैंने उस सर्दी में बेखौफ बिक्री करते देखा था। उस वातावरण में कोहरे के अलावा कहीं भी किसी प्रकार की कोई गतिविधि दिखाई नहीं दे रही थी

इस दृश्य को देखकर लगा, जैसे शीत के जिन्न ने हमारे तन को जकड़ लिया हो। गरम कपड़ों की अनुपस्थिति में हमने प्याज के छिलकों की तरह सिर्फ सादा कमीजों से तन को ढक लिया। ओढ़ने और बिछाने की चद्दरों ने भी हमें इस भीषणता से बचाने में एक असफल मदद की।

रात को यों तो खाना खाया था, लेकिन सर्दी से बचने के बहाने चाय

सुपरिचित साहित्यकार। गीत, गजल, कविता, दोहा, कहानी, लघुकथा, संस्मरणात्मक रेखाचित्र आदि अनेक विधाओं में ९५२ कृतियाँ प्रकाशित। राजस्थान ब्रजभाषा अकादमी, जयपुर की त्रैमासिकी 'ब्रजशतदल' एवं साहित्य मंडल श्रीनाथद्वारा की पत्रिका 'हरसिंगार' का सहयोगी संपादन कार्य। अनेक साहित्यिक संस्थाओं द्वारा सम्मानित।

पीने की असंभव सी इच्छा को बल मिला, नर्मदा मैया ने हमारी इस इच्छा को जल्द पूर्ण कर भी दिया।

उसी समय प्लेटफॉर्म पर धुंध में से दुबले-पतले बदन, हाथ में चाय की केतली और कप लटकाए 'चाय-चाय' की टेर लगाती एक आकृति को घूमते देखा। सुनील ने उसे आवाज दी। लंबे-लंबे डग भरती वह आकृति शीघ्र ही हमारे सामने आ खड़ी हुई।

"दादा भाई चाय?" मादक, मोहक और आकर्षण से भरी हुई आवाज से मन उस आकृति की ओर खिंच गया।

गौर वर्ण, दुबला-पतला बदन। उम्र तकरीबन चौदह-पंद्रह वर्ष। चौड़े माथे पर पसरे छोटे-छोटे भूरे रंग के घुँघराले बालों पर एक पीली सफेद ऊनी टोपी। अपने में भोलेपन को समेटे पतली स्नेह पूरित आँखें। आँखों के ठीक बीच में एक चौड़ी-सपाट सुघड़ नासिका, जो उसकी सुंदरता में चुंबकत्व का व्यापार करने में सक्षम होती। साथ ही उस नासिका की सुंदरता को सवाया करते थे, गुलाबी पतले मुसकान बिखेरते होंठ। गोरे सूखे गालों के नीचे छोटी ठोड़ी से उस चेहरे की छवि मन में उतरती जाती थी। उस किशोर ने बदन पर एक गरम खुली पीले रंग की किसी बड़े व्यक्ति की जाकिट को पहना नहीं था बल्कि, सर्दी से बचने को ओढ़ रखा था। उसका गरम मोटा सफेद पाजामा और रेग्जीन के पुराने उधड़े जूते भी किसी की कृपा दृष्टि की पुष्टि करते दिखाई दे रहे थे। हाथ में काली सफेद केतली से गरमागरम चाय को कप में कर हमें थमाते हुए उसकी आवाज पुनः मन पर थाप दे गई—"यह लो दादा भाई!"

चाय की गरम भाप ने एक क्षण कोहरे की ठंडक को विस्थापित कर दिया। शरीर को गरम करने के लिए हमने चाय को दोनों हाथों में बाँध

लिया और तब मैं बोला, "रात को कोई होटल मिल पाएगा?"

"अब एक बजे कौन सा होटल खुला मिलेगा, दादा भाई?"

चाय का दाम देने को हमने उसके हाथ में सौ का नोट रख दिया।

"इतना बड़ा ठोक भाई?"

"नहीं, इससे छोटा तो नहीं मिल पाएगा।" मैंने कहा।

"चलो, छोटा ठोक देखता हूँ।" कहकर उसने अपनी आँखें, मस्तिष्क व हाथ तीनों से जाकिट, पायजामे और अंदर शर्ट की जेबों को खोजा और सफलता पाकर मेरा हिसाब कर वह अपनी दुकानदारी के लिए निकलने को हुआ तो मैंने पुन: पूछ लिया—

"अमरकंटक के लिए कोई साधन मिलेगा?"

"सुबह छह बजे बस आएगी।" उसने जाते-जाते जवाब दिया और फिर उसी तरह 'चाय-चाय' की टेर लगाता हुआ वह आगे बढ़ गया।

अब करना था प्रतीक्षालय में उस शीत भरी रात से स्वयं को बचाने का कोई गरम प्रयास। सभी कोने पहले से ही कब्जाए हुए थे। कोई स्थान न पाकर हम प्रतीक्षालय के दरवाजे के किनारे पर ही आ सटे। खुले वातावरण में गहरी-अँधेरी रात में ठंड की मार कुछ ज्यादा ही लगती है, यह उस समय हमें महसूस हुआ। सूनेपन, अँधेरे और कोहरे में आसरे का कोई उपाय नहीं सूझ रहा था। भगवान् भरोसे छोड़ हम नाउम्मीदी के शिखर पर इस ठंड से दो-दो हाथ तो क्या कर पाते, लेकिन अपने को ओढ़कर वहीं किसी समाधान की राह में बैठ गए। हमारी आँखों में दिन भर की थकान से नींद घिर आई थी, लेकिन ठंड ने शरीर के समस्त अंगों को जागरण करने पर मजबूर कर दिया था।

'चाय-चाय' की आवाज से पुन: चेतना जागी। वही किशोर अपनी टेर लगाता हमारे निकट आ गया। हमने उससे पुन: चाय ली और उससे पुन: वही निवेदन किया।

उसके चेहरे पर एक मुसकान बिखर आई। वह हमारी स्थिति को समझ गया और बोला, "दादा भाई! अब कोई ठोक नहीं मिलेगा। हाँ, मेरी बाड़ी में चलना चाहो तो चलो।"

कितनी दूर है, कहाँ है, कैसी है? या किसी भी होनी अनहोनी को बिना सोचे-समझे हम दोनों उसके साथ चलने को तैयार हो गए। अभी हमने सिर्फ हाँ ही की थी कि देखा, वह किशोर हमारा सामान लेकर आगे-आगे चल पड़ा। कुछ ही दूरी पर चाय की एक पुरानी दुकान के बाहर चारों ओर से बंद टिन शेड में सामान रखकर वह किशोर मुसकराता हुआ बोला, "आ जाओ, यही है मेरी बाड़ी।" हमने अंदर आ गए। उस बाड़ी का वैभव बढ़ा रहे थे—सिर्फ एक पट्टी, किनारे रखी लोहे की एक बड़ी सिगड़ी, चाय-चीनी के कुछ डिब्बे, एक तरफ रखा पानी का काई लगा मटका और कुछ थालियों में रखा सामान तथा दीवार पर टँगा किसी साधु का चित्र। धुएँ से टिन की चादरों पर जमा कालापन उस छोटे से बल्ब में साफ दिखाई दे रहा था। हाँ, इस शीत की रात में इसका चारों ओर से ढकाव और सिगड़ी से भरी गरमाहट मुझे उस भद्देपन से कहीं ज्यादा सुखद लग रही थी।

"दादा भाई! इस ठोक बैठ लो। यहाँ गरमी रहेगी।" हम दोनों एक कोने में पड़ी बोरी पर बैठ गए। बाहर की ठंडक से जान बचाने का यही आखिरी रास्ता और उपाय था।

तब मैंने किशोर से पूछा, "तुम यहीं रहते हो?"

"हाँ!"

"तुम्हारा क्या नाम है?"

"गौरे!"

"अच्छा नाम है। माँ-पिताजी?"

"वे गाँव में हैं।"

गौरे मेरे प्रश्नों का जवाब भर ही दे रहा था। लेकिन उसका ध्यान सिगड़ी को तेज करने में था। पत्थर के नीचे से उसने लकड़ी के कुछ टुकड़े डाल एक गत्ते से हवा देकर आग को धधकाने के प्रयास के साथ बोला, "कोहरे से ईंधन भी गीला हो गया है, दादाभाई! थोड़ा धुआँ जरूर छोड़ेगा, तकलीफ देगा।" लेकिन फिर हँसकर बोला, "हाँ, बाड़ी को गरम जरूर कर देगा।"

उसके चेहरे पर कोमल होंठों के बीच छोटी सफेद दंतावलियों की सुंदरता अभी-अभी देखने को मिली। "अब तो शायद रात कट जाएगी?" कहकर हम उस बोरे पर व्यवस्थित होकर सोने को हुए तो गौरे ने कहाँ से, कब आए, क्यों आए, कब जाना है—जैसे अनेक प्रश्नों के उत्तर मुझसे पा लिये। मेरे विषय में जानकर गौरे मुझसे काफी प्रभावित हुआ। उसने गत्ते से सिगड़ी को सुलगा दिया था। हमारी आँखों में अब नींद के झोंके उठने लगे। तब गौरे बोला, "दादा भाई! अब एक चाय मेरी ओर से?"

मेरा आँखें ही नहीं मन भी नींद से घिर रहा था। यात्रा में अधिक चाय पीने से इस समय चाय का मन न के बराबर था। लेकिन गौरे के प्रेमासिक्त अनुरोध को मैं टाल न सका। उसके आग्रह में मैंने अनुराग के बादलों को तैरते देखा था। एक दैन्यता का भाव और आतिथ्य की अभिलाषा उसके चेहरे पर उभरी हुई थी।

अब भी धुआँ उसकी आँखों में लग रहा था। लेकिन इस धुएँ से युद्ध में उसकी जीत के बाद उसने चाय का प्याला मेरे हाथों में थमा दिया। सुनील तो कब का निद्रा की लहरों में गोते लगा रहा था।

"पीकर देखो दादा भाई! स्पेशल बनाई है।" गौरे की यह आत्मीयता मन में एक बीज सी आकर जम गई। वास्तव में गौरे के हाथ की चाय का आनंद ही कुछ अलग था। मैंने बोरी पर लेटे हुए और गौरे ने सिगड़ी के सामने खड़े होकर चाय के घूँट लिये। और तब मैंने गौरे के समस्त हालातों को उसकी मायूसी के साथ सुना। उसके पिता को लकवा था। माँ व दो छोटे भाइयों का खर्चा भगवान् ने उसी के सिर पर ला रखा था। वह दिन में किसी चाय वाले के यहाँ काम करता था और रात में अपनी चाय की बिक्री से अच्छा कमा लेता था।

मैंने आज भाग्य की कठोरता पर कर्म की चोट को पड़ते हुए देखा था।

"ये टिन शैड किस की है।"

"मालिक की है।"

गौरे से मैंने काफी देर तब बातें कीं। फिर गौरे ने अपना गाढ़ा चीकट

कंबल मेरे ऊपर डाल दिया और बोला, "आप सो जाइए दादा भाई! मैं जब तक स्टेशन पर घूम आता हूँ।"

यह कहकर गौरे उसी उत्साह से स्टेशन की ओर बढ़ चला। मैं उसे उसी उत्साह से जाते देख रहा था। गौरे की 'चाय-चाय' की टेर उस शांत वातावरण में साफ सुनाई दे रही थी। मैं उस कंबल में लिपट गया। सफाई पसंद होकर भी आज मुझे उस गाढ़े चीकट कंबल में प्रेम की अनुभूति हो रही थी। माँ की गोद की गरमी भी शायद ऐसी ही रही होगी। क्योंकि उसे ओढ़कर कब नींद आ गई, इसका मुझे पता ही नहीं चला।

ठीक छह बजे चाय का गिलास हाथों में थमाते हुए मुसकराते हुए उस चेहरे ने हमें एक शानदार नींद से जगाया—"दादाभाई! कैसी नींद आई?" उसके चेहरे पर एक मुसकान थी। रात भर की वह थकान अब काफूर हो चुकी थी। चाय का गिलास थमाकर गौरे बोला, "दादाभाई, बस आने को है।" एक घूँट हलक में उतारकर मैं बोला, "तुम नहीं सोए?"

"सो लिया था?"

"कब?"

"आपको पता नहीं चला?"

सच, गौरे के चेहरे पर नींद की उन्मादी का कोई भाव नहीं था। वह पूरी तरह तरोताजा दिखाई दे रहा था। उसके चेहरे की मुसकान से उसका स्वरूप और भी मनोहारी लग रहा था।

तभी बस का हॉर्न बजा। गौरे ने बस आने की सूचना भी दी। मैंने चाय पीने में जल्दीबाजी की तो गौरे ने तसल्ली रखने को कहा। तब उसकी धीरता को मैंने अनुभव किया। यह धीरता मैंने अनुभवी लोगों में ही पाई थी। मेरे चाय पीने तक स्वयं गौरे ने हमारा सारा सामान बस में रखकर अपनी चपलता का परिचय भी दे दिया था। उसकी बाड़ी में से जब मैं बाहर आया तो शीत का प्रकोप तो मानो हमारे लिए ही खड़ा था। भीषण शीत से बचने का प्रयास करते हुए मैंने अपनी जेब से सौ रुपए का नोट गौरे के हाथों में थमाना चाहा। लेकिन गौरे ने साफ मना कर दिया। यहाँ तक कि चाय के दाम भी नहीं लिये। मेरे बार-बार आग्रह को उसने अपनी हठ से दबा दिया। मैं उसके सामने हार गया था। बस रुकी थी लेकिन गौरे नहीं रुका। "दादाभाई! ट्रेन का टाइम हो गया है, चलता हूँ।" कहकर वह केतली थामे प्लेटफॉर्म की ओर बढ़ गया।

मैंने गौरे को जाते हुए देखा। उसके कदम दृढ़ता से स्टेशन की ओर बढ़ रहे थे। मैं उसे तब तक देखता रहा, जब तक कि वह मेरी आँखों से ओझल नहीं हो गया।

इधर बस भी चल पड़ी। हम आगे के सफर पर बढ़ गए। गौरे वहीं रह गया। लेकिन यादों की ट्रेन पर एक सवारी को मैंने बिठा लिया था। खिलखिलाते, मुसकराते हुए, हाथ में चाय की केतली उठाए वही गौरे आज भी मेरी यादों में उस शीत भरी रात में अनुराग बिखेरता हुआ दिखाई देता है, अपने 'दादाभाई के कहन से', 'चाय-चाय की आनंद भरी आवाज से', 'एक गाढ़े चीकट कंबल से।'

आज भी जब कभी सर्दी की रात में कहीं स्टेशन या बस स्टाप पर मैं कुछ देर को रुकता हूँ तो मेरी आँखों के आगे गौरे चाय की टेर लगाता हुआ आ खड़ा होता है। 'दादा भाई! चाय लीजिए।' और मैं उससे मिलने की अधूरी कल्पना में महज मुसकराकर रह जाता हूँ कि न जाने कब पेंड्रा रोड जाना होगा और न जाने कब उस अनजाने साथी से मुलाकात हो पाएगी!

साअ

राधा ओल्ड के पीछे, सादाबाद रोड,
राया, मथुरा-२८१२०४ (उ.प्र.)
दूरभाष : ७०१७३२८२११

पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 600120110001052 IFSC-BKID 0006001 में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. 011-23257555, 8448612269 अथवा sahityaamritindia@gmail.com पर इ-मेल करें।

ग़ज़लें

• उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

एक

ओढ़ा और बिछाया ख़ुद को
यानी सिर्फ़ बिताया ख़ुद को

हँसते हुए रुलाया खुद को
कड़वा घूँट पिलाया खुद को

तेरे लिये सजाया ख़ुद को
अक्सर यूँ चौंकाया ख़ुद को

ऐसे गले लगाया खुद को
अपना हाल सुनाया खुद को

तेरा ख़्वाब दिखाया खुद को
मैंने यूँ चौंकाया खुद को

मैंने यूँ बहलाया खुद को
दर्पण देख रिझाया खुद को

'उर्वी' ने समझाया ख़ुद को
खुद में खुद ही पाया खुद को

* * *

दो

तुझको ढूँढ रही हैं आँखें
कबसे द्वार लगी हैं आँखें

तेरी आँखें सोई होंगी
मुझको देख जगी हैं आँखें

तेरा बचना भी मुश्किल है
तुझसे आज लड़ी हैं आँखें

तुझको देखा तो चुपके से
काजल पहन सजी हैं आँखें

तेरे भीतर झाँक न पाईं
बाहर देख रही हैं आँखें

जाने कबसे बंद रही हैं
तुझको देख खुली हैं आँखें

बेहद आज दुखी है 'उर्वी'
दुनिया देख चली हैं आँखें

* * *

तीन

दर्द ना दिल में पाला होता
मुझमें और उजाला होता

जीवन भर इतना ही सोचा
तूने मुझे सँभाला होता

किसको सोंप दिया है खुद को
कुछ तो देखा भाला होता

उसकी शर्तें उसके साँचे
खुद को कितना ढाला होता

महलों में मुमकिन था रहना
लेकिन मुँह पर ताला होता

वक्त वफ़ा तो करता लेकिन
वक्त न कल पे टाला होता

इतना ही अफ़सोस किसी ने
दिल से नहीं निकाला होता

* * *

चार

तुम मुझको सुलझाओगे क्या
मेरा सच सह पाओगे क्या

खुद को यूँ खो पाओगे क्या
तुम मेरे हो जाओगे क्या

कुछ दिन यूँ रहकर तो देखो
मेरे बिन रह पाओगे क्या

यूँ तो खुद में पारंगत हो
मेरी धुन पर गाओगे क्या

यूँ तो सबकुछ कह डाला है
मन की भी कह पाओगे क्या

जैसे अब तक तरसाया है
ऐसे ही तरसाओगे क्या

जो कुछ चेहरे पर लिक्खा है
वो भी तुम पढ़ पाओगे क्या ?

* * *

पाँच

हमने तो ये ठाना है जी
तुमको अपना माना है जी

हमसे मिलने कब आना है
कब तब यूँ तड़पाना है जी

मेहमाँ है जो घर में बिटिया
चिड़िया है उड़ जाना है जी

पुष्प हुई तो ये भी जाना
मुस्काकर मुरझाना है जी

आँसू, यादें, तन्हाई ही
अपना ताना बाना है जी

लाख हमारे आँसू बेशक
एक तुम्हारा शाना है जी

आज हमारे ख़्वाब में तुमको
आना है तो आना है जी

'उर्वी' खुद ही कैसे कह दे
जग मेरा दीवाना है जी

* * *

छह

मेरा पत्थर देख रहा है
मुझको छूकर देख रहा है

भीतर-भीतर रोता है जो
मुझको हँसकर देख रहा है

सोते सोते भी पागल मन
सपने खुलकर देख रहा है

नया परिंदा उड़ते उड़ते
नीला अंबर देख रहा है

देख शिकस्ता मेरी कश्ती
नीला सागर देख रहा है

शायद वापस आएगा वो
'उर्वी' मुड़कर देख रहा है

* * *

सात

ना वो कमतर ना मैं बेहतर
वो है मिश्री मैं हूँ शक्कर

नर्तन करती तेरी यादें
सिलवट-सिलवट मेरा बिस्तर

असर नहीं दोनो पर कुछ भी
मैं भी पत्थर वो भी पत्थर

साँझ ढले क्यूँ घर में मेरे
आता यादों का है लश्कर

सरे आम तो हँसती हूँ पर
अक्सर रोती हूँ मैं छुपकर

अपनीवाणी से 'उर्वी' को
रोज़ चुभोता है वो निश्तर

* * *

आठ

तेरे दिल में आऊँ कैसे
अपना तुझे बनाऊँ कैसे

तू हीरा है पाऊँ कैसे
कीमत बोल चुकाऊँ कैसे

बच्चों को बहलाऊँ कैसे
नए खिलोमें लाऊँ कैसे

रिश्ता यार निभाऊँ कैसे
फिसले रेत बचाऊँ कैसे

ज़ख्मों को दिखलाऊँ कैसे
पीड़ा है बतलाऊँ कैसे

* * *

नौ

मुझको उससे प्यार नहीं था
वो मेरा संसार नहीं था

और किसी का ही था अब वो
अपना दावेदार नहीं था

ग़म का ही मेला था मुझमें
ख़ुशियों का अंबार नहीं था

कसकर मारा तुमने लकिन
तीर जिगर के पार नहीं था

था मर्ज़ी का मालिक अपनी
वो मेरा हथियार नहीं था

तुझमें कैसे डूब गई मैं
तू कोई मँझधार नहीं था

तू साकार मिला है मुझको
सपता तो साकार नहीं था

झुमका, बाली, कंगन सब थे
बस बाहों का हार नहीं था

वीणा कैसे झंकृत होती
उसमें 'उर्वी' तार नहीं था

* * *

४/१९ आसफ अली रोड
नई दिल्ली-११०००२
दूरभाष : ९९५८३८२९९९

रामायण-त्रिवेणी में श्रीराम

● विजयप्रकाश त्रिपाठी

प्रभु रामजी का पावन चरित्र हमें रामायण से पढ़ने को प्राप्त होता है। वैसे तो कितनी ही रामायणें इस विश्व में विद्यमान हैं, पर उसमें मुख्यतया तीन का महत्त्व कुछ अधिक ही है। सर्वप्रथम वाल्मीकि रामायण है, जो सभी रामायणों का मूल स्रोत है। इससे सबने प्रेरणा तथा सामग्री प्राप्त की है। वाल्मीकि आदि कवि माने गए हैं। उन्होंने रामायण को इतिहास के रूप में प्रस्तुत किया है। संस्कृत के प्राचीन साहित्य में दो ही इतिहास मुख्य माने जाते हैं। उनमें एक है वाल्मीकि रामायण और दूसरा व्यासकृत महाभारत। रामायण के संबंध में स्वयं ब्रह्माजी का वाल्मीकि के प्रति मत है कि "आपको सब कुछ ज्ञात है, जो कुछ आपने कहा है, वह निश्चित घटित होगा। आपके काव्य में कुछ भी झूठ न होगा—"*न ते वागनृता काव्ये काचिदात्रि भविष्यति*।" अपनी रामायण में उन्होंने सचमुच जैसा कुछ हुआ, वैसा ही लिखने का प्रयास किया है। कहीं भी लीपा-पोती से काम नहीं लिया। वाल्मीकि की दृष्टि से भगवान् राम कामार्थ गुण संयुक्त, धर्मार्थगुणयुक्त, समुद्र की तरह रत्नों से भरपूर, सबसे मनोरम है। ब्रह्माजी का कहना है कि 'जब तक पर्वत, सरिता आदि मूतल पर विद्यमान हैं, ब्रह्माआपली रामायण का प्रचार-प्रसार सर्वत्र होता रहेगा। वाल्मीकि के पश्चात् ही गोस्वामी तुलसीदास का स्थान आता है। उनके द्वारा रचित श्रीरामचरितमानस जितना लोकप्रिय हुआ है—यह आज बताने की बात नहीं है। विदेशी रामकथा विद्वान् ग्रियर्सन के मत से यह उत्तर भारत की बाइबल है। उसका अनुवाद कुछ विदेशी भाषाओं में भी हुआ है। सर्वप्रथम ब्रिटिश शासन काल में मथुरा के कलक्टर ग्राउस साहब ने उसका अंग्रेजी में अनुवाद किया। बाद में मिस्टर हिल नामक दूसरे अंग्रेज विद्वान् ने भी उसका रूसी भाषा में अनुवाद किया, जिसकी विशेषता यह है कि उसमें मूल रामायण के छंदों का ही अनुकरण किया गया है। उन्हें उसी प्रकार गाया जा सकता है। जैसे मूल रामायण के पदों को। आज से लगभग चार दशक पूर्व मिस्टर हिल वाराणसी पधारे थे, तब उन्होंने स्वचरित पदों का गायन कर श्रोताओं को चकित कर दिया था। तुलसीदासजी नारायण को श्रीरामचंद्र के नररूप में इस पावन धरातल पर उतार लिए हैं। उनके राम आदर्श पुत्र, आदर्श शिष्य, आदर्श ब्राह्मण मक्त, आदर्श वीर व आदर्श कुशल राज्य संचालक है। संक्षेप में वे मर्यादा पुरुषोत्तम है।

दक्षिण भारत में महाकवि कंबन की तमिल भाषा में रचित रामायण अत्यधिक लोकप्रिय है। उन्हें प्राय: 'दक्षिण की तुलसीदास' कहा जाता है। वे तमिल भाषा के आदि कवि माने जाते हैं। कवि कंबन् गोस्वामी तुलसीदास की तरह ही राम और रामकथा के प्रति बड़े आस्थावान हैं।

हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा साहित्य भूषण, श्रीनाथद्वारा की संस्था 'साहित्य मंडल' से 'संपादक शिरोमणि' रामकथा-रामलीला की नाट्य-विधा के विश्लेषक, प्रख्यात लेखक के रूप में प्रतिष्ठित, शताधिक सम्मान प्राप्तकर्ता। संप्रति जयतु हिंदू विश्व (मा.) के संपादक।

लेकिन कथानक की दृष्टि से दोनों की कृतियों में थोड़ा सा अंतर है। तमिल देशवासियों का कहना है कि विष्णु ने मदराचल के सहारे सिंधु मथकर देवों के रक्षाहित अमृत उपलब्ध किया, वैसे ही महाकवि कंबन ने अपनी जिह्वा रूप तथा मंथन-यष्टिका का सहारा लेकर तमिल वाङ्मय रूपी महासिंधु का मंथन किया और रामावतार-कथा रूपी महासिंधु का मंथन किया और रामावतार-कथा रूपी अमृत का घट हम तमिलवासियों के लिए उपलब्ध कराया। यद्यपि उसका धरातल वाल्मीकि रामायण पर ही आश्रित है, कंबन ने अपने प्राचीन आचार-विचारों, विश्वासों, भावनाओं तथा प्रचलित परंपरागत सभी मान्यताओं की सुरक्षा को ध्यान में रखकर स्थान-स्थान पर कुछ परिवर्तन करना अपना कर्तव्य समझा।

कहा जाता है कि यदि महाकवि तुलसी श्रीराम को नर रूप में धरातल पर लाए हैं तो कंबन कवि नर को नारायण रूप में इस पावन पृथ्वी पर उतार लाए हैं।

इस रामायण-त्रिवेणी ने मात्र भारतभूमि को ही रामकथा से पवित्रमय संचित नहीं किया, अपितु इसकी उदात्त तरंगे विदेशों में भी पहुँचा दी है। मिस्र के इतिहास में रेमेसिस की पौराणिक कथा श्रीरामकथा ये बहुत कुछ मिलती जुलती है। बौद्ध रामकथा 'अनामकम् जातमकम्' तथा 'दशरथकथानकम्' का भाषानुवाद चीनी भाषा में क्रमश: तीसरी व पाँचवी शताब्दी में हुआ था। 'अनामकम् जातकम्' में यद्यपि रामायण के पात्रों के नाम नहीं है तथापि उसमें सीताहरण, वाली सुग्रीव युद्ध, सीता की अग्नि परीक्षा आदि कुछ घटनाओं का समावेश अवश्य पाया जाता है। 'दशरथ कथानकम' में दशरथ-पुत्रों के वनवास की कथा तो मिलती है, परंतु सीतामाता का वृत्तांत नहीं प्राप्त होता। इसीलिए उसमें राम-रावण

युद्ध चीनी भाषा में हुआ। इस ग्रंथ में रामायण का भी उल्लेख नहीं है। लगभग सातवीं सदी में 'ज्ञान-प्रस्थान' का अनुवाद भी चीनी भाषा में हुआ। इस ग्रंथ में रामायण के कुछ अंशों का समावेश हुआ है। एस. डब्ल्यू. थामस ने अपनी पुस्तक 'रामायण-स्टेरी इन टिवेटन' में तिब्बत में प्राप्त 'रामकाव्य' की पाण्डलिपियों का विस्तृत वर्णन दिया है। उसमें रामचरित की सीतात्याग से लेकर सीता-सम्मिलन तक की घटनाएँ प्राप्त होती। 'अनानाम् जातकम्' का मूल भारतीय पाठ अब दुर्लभ ही। अंग्रेजी अनुवाद चीनी रामायण के नाम से 'सरस्वती-विहार ग्रंथमाला' में सन् १९३८ में प्रकाशित हुआ था। फ्रांसीसी भाषा में इसका अनुवाद सन् १९०४ में हुआ।

'चीनी त्रिपिटक' के अंतर्गत १२१ अवदानों का एक अनुपम संग्रह है। यह संग्रह ई. ४७२ में चीनी भाषा में प्रकाशित हुआ था। इसकी कथा का अर्थ चीनी, फ्रांसीसी तथा अंग्रेजी पुस्तकों से लगाना पड़ता है। इसमें 'दशरथ कथानकम्' का जो अंश आता है, उसमें सीता या किसी राजकुमारी का उल्लेख नहीं है।

हिंदी एशिया तो रामकथा का भंडार है। संप्रति यह मुसलिम विचारधारा का देश है। तब भी वहाँ कठपुतलियों के नृत्य में रामलीला के दृश्य दिखलाए जाते हैं। एक पुस्तक 'हिकायत सेरी राम' में भी श्रीराम की कथा आती है। वहाँ की एक नदी का नाम 'सरयू' और उसके तट पर बसे हुए नगर का नाम 'दुधिया' है। वहाँ के लोगों में विश्वास है कि भगवान् राम का जन्म यहीं पर हुआ था और रामायण की अधिकांश घटनाएँ भी यहीं पर हुई है। भारतीयों ने यहाँ से लेकर रामकथा का प्रचार अपने यहाँ किया। कुछ ही दिन पूर्व यहाँ एक राममेला हुआ था। जिसमें भारतीयों का भी एक प्रतिनिधि मंडल आया था। उसमें रामायण के अनेक दृश्य दिखलाए गए थे। इस प्रकार रामकथा की परंपरा समस्त एशिया में स्वरूप विकसित करती हुई अफ्रीका व यूरोप तक जा पहुँची है।

यह सब ऐसे ही संभव नहीं हुआ है। प्रभु रामजी की ही लीला है कि उनके वास्तविक स्वरूप में विश्वास न करने वाले लोगों ने भी इनका गुणानुवाद किया है। भारत में जैन और बौद्ध अवैदिक संप्रदायों में सबसे प्राचीन व विशिष्ट है। इनमें रामचरित का विकास बड़ी स्पष्टता से पाया जाता है। बौद्धों के 'दशरथ-जातकम्', 'अनामकम् जातकम्', 'दशरथ-कथानकम्' में राम कथा की परंपरा दिखलाई जा चुकी है। 'दशरथ जातकम्' पाँचवीं शती के एक, सिंघली पुस्तक का अनुवाद है। इसमें सीता को दशरथ की पुत्री बतलाया गया है। इसे ही लेकर अनेक लेखकों ने विभिन्न प्रकार की कल्पनाएँ की हैं। किंतु इसके आधार पर विश्वास नहीं किया जा सकता, जबकि तक उसकी समुचित पुष्टि के लिए उचित प्रमाण न हो। इसके अनुसार पूर्वजन्म में शुद्धोदन महाराज दशरथ महामाया, राम की माता, यशोधरा सीता तथा आनंद भरत थे। पश्चिमी विद्वानों ने यह सिद्ध करने का पर्याप्त प्रयत्न के किया है कि वाल्मीकि ने 'दशरथजातकम्' के आधार पर रामायण की रचना की थी। लेकिन यह प्रयास व्यर्थ ही सिद्ध हुआ। बौद्ध महात्मा बुद्ध को राम का अवतार स्वीकार करते हैं।

जैनियों में रामचरित की परंपरा विमलसूरि तथा गुणभद्र से चलती है। विमल सूरि ने 'पद्म-चरित' की रचना लगभग १७७२ ई. में की। इसका संस्कृत रुपांतर 'पद्मचरित' के नाम से १८०७ ई. में हुआ। इसका अनुवाद हिंदी खड़ी बोली में सन् १८१८ में दौलतरामजी ने किया था। विमला सूरि की परंपरा में जैनियों द्वारा अनेक रामचरित लिखे गए। 'कथा कोष', 'शत्रुजय-माहात्म्य' 'निरलकोष' आदि में बिखरी रामकथाएँ मिलती हैं। जैन विद्वान् गुणभद्र ने नौवीं सदी में अपने 'उत्तर पुराण' में राम चरित का वर्णन किया है।

इन अवैदिक संप्रदायों के अलावा भी भारत की क्षेत्रीय भाषाओं में भी रामकाव्य की रचना हुई है। तमिल भाषा में 'कम्बन रामायण' का उल्लेख किया जा चुका है। तेलगु साहित्य में 'द्विपद रामायण', जो 'रंगनाथ रामायण' नाम से अति चर्चित है। श्रीवृद्धराज द्वारा ग्यारहवीं सदी में रचित की गई है। मलयालम की सबसे प्राचीन रचना रामकृत 'रामचरित' चौदहवीं सदी में हुई। कन्नड़ भाषा में नरहरि ने 'तोरवे रामायण' सोलहवीं सदी में लिखी गई

सिंहल द्वीप में एक कथा का प्रसार-प्रचार है, जिसका रचना काल ईसा पूर्व पाँचवी शती माना जाता है। इसमें सिंहल के प्रथम राजा तथा राजकुमारी का 'सूवेणी' और 'सीतात्याग' ये दो मुख्य आख्यान हैं। उत्कल भाषा में श्रीवलराम दास ने १५वीं सदी में 'रामायण' की रचना की। मराठी में एकनाथजी ने 'भावार्थ रामायण' १८वीं सदी में रचित की। श्रीधर व मोरोपंत ने भी रामकाव्य पर बहुत कुछ लिखा है। कश्मीरी रामायण की रचना दिवाकर प्रकाश भट्ट ने अठारहवीं सदी में की। १५वीं सदी में कृतिवास ने बँगला भाषा में रामायण की रचना प्रस्तुत की। गुजरात में भी गुजराती भाषा में रामकथा के कुछ प्रसंग कई ग्रंथों में देखने को प्राप्त होते है जैसे प्रेमानंद कृत 'रणयज्ञ', सत्रहवीं सदी का हरिदासकृत 'सीतानिरह' आदि। असमिया भाषा में भी रामकथा पर अनेक ग्रंथ प्राप्त होते हैं, जिसका उल्लेख अपने लेखों में 'तुलसी निर्देशिका' दिल्ली के संपादक, रामकथा मर्मज्ञ डॉ. रमानाथ त्रिपाठी ने किया है।

श्रीराम का नाम जितना लिया जाता है, अन्य किसी अवतारी पुरुष का नहीं। राम-नाम की बड़ी महिमा है। '*रामु न सकहिं नाम गुन गाई।*'

इस प्रकार हम देखते हैं कि रामचरित विदेशी तथा देशी भाषाओं में ताने-बाने की तरह समाया हुआ है। विश्व में बाइबिल को छोड़कर कदाचित् ही किसी दूसरी कथा का इतना अधिक प्रचार हुआ हो। इस रामकथा के पावन चरित्र ने सांस्कृतिक दृष्टि से भारत को नहीं, अन्य कई देशों को भी एकता के सूत्र में बाँधने का सफल कार्य किया है।

साअ
८६/३२३ देवनगर,
कानपुर-२०८००३ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९२३५५११०८३
vijayprakashtripathi@yahoo.co.

प्यार की भाषा

• रंजना किशोर

मैं ने कहा, "राम-राम अम्मा!", "राम-राम बहिनी!" उन्होंने जवाब दिया। ग्राहक आते रहते, कोई 'राम-राम अम्मा', तो कोई 'नमस्ते अम्मा', तो कोई 'कैसे हो अम्मा' पूछता और वह अपने हिसाब से सबके अभिवादन का जवाब देती।

रामचरण और उसकी अम्मा दोनों पार्क के बगल में सब्जी का ठेला लगाते और सब्जियाँ बेचते। वहाँ लाइन से कई सब्जी वाले अपनी-अपनी ठेली लिये खड़े रहते, लेकिन रामचरण और उसकी अम्मा के सौम्य एवं मर्यादित व्यवहार के कारण उनके ठेले पर ही सारी भीड़ उमड़ती।

लोग पार्क से भ्रमण, योग, व्यायाम करके निकलते तो ताजा सब्जियों पर नजर पड़ ही जाती। दूसरी तरफ एक गाड़ी वाला अपनी गाड़ी में रस निकालने की मशीन रखकर रस निकालता। किसी को लौकी का रस पीना है तो किसी को करेले का तो किसी को गिलोय का। एक तरफ नारियलवाला खड़ा रहता। कुछ लोग सुबह-सुबह नारियल पानी भी पीते। उसके बगल में एक फलवाला अपनी ठेली लगाए रहता। अर्थात् सारी चीजें वहीं पार्क के पास ही मिल जातीं।

मोटी, साँवली सी अम्मा लाल-पीली खूब सेंटदार साड़ी पहनती। भर माँग सिंदूर और माथे पर बड़ी सी लाल बिंदी। भर-भर हाथ काँच की हरी-पीली चूड़ियाँ। फटे, खुरदरे पैरों में महावर लगाए रहती। अम्मा बहुत मेहनत करती। सुना था, दो बजे रात को उठकर खाना पका लेती। फिर तीन बजे रात को ही बेटे के साथ सब्जी मंडी पहुँच जाती। वहाँ से ताजी सब्जियाँ लदवाकर यहाँ पार्क के पास लाकर बेचती। सर्दी, गरमी, बरसात, हर मौसम में अम्मा का काम अनवरत चलता रहा। मौसम का उन पर कोई असर नहीं होता। पता नहीं क्यों, मुझे अम्मा पर बहुत प्यार उमड़ता। उनके मोटे फूले हुए फटे हुए पैर देखकर हमेशा खयाल आता, काश इन्हें गरम पानी से धोकर ढेर सारा क्रीम लगा पाती।

ठेले पर कितनी ही भीड़ हो, रामचरण फटाफट सब्जियाँ तौलता रहता। छुट्टे पैसे देने का काम अम्मा का रहता। पीले कपड़े के थैले में अम्मा ढेर सारा छुट्टा रखती। रामचरण कहता रहता, अम्मा इन्हें सौ रुपए लौटा, इन्हें पचास रुपए लौटा। अम्मा लोगों को पैसे के साथ-साथ हरी मिर्च और धनिया पत्ती भी उनके थैले में डालती रहती। दोनों माँ-बेटे का मोहक व्यक्तित्व ही ग्राहक को खींच लाता।

शिक्षा के बाद कुछ समय तक स्कूल में अध्यापन कार्य किया। सन् २००४ से कहानी लिखना शुरू किया। पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रही हैं।

बुजुर्गों पर विशेष स्नेह रखने के कारण अम्मा का भी हमारे ऊपर विशेष स्नेह रहता। कभी अकेले सब्जी खरीदने जाती तो पूछ बैठती, आज भइया नहीं आए बहिनी, ऑफिस चले गए क्या? या फिर कभी टहलते हुए जाती तो आज गाड़ी नहीं लाए, फिर दो-दो झोला उठाकर पैदल जाओगी बहिनी? कुशल-क्षेम पूछने के साथ-साथ इसी तरह की बातें होतीं। कोरोना काल शुरू होने के कारण मेरा कई महीनों तक उधर जाना नहीं हुआ। रामचरण फोन भी नहीं रखता, इसीलिए उससे सब्जी मँगवाना तो संभव नहीं था। अत: हम लोग कहीं और से सब्जी मँगवाने लगे, लेकिन अम्मा का खयाल हमेशा मन के अंदर छाया रहता।

इधर करीब दस महीने बाद मेरा उधर जाना हुआ। अम्मा पर नजर पड़ते ही जी धक से रह गया। अम्मा की सूनी माँग, बिंदी विहिन चेहरा एवं सूनी कलाइयाँ देखकर आँखों में आँसू आ गए। रामचरण से पता चला, बाबूजी करीब सोलह साल से लकवाग्रस्त थे। बिस्तर पर ही रहते। अम्मा घर के कामकाज के साथ उनकी सेवा-टहल भी करती। कोरोना काल में चल बसे।

अब अम्मा न हँसती, न मुसकराती। किसी के अभिवादन का भी जवाब नहीं देती। छुट्टा माँगने पर गालियों की बौछार कर देती, चल हट नहीं है छुट्टा। कोई ग्राहक हरी मिर्च, धनिया पत्ती माँगता तो कहती, "बाप का माल समझ रखा है क्या, फोकट में नहीं मिलेगा।" पैसे देकर माँगने पर भी उनका बड़बड़ाना चालू रहता।

रामचरण बेचारा शर्म से पानी-पानी हो जाता। डपटता रहता, "अम्मा, मैडमजी लोगों से ऐसे बात करते हैं क्या?" लेकिन अम्मा कहाँ सुनने वाली, उनका गाली देना अनवरत चलता।

दबी जुबान से सब बुदबुदाते—यह तो बिल्कुल पागल हो गई है। रामचरण इन्हें किसी डॉक्टर को दिखाओ। जितने लोग उतनी सलाहें। एक दिन हम देर से गए। ठेले पर भीड़ नहीं थी। मैंने रामचरण से पूछा, "बाबूजी की मौत का सदमा लग गया इन्हें।" रामचरण ने उदास भाव से जवाब दिया, "बाबूजी की मौत से ज्यादा सास-बहू के कलह से अम्मा टूट गई है मैडम जी। जब तक अम्मा का शरीर चला, बाबूजी की देखभाल के साथ-साथ घर के सारे काम काज, मेरे बच्चों को पालना, मेरे साथ सब्जी बेचना अम्मा ने सब निबटाया। लेकिन अब इनका शरीर नहीं चलता, घर के काम-काज नहीं कर पातीं तो मेरी घरवाली बहुत लड़ाई करती है। बिना काम किए एक रोटी भी इन्हें देने को तैयार नहीं होती। अभी तो दो महीने से मैडमजी, मैं नमक डालकर एक मोटी सी रोटी बना देता हूँ, अम्मा वही खाकर पानी पी लेती है। रामचरण के मुँह से ये सब सुनकर मेरी आँख भर आई। सब्जी का व्यापार करने वाली अम्मा, दुनिया भर के ग्राहकों को ताजी सब्जी खिलाने वाली अम्मा के हिस्से में सब्जी का एक कतरा भी नहीं। मन बेहद खराब हो गया। उस एक पल के लिए मन में अम्मा के लिए ढेर सारी संवेदनाएँ उपजीं। पूछ बैठी, "अम्मा, आपको खाने में क्या पसंद है?" अम्मा टुकुर-टुकुर मेरा मुँह देखने लगी। राम से पूछा तो कहने लगा—ये तो सब कुछ खाती है। मैडमजी, पसंद का तो मुझे भी आज तक पता नहीं चला। दूसरे दिन मैंने रोटी-सब्जी बनाई और एक डिब्बे में रखकर अम्मा के पास पहुँच गई।

"लो अम्मा, आपका कलेवा लाई हूँ, खा लो।" खाना देखकर अम्मा की आँखों में जो चमक आई, उसे मैं आज तक नहीं भूल पाई। मैंने फिर कहा, "गरम-गरम खा लो अम्मा।"

एक कौर खाते ही अम्मा के आँखों से धारा प्रवाह आँसू बहने लगे। रुँधे गले से बोली, "बहुत स्वाद बना है, बहिनी। जब से होश सँभाला है, गाली के साथ ही खाना मिला है। पहले माँ गालियाँ देती थी, फिर सास। अब पोतोह देती है। जुग-जुग जिओ, बहिनी।"

मैं हतप्रभ अवाक्, गाली देने वाली जुबान से मेरे लिए आशीर्वाद निकल रहे थे। मुझे लगा, प्यार की भाषा हर कोई समझता है, पगली अम्मा भी।

फ्लैट नं. १७२, मेधा अपार्टमेंट,
मयूर विहार (विस्तार),
नई दिल्ली-११००९१
दूरभाष : ९६५४१३७०८८

अभिनंदन नूतन वर्ष

कविता

• बी.डी. बजाज

अभिनंदन नववर्ष आगमन
मानो आया मौसम
नई उमंगों-अभिलाषाओं
की पूर्ति का प्रतिफलन,
प्रतिपादित करने का अवसर
आओ मिलकर खोजें हम
नए वर्ष की संभावनाएँ,
न आए मन-मस्तिष्क पर
बर्बर, महत्त्वाकांक्षाएँ
खोजें नए स्वप्न नई योजनाएँ
ईष्या-द्वेष को दें तिलांजलि
पुराने संबंधों में लाएँ
इक नई पुष्पांजलि,
अतीत को संबल बना
सुदृढ़ करें वर्तमान को

और संकल्प लें
भविष्य को सँवारने का
प्रस्फुटित हो नव विवेक
बेहूदा तर्क-वितर्क से बचें
गाएँ मिलकर एक ही टेक
खुद जीएँ और वंचितों का
रहे ध्यान भी नव वर्ष में
शुभ हो सभी मित्रों-पड़ोसियों को
नववर्ष की यह जीवन-यात्रा
खुशियों की बढ़ती रहे मात्रा
अपनी कमियों को भी टटोलें,
प्रेम और सौहार्द की भाषा बोलें।

ए-८३ गुजरांवाला टाउन
दिल्ली-११०००९
दूरभाष : ९८९९२६३०३०

'मैला आँचल' में प्रयुक्त धार्मिक गीत

• पवनेश ठकुराठी

सुप्रसिद्ध कथाशिल्पी फणीश्वर नाथ 'रेणु' का जन्म ४ मार्च, १९२१ को बिहार के अररिया जिले में फॉरबिसगंज के पास औराही हिंगना गाँव में हुआ था। उस समय यह पूर्णिया जिले में था। उनकी शिक्षा भारत और नेपाल में हुई। प्रारंभिक शिक्षा फारबिसगंज तथा अररिया में पूरी करने के बाद रेणु ने हाईस्कूल की परीक्षा नेपाल के विराटनगर आदर्श विद्यालय से उत्तीर्ण की। इन्होंने इंटरमीडिएट काशी हिंदू विश्वविद्यालय से १९४२ में उत्तीर्ण किया। इसके बाद वे स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़े। बाद में १९५० में रेणुजी ने नेपाली क्रांतिकारी आंदोलन में भी हिस्सा लिया, जिसके परिणामस्वरुप नेपाल में जनतंत्र की स्थापना हुई। आपने पटना विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के साथ छात्र संघर्ष समिति में सक्रिय रूप से भाग लिया और जयप्रकाश नारायण की संपूर्ण क्रांति में अहम भूमिका निभाई।

फणीश्वर नाथ 'रेणु'

फणीश्वरनाथ रेणु ने कहानी लेखन की शुरुआत १९३६ ई. के आसपास की। उस समय इनकी कुछ कहानियाँ प्रकाशित भी हुई थीं, किंतु वे किशोर रेणु की कहानियाँ अपरिपक्व थीं। १९४२ के आंदोलन में गिरफ्तार होने के बाद जब वे १९४४ में जेल से मुक्त हुए, तब घर लौटने पर रेणु जी ने 'बटबाबा' नामक पहली परिपक्व कहानी लिखी। 'बटबाबा' कहानी 'साप्ताहिक विश्वमित्र' के २७ अगस्त, १९४४ के अंक में प्रकाशित हुई थी। वर्ष १९७२ में रेणुजी ने अपनी अंतिम कहानी 'भित्तिचित्र की मयूरी' लिखी। उनकी अब तक उपलब्ध कुल कहानियों की संख्या ६३ है। 'रेणु' को जितनी प्रसिद्धि उपन्यासों से मिली, उतनी ही प्रसिद्धि उनको कहानियों से भी मिली। ठुमरी, अगिनखोर, आदिम रात्रि की महक, एक श्रावणी दोपहरी की धूप, अच्छे आदमी, संपूर्ण कहानियाँ, मेरी प्रिय कहानियाँ, प्रतिनिधि कहानियाँ आदि उनके प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं।

फणीश्वरनाथ रेणु का पहला उपन्यास 'मैला आँचल' था, जो १९५४ में प्रकाशित हुआ। इस आंचलिक उपन्यास ने रेणुजी को हिंदी साहित्य संसार में अपार ख्याति दिलाई। मैला आंचल के बाद रेणुजी के परती परिकथा, जुलूस, दीर्घतपा, कितने चौराहे, पलटू बाबू रोड आदि उपन्यास प्रकाशित हुए। अपने प्रथम उपन्यास 'मैला आँचल' के लिए रेणुजी को 'पद्मश्री' से सम्मानित किया गया।

रेणुजी को प्रेमचंद की सामाजिक यथार्थवादी परंपरा को आगे बढ़ाने वाला कथाकार कहा जाता है। इसीलिए इन्हें आजादी के बाद के प्रेमचंद की संज्ञा भी दी जाती है। रेणुजी के उपन्यास हों या फिर कहानियाँ सब में बिहार की आंचलिक बोलियों का जैसा स्वाभाविक समावेश हुआ है, वैसा शायद ही किसी अन्य कथाकार के कथा साहित्य में हुआ हो।

'मैला आँचल' उपन्यास की कथाभूमि बिहार के पूर्णिया जनपद का 'मेरीगंज' नामक ग्राम है। उपन्यास की समस्त घटनाएँ इसी गाँव के भीतर या इसी गाँव के इर्दगिर्द घटित होती हैं। आलोचक डॉ. उपेंद्र नारायण सिन्हा के अनुसार, वर्तमान में मेरीगंज गाँव को 'रानीगंज' के नाम से जाना जाता है, जो कोशिका की फरियानी और कमताहा नदी के मध्य अवस्थित है।

कथाकार फणीश्वरनाथ रेणु ने 'मैला आँचल' उपन्यास में अपने भावों को व्यक्त करने के लिए यत्र-तत्र गीत, भजन, लोकगीत, लोकगाथा, दोहे, शेर-ओ-शायरी, श्लोक व कविताओं का भरपूर मात्रा में प्रयोग किया है। रेणु के उपन्यास मैला आँचल में गीतों, लोकगीतों, भजनों, कविताओं आदि का जितना अधिक प्रयोग हुआ है, उतना शायद ही किसी अन्य उपन्यास में हुआ हो। इस लेख के माध्यम से 'मैला आँचल' उपन्यास में प्रयुक्त धार्मिक गीतों, भजनों व काव्य रचनाओं का उद्घाटन किया जा रहा है।

'मैला आँचल' उपन्यास के प्रारंभ में उपन्यासकार ने महंथ साहब की शिष्या लछमी को कुएँ के समीप सतगुरु साहेब का भजन गाते चित्रित

किया है—

जागहु सतगुरुसाहेब, सेवक तुम्हरे दरस को आया जी
जागहु सतगुरुसाहेब¨ ।
डिम-डिमिक-डिमिक, डिम-डिमिक-डिमिक !
भोर भयो भव भरम भयानक भानु देखकर भागा जी,
ज्ञान नैन साहेब के खुलि गयो,
थर-थर काँपत माया जी।
जागहु सतगुरुसाहेब¨ ।

सतगुरु महंथ साहब के सत्संग संबंधी प्रसंगों के माध्यम से उपन्यास में अनेक स्थलों पर भजनों को चित्रित होने का अवसर मिला है। उपन्यास में महंथ साहब द्वारा शिष्यों को भजन के माध्यम से ही ज्ञान देने का उल्लेख हुआ है—"सत्संग में महंथ साहब साधुओं और शिष्यों को उपदेश देते हैं, प्रश्नों के उत्तर देते हैं, अज्ञान अंधकार को अपनी वाणी से दूर करते हैं।"

सतगुरु सेवा सत्य करि माने सत्य विचार।
सेवक चेला सत्य सो, जो गुरु वचन निहार॥
फिर सातचक्र परिचय !
प्रथम चक्र आधार कहावे, गुद स्थल के माँही।
द्वितीय चक्र अधिष्ठान कहिए लिंगस्थल के माँही।
तृतीय चक्र मणिपूरण जानो नाभी स्थल¨ ।

'मैला आँचल' के गांधीवादी चरित्र बालदेव भी सत्संग स्थल में धुनी के पास बैठकर संत कबीर रचित ग्रंथ बीजक के पन्ने उलटते चित्रित हुए हैं—

बीजक बतावे बित्त को जो बित्त गुप्ते होय।
शबद बतावे जीव को, बूझे बिरला कोय॥

इस उपन्यास में महंथ साहब की शिष्या लछमी भी बीजक का वाचन करती चित्रित हुई है—

माया जाल बिखंडने सुर गुरु दुख परहरता।
सरबे लोक जनाच जेन सततं
हिया लोकिता !

महंथ साहब के निर्वाण के बाद लछमी, रामदास, चरनदास और गांव के कुछ कीरतनियाँ लोग महंथ साहब की देह को माटी देने के पश्चात् निर्गुण भजन गाते चित्रित हुए हैं—

गाँव के कीरतनियाँ लोग समदाउन शुरू करते हैं—

हाँ रे, बड़ा रे जतन से सुगा एक हे पोसल,
माखन दुधवा पिलाए।
हाँ रे, से हो रे सगुना बिरिछी चढ़ि बैठल

विगत १५ वर्षों से विभिन्न राष्ट्रीय, अंतरराष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं एवं संकलनों में हिंदी और कुमाऊँनी रचनाओं के साथ कुमाऊँनी और हिंदी में १७ पुस्तकों का प्रकाशन। कुमाऊँनी व हिंदी में लेखन हेतु राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत व सम्मानित।

पिंजड़ा रे धरती लोटाए ?

गौर के बाद रामदास खंजड़ी बजा-बजाकर गाता है—

कंहवां से हंसा आओल, कंहवां समाओल हो राम।
कि आहो रामा हो, कोन गढ़ कयल मोकाम, कवन लपटाओल हो राम !

डिम-डिमिक-डिमिक¨

सुरपुर से हंसा आओल, नरपुर समाओल हो राम,
कि आहो रामा हो, कायागढ़ कयला मुकाम,
मायहि लपटाओल हो राम !

उपन्यासकार ने बिना महंथ के मठ को बिना प्राण की काया के समान बताया है। उसके अनुसार यह जीवन नश्वर है, किंतु आत्मा अजर-अमर है-

कांचहि बाँस के पिंजड़ा,
जामे दियरो न बाती हो।
अरे हंसा उड़ल आकाश,
कोई संगो न साथी हो !

वस्तुत: भारत के सभी लोक-समाजों में लोकगीतों, लोकनृत्यों, लोकगाथाओं, लोककथाओं आदि का प्रचलन है और इन लोक आधारित कलाओं में काफी हद तक समानताएँ होती हैं। बिहार के इस लोकनृत्य का उपन्यासकार ने उपन्यास में जिस तरह से चित्रण किया है, वह उत्तराखंड के लोकगीत 'बैर' से मिलता-जुलता है। यानी 'विद्यापति नाच' और 'बैर' लोकगीत में इस दृष्टि से समानताएँ दीखती हैं कि दोनों में श्रोता और गायक आपस में गेय पदों में सवाल-जवाब कर भरपूर चुहलबाजी किया करते हैं। इनमें स्वाँग करने का रिवाज भी रहता है। 'विद्यापति नाच' से संबंधित अग्रिम काव्य पंक्तियों में लोकगायक ने संत कबीर का नाम लेकर अपनी पंक्तियाँ जोड़ दी हैं। वस्तुत: यह उदाहरण लोक-समाज व लोक-साहित्य की प्रवृत्ति को दरशाता है—

कहे कबीर सुनो भाई साधो
सब दिन करी बेगारी
खंजड़ी बजाके गीत गवैछी
फटकनाथ गिरधारी रे धिरजा।

बिहार के इस लोकनृत्य का उपन्यासकार ने उपन्यास में जिस तरह से चित्रण किया है, वह उत्तराखंड के लोकगीत 'बैर' से मिलता-जुलता है। यानी 'विद्यापति नाच' और 'बैर' लोकगीत में इस दृष्टि से समानताएँ दीखती हैं कि दोनों में श्रोता और गायक आपस में गेय पदों में सवाल-जवाब कर भरपूर चुहलबाजी किया करते हैं। इनमें स्वाँग करने का रिवाज भी रहता है। 'विद्यापति नाच' से संबंधित अग्रिम काव्य पंक्तियों में लोकगायक ने संत कबीर का नाम लेकर अपनी पंक्तियाँ जोड़ दी हैं।

इस उपन्यास की चरित्र लक्षमी के चरित्र के माध्यम से अनेक स्थानों पर धार्मिक वातावरण की सर्जना हुई है। लक्षमी उपन्यास में अनेक स्थानों पर भजन गाती चित्रित हुई है, लछमी मुसकराकर गाने लगती है—

संतो हो, करूँ बंहियाँ वल आपनी
छाड़ूँ बिरानी आस!
संतो हो, जिंहिं अँगना नदिया बहै,
सो कस मरे पियास! हो संतो, सो कस मरे पियास!

इस उपन्यास का चरित्र रामदास लक्षमी का हाथ पकड़कर उससे प्रेम का इजहार करना चाहता है, किंतु लक्षमी अपने दोनों पाँवों को मोड़कर, पूरी ताकत लगाकर रामदास की छाती पर वार करती है। रामदास उलटकर गिर पड़ता है और अपने सतगुरु को याद करता है—

संतो अचरज भौ एक भारी
पुत्र धयल महतारी।
एके पुरुष एकहि नारी
ताके देखु बिचारी।

'मैला आँचल' में लछमी दासिन और बालदेव से जुड़े प्रसंगों में धार्मिक और दार्शनिक गीतों की सर्जना हुई है। लछमी के मन की चंचलता को दरशाने के लिए रेणुजी ने निम्न पंक्तियों की रचना की है—

ई मन चंचल, ई मन चोर,
ई मन सुध ठगहार।
मन मन करत सुर नर मुनि,
मन के लक्ष दुआर।

इस उपन्यास की लछमी दासिन लालटेन की रोशनी में बीजक का अध्ययन करती चित्रित हुई है—

जाना नहिं बूझा नहिं, समुझि किया नहीं गौन!
अंधे को अंधा मिला, राह बतावे कौन?

इस उपन्यास में कालीचरन के माध्यम से सोशलिस्ट पार्टी के ऑफिस में भीड़ लगने व उस स्थान पर पुराने जमाने के कीर्तन नारदी-भठियाली होने का उल्लेख हुआ है—

आजु से बिराजु श्याम कदली के छैयाँ,
आवत मोहनलाल बंशी बजैयाँ!
पीतबसन मकराकृत कुंडल¨ !

इस उपन्यास में राजबल्ली महतो के हारमोनियम बजाने व ग्रामीणों के सुराजी कीर्तन गाने का भी चित्रण हुआ है—

भारत का डंका लंका में
बजवाया बीर जमाहिर ने।

'मैला आँचल' में डॉक्टर प्रशांत व कमला (कमली) दोनों प्रेमियों के संभाषणों व चुहलबाजी के माध्यम से हास्य का वातावरण सृजित हुआ है। एक बार डॉक्टर प्रशांत के कमला से यह पूछने पर कि अपने बाप की शिकायत कोई क्यों नहीं बरदाश्त कर सकता? वह मुसकराती हुई जवाब देती है, विवाह के गीत में एक जगह शिवजी-पार्वती के पिता की टोकरी भर शिकायत करते हैं—

एक बेर गेलीं गौरा तोहरो नैहरवा से,
बइठे ले देलक पुआर,
कोदो के खिचुड़ी रंधाओल मैना सासू!

इस उपन्यास में ग्रामीणों द्वारा आजादी का जश्न मनाने के दौरान गाया जा रहा उजाड़दास का कीर्तन गीत तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों का सजीव चित्रण करता है—

भारत में आयल सुराज
चलु सखी देखन को¨
कथि जे चढ़िये आयेल
भारथमाता
कथि जे चढ़ल सुराज, चलु सखी देखन को!
कथि जे चढ़िये आयेल
बीर जमाहिर
कथि पर गंधी महराज। चलु सखी¨
हाथी चढ़ल आवे भारथमाता
डोली में बैठल सुराज! चलु सखी देखन को!
घोड़ा चढ़िए आए बीर जमाहिर,
पैदल गंधी महराज। चलु सखी देखन को!

इस उपन्यास में स्वराज के जश्न के बहाने ही औरही-हिंगना का लोकगायक भठियाली कीर्तन गीत गाता चित्रित हुआ है—

हाँ रे मोरी रे ए ए ए! हाँ आं आं
आं आं आं आरो हे!
बहु कस्टे सू रा ज पैलो रे
भारथ संतान ओ रे
कोटि-कोटि छयला पोयेला
दि लो बो लि दान आ रे
हाँ रे मोरी रे ए ए ए! हाँ आं आं!

इस उपन्यास के चरित्र बालदेव और लछमी परस्पर प्रेम के समक्ष विवश नजर आते हैं। बालदेव के प्रेम में लछमी आश्रम का आसन तोड़ने के लिए तैयार हो जाती है। दोनों की भावनाओं को रेणुजी ने निम्न काव्य पंक्तियों के

'मैला आँचल' में डॉक्टर प्रशांत व कमला (कमली) दोनों प्रेमियों के संभाषणों व चुहलबाजी के माध्यम से हास्य का वातावरण सृजित हुआ है। एक बार डॉक्टर प्रशांत के कमला से यह पूछने पर कि अपने बाप की शिकायत कोई क्यों नहीं बरदाश्त कर सकता? वह मुसकराती हुई जवाब देती है, विवाह के गीत में एक जगह शिवजी-पार्वती के पिता की टोकरी भर शिकायत करते हैं—
एक बेर गेलीं गौरा तोहरो नैहरवा से,
बइठे ले देलक पुआर,
कोदो के खिचुड़ी रंधाओल मैना सासू!

माध्यम से चित्रित किया है—

आ रे! जोगिया के नग्र बसे मति कोई
ओहो संतो``जा रे बसे सो जोगिया होई।

इस उपन्यास के धार्मिक प्रवृत्ति के चरित्र लक्ष्मी दासिन और बालदेवजी दोनों गांधीजी को याद करते हुए 'रघुपति राघव राजाराम' भजन गाते चित्रित हुए हैं—

रघुपति राघव राजाराम पतित पापन सीताराम``बालदेवजी आँखें मूँदकर गाना शुरू करते हैं।

जै रघुनंदन जै घनश्याम, जानकीबल्लभ सीताराम``लछमी दासिन अगला आखर उठाती है।

'मैला आँचल' उपन्यास में ३१ जनवरी, १९४८ की रात को कमली के घर पर रेडियो में गीतापाठ होने का चित्रण हुआ है। वस्तुत: यह गीता पाठ महात्मा गांधी की आत्मा की शांति हेतु हो रहा होता है। इस पाठ में गीता के निम्न श्लोक रेडियो में बजते सुनाई देते हैं—

१. अन्तवंत इमे देहा नित्यस्योक्ता शरीरिण:।
अनाशिनोप्रमेयस्य तस्माद्यध्यस्व भारत॥

२. वासांसि जीर्णानि यथाविहाय, नवानि गृहणाति नरोपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देहि।
नैनं छिंदंति शस्त्राणि, नैनं दहति पावक: !
जन्मबंधविनिर्मुक्ता पदं गच्छन्त्यानामयम्॥

आजादी के बाद जब महात्मा गांधीजी की हत्या कर दी जाती है, तो संपूर्ण देश दुख के सागर में डूब जाता है। इस उपन्यास में गांधीजी की हत्या की खबर सुनने के बाद गाँव के भकतिया लोगों द्वारा अरथी को कंधे में रखकर जुलूस निकालने के दौरान समदाउन शुरू करने और उसकी प्रारंभिक पंक्तियों के सुनते ही सबके रुदन करने का चित्रण हुआ है—

आं रे काँचहि बाँस के खाट रे खटोलना
आखैर मूंज के र हे डोर!
हाँ रे मोरी रे ए ए ए हां आं आं रामा रामा!
चार समाजी मिलि डोलिया उठाओल
लई चलाल जमूना के ओर!

'मैला आँचल' उपन्यास में प्रयुक्त अंतिम काव्यात्मक पंक्तियाँ श्लोकों की हैं, जो मानव जीवन की सत्यता का उद्घाटन करती हैं—

अनेकवक्रनयनमनेकाद्‌भुतदर्शनम्।
अनेक दिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम्।
दिवि सूर्य सहस्त्र``
```नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिं।

अत: स्पष्ट है कि कथाकार फणीश्वरनाथ रेणु ने 'मैला आँचल' उपन्यास में कथा के प्रारंभ से लेकर अंत तक स्थान-स्थान पर अपने भावों को व्यक्त करने के लिए धार्मिक गीतों, भजनों, कीर्तन आदि का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग किया है। इन धार्मिक गीतों व भजनों ने उपन्यास में भक्तिपूर्ण व धार्मिक वातावरण की सर्जना की है। इस उपन्यास में संस्कृति के महत्त्वपूर्ण आयामों गीत, भजन, कीर्तन आदि के माध्यम से प्रमुखतया बिहार के औरही-हिंगना (मैथिल अंचल) के हिंदू ग्रामीणों की सनातन धर्म के प्रति आस्था व्यक्त हुई है। 'बीजक' (संत कबीर) और श्रीमद्भगवदगीता से उद्धत रचना संदर्भ इसके उदाहरण हैं। इसके अलावा इस उपन्यास में महंथ साहब (महंत साहब) और उनके शिष्यों के माध्यम से निर्गुण भक्ति और संसार की नश्वरता का चित्रण हुआ है।

वस्तुत: उपन्यास में भक्तिपूर्ण वातावरण सृजित करने के साथ ही इन धार्मिक गीतों के माध्यम से रेणुजी ने आजादी के आसपास की बिहार की समकालीन सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक परिस्थितियों का उद्‌घाटन भी किया है। इन गीतों में गांधीजी व उनके सिद्धांतों के प्रति लोगों की आस्था गहराई तक देखी जा सकती है। निश्चित रूप से इन विधाओं का रसास्वादन करने से पाठकों का हृदय बिहार के लोक-अंचल में तो विचरण करेगा ही, साथ ही उन्हें भक्ति रस के आस्वादन से आनंद की प्राप्ति होगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

लोअर माल रोड, तल्ला खोल्टा,
अल्मोड़ा-२६३६०१ (उत्तराखंड)
दूरभाष : ९५२८५५७०५१
pawant2015@gmail.com

इस अंक के चित्रकार

सिद्धेश्वर

जाने-माने लेखक एवं चित्रकार। 'बूँद-बूँद सागर' (लघुकथा-संग्रह); 'इतिहास झूठ बोलता है' (कविता-संग्रह); 'ढलता सूरज-ढलती शाम' (कहानी-संग्रह); 'दहशतजदा' (उपन्यास-अंश) प्रकाशित। इसके अतिरिक्त कई पुस्तकों का संपादन किया। कई सम्मान व पुरस्कारों से सम्मानित। संप्रति वरीय टिकट परीक्षक (पूर्व मध्य रेलवे)।

सिद्धेश सदन
किड्स कार्मल स्कूल के बाएँ
द्वारकापुरी, रोड नं.-२, हनुमाननगर,
कंकड़बाग, पटना-८०००२०
दूरभाष : ९२३४७६०३६५

शिकारपुर के उत्पाती

• गोपाल चतुर्वेदी

हमारे छोटे शहर में इतनी इनसानी विविधता है कि दुनिया के सबसे बड़े चिड़ियाघर में क्या होगी? कोई विपन्न है, कोई संपन्न, शोषित, अपाहिज, पीड़ित, दलित, शक्तिशाली, निर्बल, कुबड़े, काने, हर तरह के मानवीयता के अजूबे उपलब्ध हैं। इनमें शारीरिक एकता दो पैर, दो हाथ, कान-नाक और गरदन की है। दीगर है कि कुछ अंग कर्तव्य निभाने में सक्षम न हों? यदि कोई मानसिक समानता तलाशे तो सब दुखी हैं। बस मात्रा का अंतर है। कोई कम है, कोई ज्यादा, सब सुख के अपने-अपने सपने की तलाश में खोए हैं। सबके अलग-अलग व्यक्तिगत शौक हैं। जितने इनसान हैं, उतने स्वार्थ हैं। किसी की भूख पेट की है, किसी की पैसे की। किसी का स्वार्थ सत्ता है, तो किसी का अभाव से मुक्ति। कोई बेरोजगार नौकरी का इच्छुक है तो कोई छल-कपट, धोखे से जीवनयापन का। कुछ-न-कुछ सब चाहते हैं। बस यह कहना कठिन है कि क्या चाहते हैं?

यदि इन में कुछ जन्मजात उत्पाती हैं, तो यह एक सामान्य सा तथ्य है। इनके बचपन के उत्पातों से इनके माता-पिता तंग थे। वहाँ उत्पाती स्कूल भेजे गए। जैसा सरकारी स्कूलों का चलन है। पढ़ाई के अलावा स्कूल में सब होता है। कभी बच्चों के लिए आवंटित मिड-डे डील का पैसा स्कूल के बुजुर्ग खा जाते हैं, कभी शिक्षा विभाग के कर्मचारी। हमारे उत्पाती नायक से इनके 'मा-साब' डरते। एक बार पूरे गाँव ने एक मनोरंजन दृश्य देखा। 'मा-साब' भीषण गरमी से परेशान, बिजली के अभाव में, कमीज उतारकर बच्चों की क्लास ले रहे थे कि उत्पाती उनकी कमीज ले उड़ा। वह पीछे-पीछे, उत्पाती आगे-आगे। युवा 'मा-साब' एक खेत में गिरे पाए गए और उत्पाती उनकी कमीज से नाक पोंछता घर पर। यदि कोई देखता तो शर्तिया उत्पाती को भविष्य का धावक-नायक मानता, इस फुर्ती से वह स्कूल से चंपत हुए और रास्ते की बाधाएँ फाँदते, घर पहुँचे। धीरे-धीरे इनकी ख्याति ऐसी बढ़ी कि इनके पहले वह पहुँच जाती। इनकी कॉलेज की पढ़ाई के प्रवेश के समय यही हुआ। कॉलेज के प्रिंसिपल ने इन्हें प्रवेश देने से इनकार कर दिया। वह तो स्थानीय विधायक उत्पाती की जाति के थे तो इन्हें उनकी सिफारिश पर प्रवेश मिला। वहाँ शिक्षा के दौरान इनकी उत्पाती छवि और निखरी।

यह कॉलेज की यूनियन में इतने सक्रिय रहे कि एक प्राध्यापक के विरुद्ध प्रदर्शन के दौरान कॉलेज की खिड़कियों के सारे शीशे चूर-चूर हो गए। प्राध्यापक का गुनाह इतना था कि उसने उत्पाती को सीटी बजाकर फिल्मी गानों की धुन सुनाने से रोका था। यूनियन की युनिवर्सिटी में रहकर उत्पाती ने अपने प्रिय विषय समाज शास्त्र में एम.ए. की डिग्री प्रथम श्रेणी के साथ हासिल की। वह भी नकल करके। इतना ही नहीं, वह अपनी बैच के गोल्ड मैडलिस्ट भी साथियों द्वारा एकमत से माने जाते। ऐसो का भविष्य किसी प्रकार की नौकरी के धरातल पर सीमित न रहकर समाज सेवा या सियासत के आसमान में ऊँची उड़ाने भरता है। पर उत्पाती का दिमाग कुछ अलग कुलाँचें भर रहा था। वह तो बचपन से लंबी दौर का विशेषज्ञ जो ठहरा, उसने सियासत को यह सोचकर घास न डाली कि एक दल के दायरे में सीमित होना उसे स्वीकार न था। बार-बार दल बदलने से उसकी उजली जल छवि में दाग लगते। उत्पाती होने के कारण फिलहाल सब उससे खौफ खाते। कब कहो क्या न कर डाले? समाज सेवा, उसकी मान्यता है कि चंदे और देशी-विदेशी सरकारी अनुदान की भीख से अपना अपनी जेब भरने की साजिश है। ऐसी स्वैच्छिक संस्थाएँ जनसेवा का अभिनय भर करके अपनी व्यक्तिगत उल्लू सीधा करती हैं। सरकार की कल्याणकारी नीतियों और इनके सम्मानित प्रयासों से स्वतंत्रता के इतने वर्षों में देश अब तक स्वर्ग होता। हुआ भी है। तभी तो इतनी देशवासी, बेरोजगारी, अभाव और कुपोषण और इलाज के अभाव में स्वर्गवासी हो चुके हैं। उत्पाती के समाज के अराजक तत्त्वों से निकट के संबंध रहे हैं। वह सारे के सारे उत्पाती का लोहा मानते हैं। उत्पाती ने सोचा कि समाज में इनकी उपयोगी भूमिका होनी चाहिए, जिससे प्रजातंत्र और इनका दोनों का भला हो।

उसे यह भी विचार आया कि जब आंदोलन धरना, प्रदर्शन सब में भीड़ अनिवार्य है, वरना लक्ष्य कितना भी आदर्श और नेक हो, जन-बल

के अभाव में आंदोलन टाँय-टाँय-फिस्स हो जाता है। प्रजातंत्र की सफलता और जन-आंदोलनों का चोली-दामन का साथ है। यह सब मानते हैं कि लोकतंत्र की कामयाबी सार्थक और प्रभावशाली विरोध पर निर्भर है। इसके लिए जनसंसाधन की सहज और सुगम उपस्थिति बेहद आवश्यक है। बिना उचित प्रबंधक के यह कैसे संभव है। उत्पाती ने इस परिप्रेक्ष्य में निर्णय किया कि वह जनता के कल्याण के लिए 'जन संसाधन प्रबंधन' संस्थान बनाएगा। वह स्वयं इसका मुख्य कार्यकारी अधिकारी होगा। किसी भी आंदोलन, अनशन, धरना-प्रदर्शन के लिए वह जन, संसाधन का प्रबंध करेगा। उदाहरणार्थ, किसी प्रदर्शन के लिए चार-पाँच सौ समर्थकों की आवश्यकता है। हर व्यक्ति की दर पर दस प्रतिशत मुनाफा लगाकर वह ट्रक, ट्रैक्टर, ट्राली के माध्यम से इनकी 'सप्लाई' करेगा। इसमें दिहाड़ी, वाहन, भोजन, घायल की चिकित्सा, जेल जाने का भुगतान व्यय और सब 'फीस' में शामिल होगा। यदि कोई भीड़ के नियंत्रण के दौरान चल बसे तो ऐसों को संस्थान अनुदान भी देगा और सरकार से भी दिलवाएगा। उत्पाती इसके भरपूर प्रबंध की व्यवस्था स्वयं करने में अग्रणी होगा। इसमें प्राण गँवाने वाला कोई और नहीं है, उत्पति में उसी का भाई-बंधु है। उत्पाती का यकीन है कि ऐसे संस्थान हर प्रजातंत्र की अनिवार्यता है।

एक और आवश्यक तथ्य यह है, कि यह सेवा हर सिद्धांत, उसूल, दल के पूर्वग्रह से मुक्त है। वर्तमान समय की भौतिकता की आस्था के अनुरूप इसमें दलदल की जरूरत नहीं है। यह व्यवस्था दल निरपेक्ष है। सैक्युलर हो या कट्टर कम्युनल, हर दल उचित चार्ज चुकाकर जन से साधन का इंतजाम कर पाएगा। उसूल सिद्धांत तो दिखाने के जनप्रिय हाथी-दाँत हैं, खाने चबाने के तो समान सामान्य दाँत हैं। यह सामान्य दाँत सत्ता चबाने की हसरत में कुछ तो भी प्रदर्शन करने को प्रस्तुत हैं। इन्हें न झूठ से परहेज है, न सार्वजनिक रूप में किसी भी वादे-आश्वासन की। बकवास से। हर सियासी दल का इकलौता लक्ष्य सत्ता हथियाना है। उस प्रक्रिया के दौरान धरना, जुलूस, आंदोलन, प्रदर्शन भी करना ही करना। नीतियों या मुद्दों में क्या जनता के लिए उपयोगी है क्या नहीं, इससे इनका दूर-दूर का वास्ता नहीं है। यह सब विरोध का नाटक वह सीढ़ियाँ हैं, जिन पर चढ़कर सत्ताधारी दल को नीचा दिखाया जा सके और जनता के वोट जुगाड़ हो सके। उत्पाती का धंधा हर प्रजातंत्र का एक लोकप्रिय पेशा है। जन-संसाधन हर दल की दरकार है।

जैसा सर्वविदित है, इक्कीसवीं भौतिकता की सदी है। नैतिकता जीवन-मूल्य और सादा जीवन, उच्च विचार आदि बस अतीत की बातें हैं। चुनाव वर्तमान में एक खर्चीला सौदा है। करोड़ों का खेल है। दल चलाने का खर्चा, प्रचार सामग्री, मीडिया पर थोबड़ा दिखने आदि सभी में दलों को पूँजीपतियों का सहयोग अपरिहार्य है। उन्हीं के दान-चंदे से दल चलने है, चुनाव लड़े जाते हैं, और आंदोलन आदि किए जाते हैं। उत्पाती के जन संसाधन का प्रयोग ऐसे ही समृद्ध उद्योगपतियों के धन से होता है। यह एक ऐतिहासिक सच है कि आजादी के संघर्ष काल से धनपतियों का इसमें आर्थिक योगदान रहा है और गांधी जैसे नेताओं ने इसका सम्मान भी किया है। तब आजादी का सपना एक ऐसा आदर्श था जिसके प्रति जन-जन का स्वैच्छिक सहयोग था। अब न वैसे नेता हैं, न वैसा जन-सहयोग। आज के आंदोलन भाड़े की भीड़ पर निर्भर है, जिसमें उत्पातियों की अहम भूमिका है। ऐसों का मूल उसूल केवल 'पैसा दे, भीड़ ले' का है। लगता है कि हर दल के पास कार्य-कर्ताओं का अभाव है। कौन अपना वक्त जाया करके आंदोलन-प्रदर्शन में भागीदारी करे और वर्दी के डंडे खाने का खतरा उठाए? देखने में आया है कि प्रदर्शन के दौरान डंडे खाने की नियति कार्यकर्ताओं की है और सुर्खियों में रहने का सौभाग्य नेताओं का। खतरा भाँपते ही नेता या तो नौ-दो-ग्यारह होते हैं या वर्दी द्वारा कैद कर दिए जाते हैं। कहीं वह हिंसा के शिकार न हों, या अश्रुगैस अथवा लाठीचार्ज के। गिरफ्तार वर्करों को ले जाने वाली बस पर नेता पहले से ही सवार मुस्की छाँटता नजर आता है। बड़े नेता का यही तो कमाल है, वह विरोध प्रदर्शन में भी सबसे आगे है। वह सर्वथा सुरक्षित है और धन प्रदर्शन में भी अग्रणी बड़े पूँजीपतियों के दान-चंदे का माध्यम वही है। उन्हीं के जरिए पैसे की गुपचुप या खुले आम आपूर्ति होती है। उनके रहन-सहन, सुरक्षा, वाहन, निवास आदि सब ही धन के दिखाने के साधन है। उधार के रंगीन पंख लगाकर वह खुद को किसी सुरम्य उद्यान में टहलते हुए मोर का भ्रम पालते हैं। दीगर है कि उनके चहेते कार्यकर्ता भी इस मुगालते में नहीं हैं। वह भी समझते हैं कि यह किसी पूँजीपति की कृपा पर बस ठाठ-बाट से जिंदा हैं। जाहिर है कि पूँजीपतियों की वर्तमान प्रजातंत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

जैसा सर्वविदित है, इक्कीसवीं भौतिकता की सदी है। नैतिकता जीवन-मूल्य और सादा जीवन, उच्च विचार आदि बस अतीत की बातें हैं। चुनाव वर्तमान में एक खर्चीला सौदा है। करोड़ों का खेल है। दल चलाने का खर्चा, प्रचार सामग्री, मीडिया पर थोबड़ा दिखने आदि सभी में दलों को पूँजीपतियों का सहयोग अपरिहार्य है। उन्हीं के दान-चंदे से दल चलने है, चुनाव लड़े जाते हैं, और आंदोलन आदि किए जाते हैं। उत्पाती के जन संसाधन का प्रयोग ऐसे ही समृद्ध उद्योगपतियों के धन से होता है। यह एक ऐतिहासिक सच है कि आजादी के संघर्ष काल से धनपतियों का इसमें आर्थिक योगदान रहा है और गांधी जैसे नेताओं ने इसका सम्मान भी किया है।

कभी-कभी हमें लगता है कि आंदोलनजीवी और उत्पातियों में काफी समानता है। एक के लिए आंदोलन अपनी नेतागीरी की दुकान चलाने का साधन है, दूसरे के लिये धनोपार्जन का। दोनों किसी भी उसूल सिद्धांत से पीड़ित नहीं हैं। दोनों को उचित अवसर का इंतजार है। एक कैमरे के सामने आने को उत्सुक दूसरा उससे बचता है। कहीं आयकर की 'रेड' न पड़ जाए? उसकी कमाई भीड़ की सप्लाई की

है। उसकी सही संख्या का अनुमान भी कठिन है। वह मानता है कि वह अपनी उत्पाती की भूमिका से सुखी है। वर्तमान विधि से उसे कमाई की सुविधा भी है और उत्पात मचवाने का संतोष भी। उसका संतोष तब आनंद में बदलता है, जब जेल जाने से बचने के अलावा, वह घायलों की सहायता भी करता है। उसे महसूस होता है कि वह किस नेता से कम है? उल्टे, नेता ही उस पर भीड़ और देय दर में रियायत के लिए निर्भर है। सब चुनाव में उससे सहयोग की भीख माँगते नजर आते हैं। उत्पात जीवी और आंदोलनजीवी में एक अन्य समानता है। दोनों धर्म और जाति से कतई प्रभावित नहीं है। आंदोलन का मुद्दा जनविकास का है या जनविनाश का, दोनों को इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है। उनका प्रमुख आकर्षण आंदोलन है, उसका विषय नहीं। तभी तो जीवी बस कपड़े और चोला बदलकर हर आंदोलन का अहम हिस्सा है, उत्पाती की रुचि उससे अपनी वसूली में। आंदोलन की सफलता, असफलता से दोनों का कोई लेना-देना नहीं है। जैसे लेखक अपने पुरस्कार गिनता है, आंदोलनजीवी अपने आंदोलनों की तादाद। न लेखक को गुणवत्ता की चिंता है, न जीवी को आंदोलन की कामयाबी की। उसे शर्त है कि उसने आंदोलन में हर संभव सहयोग दिया। यहाँ तक कि गिरफ्तारी भी दी, जेल भी गया। हर प्रयास से आंदोलन की सफलता का धर्म निभाया पर वह असफल हो गया तो उसका क्या कुसूर? वह आंदोलनजीवी भी है और वामपंथी सैक्युलर भी। फिर भी उसका 'गीता' में विश्वास है। वह अपना कर्म करता है, बिना फल की इच्छा के। 'जीवी' की सेवा, सत्ता प्रेरित है, वहीं उत्पाती की धन प्रेरित! आंदोलन के लक्ष्य से दोनों का कोई लेना-देना नहीं है।

यों दोनों को यकीन है कि लोकतंत्र की सफलता में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है। एक को मुगालता है कि आंदोलन ही जनतंत्र की आत्मा है, दूसरे का आकलन है कि उसी का सहयोग आंदोलन को आंदोलन का रूप देता है, वरना बिना भीड़ के वह आंदोलन कैसे कहलाता? 'जीवी' या उत्पाती में कौन अधिक महत्त्वपूर्ण है, यह निर्णय करना कठिन है जनतंत्र में जन किसके कारण अधिक भुगता है, यह निर्णय जन पर ही छोड़ना शायद उचित हो?

साअ
९/५, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

लेखकों से अनुरोध

- मौलिक तथा अप्रकाशित-अप्रसारित रचनाएँ ही भेजें।
- रचना फुलस्केप कागज पर साफ लिखी हुई अथवा शुद्ध टंकित की हुई मूल प्रति भेजें।
- पूर्व स्वीकृति बिना लंबी रचना न भेजें।
- केवल साहित्यिक रचनाएँ ही भेजें।
- प्रत्येक रचना पर शीर्षक, लेखक का नाम, पता एवं दूरभाष संख्या अवश्य लिखें; साथ ही लेखक परिचय एवं फोटो भी भेजें।
- डाक टिकट लगा लिफाफा साथ होने पर ही अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं। अतः रचना की एक प्रति अपने पास अवश्य रखें।
- किसी अवसर विशेष पर आधारित आलेख को कृपया उस अवसर से कम-से-कम तीन माह पूर्व भेजें, ताकि समय रहते उसे प्रकाशन-योजना में शामिल किया जा सके।
- रचना भेजने के बाद कृपया दूरभाष द्वारा जानकारी न लें। रचनाओं का प्रकाशन योजना एवं व्यवस्था के अनुसार यथा समय होगा।

एक मुट्ठी रेत

• मनोज जैन

चर्चित युवा नवगीतकार। 'एक बूँद हम', 'धूप भरकर मुट्ठियों में' आदि नवगीत-संग्रह चर्चित शोध संदर्भ ग्रंथों में रचनाएँ प्रकाशित। अनेक संस्थाओं द्वारा पुरस्कृत व सम्मानित।

तन पिंजरे के तार तोड़कर

चले गए
बाबूजी
घर में, दुनिया भर का
दर्द छोड़कर

शूल सरीखी नजर बहू की
बोली लगती नदी लहू की

बेटा नाजुक
हाल देखकर
चल देता है दृष्टि मोड़कर!

ताने सुनती कैसे-कैसे
लगती शिलाखंड हो जैसे

लिये गोद में
कुंठा बैठी
अपने दोनों हाथ जोड़कर

गहन उदासी अम्माँ ओढ़े
शायद ही अब चुप्पी तोड़े

चिड़िया-सी
उड़ जाना चाहे
तन-पिंजरे के तार तोड़कर

एक मुट्ठी रेत

एक तू ही
भर नहीं
अनिकेत।

मैं नदी थी,
रह गई हूँ
एक मुट्ठी रेत।

गाल मेरे
चूमते थे
पाखियों के दल।

मुग्ध होती थी
स्वयं की सुन
सजल कलकल।

अब सिमट कर
रह गई हूँ
आह भर समवेत।

पेंग भरते
घाट पर आ
शावकों के झुंड।

अब नहीं हैं
पास में सूखे
हुए दो कुंड।

कूदते हैं
वक्ष पर मेरे
धमाधम प्रेत।

एक पन्ना अथ
रहा तो एक
इति इतिहास।

मैं बुझाना
चाहती अब
भी सदी की प्यास।

ईख तो मैं
हूँ नहीं
ओ रे, सचेतक!
चेत।

निर्वासित तुलसी

लगे अस्मिता
खोने अपनी
धीरे-धीरे गाँव।

राज पथों के
सम्मोहन में
पगडंडी उलझी।
निर्धनता
अनबूझ पहेली,
कभी नहीं सुलझी।

अनाचार के
काले कौवे
उड़-उड़ करते काँव।

राजनीति की
बाँहें पकड़ीं
पकड़ लिया है मंच।
बँटवारा
बंदर सा करते
सचिव और सरपंच।

पश्चिम का
परिवेश जमाए
अंगद जैसा पाँव।

छोड़ जड़ों को निठुर
शहर की
बातों में आते।
लोकगीत को छोड़
गीतिका,
पश्चिम की गाते।

सीख रहीं हैं
गलियाँ चलना
आज शकुनि-से दाँव।

दंश सौतिया
झेल रही हैं,
बूढ़ी चौपालें।
अपनी ही जड़
लगीं काटने
बरगद की डालें।

ढूँढ़ रही निर्वासित
तुलसी
घर में थोड़ी छाँव॥

छौंक लगाना

अकुलाता है
प्राण पखेरू
बैठा तन की जेल में।
जीना दूभर
हुआ हमारा
महँगाई के खेल में।

चिंताग्रस्त रसोई
किससे अपना
दर्द कहे।
चूल्हा बेबस
चक्की गुमसुम
बेलन रोज दहे।

डूब रही है
रोज दिहाड़ी
एक पतीली तेल में।

मन झरिया का
हुआ कड़ाही से
बतियाने का।
चढ़ते भावों
ने बदला है
स्वाद जमाने का।

छौंक लगाना
मजबूरी है
अब तो रोज डढेल में।

मिलना-जुलना
नाता-रिश्ता
सबकुछ छूट गया।
नए दौर में
आम आदमी
कितना टूट गया।

सात जनम भी
कम लगते हैं
अपनेपन के मेल में।

साअ
१०६, विट्ठल नगर,
लालघाटी, भोपाल-४६२०३०
(म.प्र.)
दूरभाष : ९३०१३३७८०६

2020-21 के नए प्रकाशन

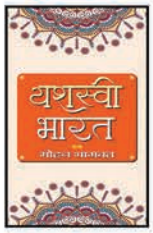

- डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम
  - **माय लाइफ** 250.00
  - **द गाइडिंग लाइट** 400.00
- मोहन भागवत
  - **यशस्वी भारत** 500.00
- कैलाश सत्यार्थी
  - **कोविड-19 : सभ्यता का संकट और समाधान** 250.00
- सुनील आंबेकर
  - **राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ : स्वर्णिम भारत के दिशा-सूत्र** 500.00
- हिंडोल सेनगुप्ता
  - **अखंड भारत के शिल्पकार सरदार पटेल** 700.00
- रमेश पोखरियाल 'निशंक'
  - **मूल्य आधारित शिक्षा** 300.00
  - **मानवता के प्रणेता : महर्षि अरविंद** 400.00
  - **पूर्वी अफ्रीका का प्रवेशद्वार : युगांडा** 300.00
  - **चॉकलेट की वैश्विक राजधानी : बेल्जियम** 250.00
  - **परीक्षा लेती जिंदगी** 400.00
- हरदीप सिंह पुरी
  - **जोखिम भरे हस्तक्षेप** 500.00
- प्रदीप भंडारी
  - **मोदी विजयगाथा 2019** 600.00
- सीता/शरद गुप्ता
  - **एक ऊँची उड़ान** 495.00
- मनजीत नेगी
  - **साधु से सेवक** 200.00
- आनंदीबेन पटेल
  - **वो मुझे हमेशा याद रहेंगे** 500.00
- राजेंद्र मोहन भटनागर
  - **गांधी : एक सत्य** 400.00
- डॉ. विनय सहस्रबुद्धे
  - **विकास की राजनीति** 350.00
- शांतनु गुप्ता
  - **भारतीय जनता पार्टी की गौरवगाथा** 800.00
- बसंत कुमार
  - **डॉ. आंबेडकर और राष्ट्रवाद** 300.00
- रजनीश कुमार शुक्ल
  - **भारतीय ज्ञानपरंपरा और विचारक** 400.00
- सूर्यकांत बाली
  - **तुम कब आओगे श्यावा** (उपन्यास) 400.00
  - **दीर्घतमा** (उपन्यास) 500.00
- सहना विजय कुमार
  - **कशीर** (उपन्यास) 360.00
- राजीव शर्मा
  - **विद्रोही संन्यासी** (उपन्यास) 400.00
- मनोज सिंह
  - **मैं आर्यपुत्र हूँ** (उपन्यास) 600.00
- डॉ. लक्ष्मी नारायण गर्ग
  - **शिखंडी** (उपन्यास) 300.00
- हरीश नवल
  - **बोगी नंबर 2003** (उपन्यास) 300.00
- डॉ. राकेश कुमार मीणा
  - **नेपाल का संवैधानिक विकास** 600.00
- वी. श्रीनिवास
  - **अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष** 700.00
- पु.ल. देशपांडे
  - **विलक्षण शब्द चित्र** 500.00
- अरुण आनंद
  - **5 सरसंघचालक** 400.00
- रहीस सिंह
  - **कर्मयोगी संन्यासी योगी आदित्यनाथ** 400.00
- सं. राम किशोर
  - **नेताजी सुभाष चंद्र बोस युवकों से** 300.00
- नीति जैन और गगन जैन
  - **Startup सक्सेस स्टोरीज** (व्यक्तित्व विकास) 600.00
- अरफीन खान
  - **यू कैन डू इट** (व्यक्तित्व विकास) 500.00
- वॉलेस डी. वॉटल्स
  - **अमीर बनने का विज्ञान** (व्यक्तित्व विकास) 300.00
  - **महान् बनने का विज्ञान** (व्यक्तित्व विकास) 250.00
  - **स्वस्थ रहने का विज्ञान** (व्यक्तित्व विकास) 300.00
- प्रशांत पोल
  - **भारतीय ज्ञान का खजाना** (व्यक्तित्व विकास) 400.00
- अशोक चौधरी और रीना चौधरी
  - **डिवाइन चाइल्ड** (व्यक्तित्व विकास) 200.00
- बी.पी. सिंह
  - **जीरो से गोल्ड मेडलिस्ट** (व्यक्तित्व विकास) 300.00
- रवींद्र नाथ प्रसाद सिंह
  - **जीवन एक दर्पण** (व्यक्तित्व विकास) 400.00
- जैक कैनफील्ड
  - **सक्सेस Principles** (व्यक्तित्व विकास) 500.00
  - **जीतने की जिद** (व्यक्तित्व विकास) 300.00
- राजेश अग्रवाल
  - **अहंकार को करें बाय-बाय** (व्यक्तित्व विकास) 300.00
- डॉ. धनंजय गिरि
  - **नूतन सदी के नवनीत श्रीगुरुजी** (जीवनी) 350.00
- सं. सच्चिदानंद जोशी/संजय द्विवेदी
  - **शब्दपुरुष माणिकचंद्र वाजपेयी** (जीवनी) 300.00
- मेजर जनरल सूरज भाटिया
  - **बंदा सिंह बहादुर** (जीवनी) 350.00

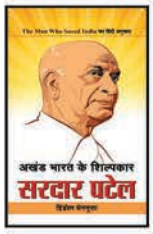

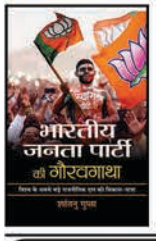

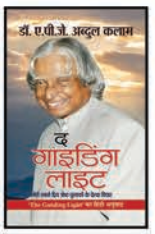

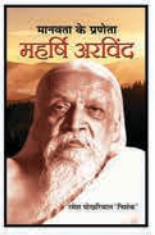

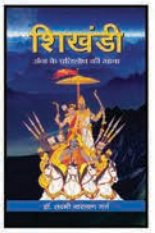

ज्ञान राशि के संचित कोश का नाम ही साहित्य है।

- आचार्य मायाराम 'पतंग'
  महापराक्रमी महाराणा प्रताप (जीवनी) 300.00
- सी.पी. ठाकुर
  आशा और विश्वास : एक यात्रा (जीवनी) 400.00
- राकेश कुमार अग्रवाल
  बुंदेलखंड के अग्रदूत (जीवनी) 350.00

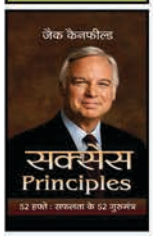

- सुधा मूर्ति
  पौराणिक ग्रंथों में नारी शक्ति की कहानियाँ 400.00
  गोपी की डायरी (कहानी) 300.00
- हेमंत शर्मा
  एकदा भारतवर्षे... (कहानी) 700.00
- रचना बिष्ट रावत
  कारगिल (कहानी) 500.00

- राघवजी माधड
  अमरफल (कहानी) 400.00
- सं. नीतू, दीनाकरण/अमित
  समुंद समावे बुंद में (शौर्यगाथाएँ) 300.00
- लता कादंबरी
  मैच बॉक्स 81 (कहानी) 300.00

- प्रदीप ठाकुर
  कॉलेज ड्रॉपआउट अरबपतियों की प्रेरक कहानियाँ 500.00
- नीरज नीर
  ढुकनी एवं अन्य कहानियाँ 300.00

- रेनू सैनी
  दीनदयाल उपाध्याय की प्रेरक कहानियाँ 400.00
  लौहपुरुष सरदार पटेल के प्रेरक प्रसंग 400.00
  शास्त्रीजी के प्रेरक प्रसंग 400.00
- डॉ. वंदना डांगी
  इंडियन इकोनॉमी की विश्व में बढ़ती पहचान 500.00

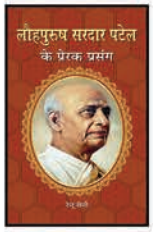

- चंपा भाटिया
  गीता में ज्ञानयोग 175.00
- डॉ. सुरेश हावरे
  साईं की सेवा में 750.00
- यशवंत कोठारी
  रिश्वत महादेवी की जय! (व्यंग्य) 350.00

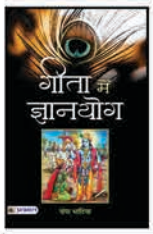

- के.के. उपाध्याय
  मोदी-योगी का विजन विकास की ओर उत्तर प्रदेश 400.00
- राज चावला
  शेयर बाजार में निवेश, ट्रेडिंग और स्पेक्युलेशन 600.00

- प्रेमचंद्र स्वर्णकार
  महामारी कोरोना और वायरस जनित रोग 500.00
- डॉ. ए.के. सक्सेना/डॉ. प्रीति पई
  हैंडबुक ऑफ एक्यूप्रेशर 500.00
- डी.डी. ओझा/अनिल कुमार गुप्ता
  रोचक वैज्ञानिक रहस्य 500.00

- डॉ. शंकर अड़ावल
  फलित ज्योतिष (होरा गणित) 400.00
- राहुल अतिशयक्ति
  मिशन मंगल 350.00
- शैलेंद्र महतो
  झारखंड में विद्रोह का इतिहास 400.00

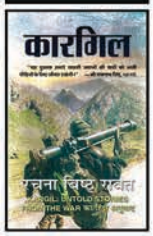

- सं. आदित्य भारद्वाज/आशीष कुमार अंशु
  दिल्ली दंगे : साजिश व खुलासा 125.00
- रघुनंदन शर्मा
  आजादी बनाम फाँसी अथवा कालापानी 400.00
- शिवअवतार रस्तोगी 'सरस'
  सरस बाल-बूझ पहेलियाँ 200.00
- सुरेंद्र नाथ तिवारी
  पहाड़िया जनजाति : इतिहास एवं संस्कृति 200.00

- Hemant Sharma
  Kailas Shiva's Abode 900.00
- Arun Anand & Vinay Nalwa
  Ramjanmabhoomi 350.00
- Umaprasad Mookerjee
  Syama Prasad Mookerjee : His Death in Detention 400.00
- Dr. Nand Kishore Garg and Namrata Sharma
  Dr. Syama Prasad Mookerjee : The Great Educationist 600.00
- Krishna Saksena
  A Bouquet of Flowers 175.00
- Ramesh Pokhrial 'Nishank'
  Life Trials 400.00
- Ed. Anirban Ganguly and Navin Kalingan
  Dattopant Thengadi : The Activist Parliamentarian 900.00
- Dr. C.P. Thakur
  A Journey of Hope and Belief 400.00
- Dr. Suresh Haware
  In Service of Sai 750.00
- Ed. Nitu and M. Dhinakaran
  The Shaurya Unbound 250.00

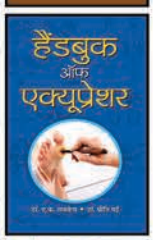

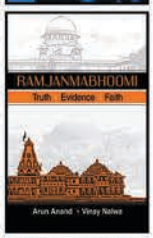

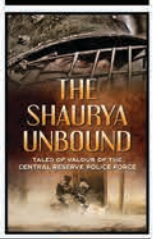

प्रभात प्रकाशन
ISO 9001:2015 प्रकाशक
4/19 आसफ अली रोड, नई दिल्ली-110002 • फोन : 011-23289777
इ-मेल : prabhatbooks@gmail.com • वेबसाइट : www.prabhatbooks.com
हैल्पलाइन : 7827007777

संस्कार

• रीता कौशल

ईशान फूला नहीं समा रहा था। खानदान-परिवार में ही नहीं बल्कि अपनी मित्र मंडली में वह पहला व्यक्ति है, जो अपनी मास्टर डिग्री करने के लिए अमेरिका जा रहा था। एक नहीं बल्कि चार-चार विश्वविद्यालयों से निमंत्रण मिला था उसे।

शिकागो वाली यूनिवर्सिटी का प्रस्ताव उसे कुछ बेहतर लग रहा था। वहाँ उसे पढ़ने के साथ-साथ कुछ घंटे कॉलेज लैब में भी काम करने का अवसर मिल रहा था। एक पंथ दो काज—पढ़ाई करने को मिलेगी और हर हफ्ते बीस घंटे काम करने से कुछ आमदनी भी हो जाएगी। 'पापा तो ये खबर सुनकर बहुत ही खुश होंगे, जरूर इन चार में से इसी प्रस्ताव को प्राथमिकता देंगे।' सोचता हुआ वह सारे कागज-पत्र सँभाले बरामदे में बैठे पिता के पास आकर बैठ गया।

"शिकागो! शिकागो ही क्यों जब दूसरे चार और विकल्प भी हैं?" पिताजी ने ईशान की प्राथमिकता पर हैरानी जताई।

"इसमें पढ़ने के साथ-साथ थोड़ी बहुत आय का भी जुगाड़ हो रहा है, इसलिए!" ईशान ने बताया।

"कमाने की अभी से क्या पड़ी है तुम्हें, तुम तो बस पढ़ो-लिखो।"

"पापा, मैं कब तक आप पर निर्भर रहूँगा, तेईस साल का हो चुका हूँ, अब मुझे खुद भी तो थोड़ा-बहुत काम करना चाहिए।"

"वजह अच्छी है और तुम्हारी सोच भी। पर क्या तुम जानते नहीं, अमेरिका के इस इलाके में काले लोगों का वर्चस्व है?"

"तो···तो क्या हुआ, वे भी तो वहाँ के नागरिक हैं, अमेरिका का हिस्सा हैं, वे सदियों से···उनसे कैसा परहेज?"

"चोर होते हैं वो···"

"यह किसने कह दिया आपसे, चोरी की घटनाएँ तो पूरे विश्व में होती रहती हैं, चोर तो कोई भी हो सकता है। चोरी का किसी खास नस्ल से संबंध नहीं होता···अभाव, भूख, मजबूरी, बुरी-परिस्थितियाँ भले-भलों को चोर-उचक्का बना सकती हैं।"

"चार किताबें पढ़ ली हैं तो अपने आप को बहुत ज्यादा विद्वान् समझने लगे हो तुम···हमने कह दिया सो कह दिया। जहाँ सेर भर माटी वहाँ सवा सेर माटी। हर हफ्ते २० घंटे के काम से २० डॉलर प्रति घंटा कमाकर हमारी पीड़ियों का गुजारा तो हो नहीं जाएगा। जैसे यहाँ तक तुमको पढ़ाया-लिखाया है, वैसे आगे भी उठापटक करके पढ़ा लेंगे।" पिताजी तैश में आ चुके थे।

सुपरिचित लेखिका। इंद्रप्रस्थ-भारती, पाखी, आधुनिक-साहित्य, गर्भनाल, भारत-दर्शन, सुमन-सौरभ आदि प्रतिष्ठित राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में लेख, कहानियाँ व कविताओं का निरंतर प्रकाशन। दिल्ली प्रेस इंडिया द्वारा आयोजित 'नारायणी पुरस्कार २०१७' सहित कई सम्मानों से सम्मानित।

ईशान जाते-जाते बात को आगे खींचकर पिता का दिल नहीं तोड़ना चाहता था। इकलौता बेटा जो ठहरा! इसकी जरूरत भी क्या थी, जब दूसरे विकल्प थे उसके हाथ में। शिकागो यूनिवर्सिटी नहीं तो टेक्सास यूनिवर्सिटी सही! ईशान खुशी-खुशी टेक्सास जाने की तैयारी में लग गया।

टेक्सास में ईशान के सपनों को पंख मिल रहे थे। पिताजी भारत में फूले नहीं समाते थे। इकलौता बेटा जैसा चाहा वैसा ही निकला। स्वभाव का शांत, पढ़ने-लिखने में होनहार, किसी पिता को जीवन से और क्या चाहिए होता है! उनकी इस खुशी की सतह के ठीक नीचे कुछ आशंकाएँ भी कुलबुलाती रहती थीं। यदा-कदा वे आशंकाएँ अखबारी खबरों के चप्पू की मार से उछल कर सतह के ऊपर आ जातीं। छोटी-छोटी बात पर लाड़ में ठुनकने वाला बेटा, पता नहीं ये गोरे लोग उससे कैसा व्यवहार करें? वे जितना इस विचार को झटकते वह उतना ही उन्हें परेशान करता। ईशान से हर फोन वार्त्तालाप में वे यही जानना चाहते कि बस, ट्रेन, होटल, सिनेमा हॉल, कालेज आदि जगहों पर कोई उससे बुरा व्यवहार तो नहीं करता?

"नहीं पिताजी, ऐसा बिल्कुल भी नहीं है, जैसा आप सोच रहे हैं। यह देश तो बना ही बाहर से आए अलग-अलग नस्ल के लोगों से है। टैलेंट की कद्र होती है यहाँ।" ईशान पिता को आश्वस्त करने की कोशिश करता।

पिता पुत्र के जवाब से संतुष्ट होते भी और नहीं भी। कभी अपनी शंका व्यक्त कर देते तो कभी मौन रह जाते, "मगर हमने तो कल ही अखबार में पढ़ा था कि वहाँ···"

"पापा, इतने बड़े देश में कहीं कोई दो-एक घटना घट गई तो इसका अर्थ यह कतई नहीं है कि गली-गली में रोज ही ऐसा हो रहा है। आप अनावश्यक ही चिंता करते रहते हैं।"

बेटे के तर्कों को सुन पिता खुद को समझाने का प्रयास करते, "जब वे अपने बेटे के सुंदर-सलोने मुखड़े को देखते नहीं थकते तो क्यों कोई भेदभाव करेगा उनके पुत्र के साथ···ईशान है ही ऐसा!" वही सवाल, वही जवाब, सदियों पुराने पूर्वग्रह! पिता-पुत्र के बीच रोज के टेलीफोन वार्त्तालाप के साथ, समय अपनी गति से खिसकता रहा और ईशान की पढ़ाई का पहला सेमिस्टर खत्म हो गया। बेटा एक महीने की छुट्टी पर घर आ रहा था। पिता के पैर खुशी के अतिरेक में जमीन पर नहीं पड़ रहे थे। सोच रहे थे, जैसे एक सेमिस्टर निकल गया, वैसे ही बाकी बचा वक्त भी कट जाएगा और फिर बेटा हमेशा के लिए उनके पास वापस आ जाएगा।

"पापा यह क्या? मैं जब अमेरिका के लिए रवाना हुआ था, तब भी आपना मकान खाली पड़ा था और जब वापस आया हूँ तब भी इसमें कोई किराएदार नहीं है।" ईशान ने घर में घुसते ही घर के उस हिस्से की तरफ झाँककर देखा, जिसे उसके पिता अतिरिक्त आमदनी के लिए किराए पर उठाते थे।

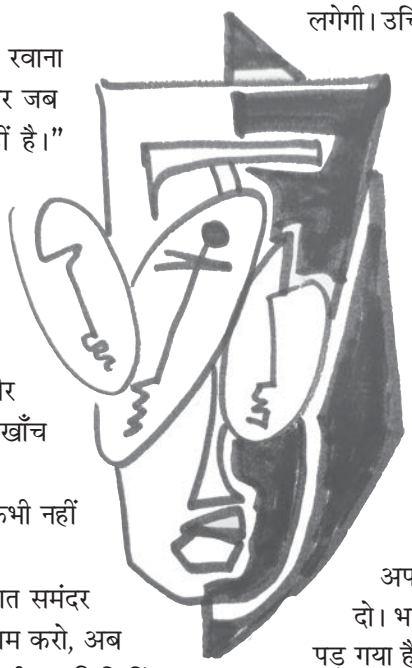

"नहीं बेटा! पिछले छह महीने से अपना मकान किराए पर नहीं उठा।" पिताजी ने गहरी साँस भरी। बेटे ने अभी-अभी घर में कदम रखा था और पिता के न चाहते हुए भी कम आमदनी की खींच-खाँच उसके सामने उजागर हो गई।

"ऐसा कैसे पापा? आपने मुझे फोन पर तो कभी नहीं बताया।"

"छोड़ो तुम भी, आते ही कहाँ उलझ गए, सात समंदर पार से आए हो, नहा-धोकर खाना बना-खाकर आराम करो, अब यह मकान जरा पुराने ढंग का हो गया है, बाथरूम में गीजर की फिटिंग नहीं है, बेडरूम के साथ जुड़ा हुआ बाथरूम भी नहीं है इसमें, इसलिए नई चाल के लोग इसे लेना पसंद नहीं करते।"

ईशान का मन जार-जार हो गया। वह जानता था कि पिता के पास कोई बहुत ऊँची आमदनी नहीं थी। मकान के किराए पर उठने वाले हिस्से से होने वाली आय उनके लिए हमेशा से एक जरूरत रही है। उसने निश्चय किया कि वह अपनी छुट्टियों के समाप्त होने से पहले इस समस्या को जरूर खत्म कर देगा। अपने स्थानीय दोस्तों की मदद लेगा, अखबार में विज्ञापन देने की जरूरत हुई तो वह भी करेगा, मगर इस बार अमेरिका लौटने से पहले अपने सामने ही मकान को किराए पर उठाकर जाएगा।

दूसरे दिन से ही ईशान इस मिशन में जुट गया। अखबार में विज्ञापन देने की नौबत नहीं आई, उसकी नेटवर्किंग से ही अच्छा रेस्पॉन्स मिलने लगा और लोग किराए के लिए उसका घर देखने आने लगे।

"तुम उन्हें घर के अंदर क्यों लाए थे?" पिता अकारण ही ईशान पर आग-बबूला हो रहे थे।

"वे किराए का मकान ढूँढ़ते हुए इधर आए थे। मेरे एक दोस्त ने भेजा था, उन्हें हमारा घर देखने के लिए, तो उन्हें घर के अंदर लाकर किराए वाला पोर्शन तो दिखाना ही था न, बिना देखे तो कोई मकान ले नहीं लेगा!"

"अभी इतने बुरे दिन नहीं आए हमारे कि हम इन हूसों को अपना मकान किराए पर दें।"

"मगर क्यों पापा? आप यह कैसी बात कर रहे हैं? अपना मकान पिछले छह महीने से खाली पड़ा है। आय की कितनी बड़ी क्षति हो रही है! आपकी तनख्वाह मम्मी के इलाज और घर के दूसरे खर्चों पर उड़ जाती है। जीवन भर की बचत मुझे अमेरिका में पढ़ाने में खर्च हुई जा रही है। अगर ऐसे ही चला पापा, तो घर की अर्थव्यवस्था चरमराते देर नहीं लगेगी। उचित होगा कि हम वक्त रहते समस्या का हल ढूँढ़ लें।"

"हम भूखे मर जाएँगे, मगर इन हूसों को अपना मकान किराए पर नहीं देंगे, चोर होते हैं साले!" पिताजी बुदबुदाए जा रहे थे। वह एक पल आवेश में कुरसी पर बैठते तो दूसरे पल उठकर कमरे में चक्कर लगाने लगते।

"ऐसा क्यों कहते हैं पापा? ये भी हमारी तरह इनसान हैं, इनके हृदय में भी स्पंदन होता है, वाहिनियों में लाल रंग का रक्त बहता है, फिर इनसे परहेज कैसा? जैसे आपने मुझे उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका भेजा है, वैसे ही ये नाइजीरिया से भारत में पढ़ने आते हैं। मेरी समझ में नहीं आता, आपको इनसे परेशानी क्या है?"

"तुम्हें अमेरिका पढ़ने इसलिए नहीं भेजा था कि अपने संस्कार भूल जाओ और यहाँ आकर हमें ही ज्ञान दो। भारत में क्या किराए पर मकान लेने वालों का अकाल पड़ गया है, जो हम इन्हें अपना मकान देंगे?"

"लेकिन पापा, पहले भी तो हमने अपना मकान विदेशियों को किराए पर दिया था। भूल गए आप···वह इटालियन जोड़ा जो कि यहाँ 'केंद्रीय हिंदी संस्थान' में हिंदी सीखने आया था? उन्हें तो आपने बिना किसी ना-नुकुर के अपना मकान किराए पर दे दिया था!"

"उनकी बात और थी, समझे तुम! इन कलूटों की तो सूरत देखते ही उबकाई आती है। उठाईगीरे होते हैं सो अलग।"

पिताजी आग उगल रहे थे और ईशान हैरान-परेशान अपने जन्मदाता के विचारों को देखकर सोच रहा था, अगर संस्कार ऐसे होते हैं तो कुसंस्कार कैसे होते होंगे?

PO Box-48, Mosman Park,
Western Australia-6912
Mob. 61402653495
rita210711@gmail.com

संस्कृत साहित्य में कन्या महत्त्व : लिंगभेद के परिप्रेक्ष्य में

• विशाल भारद्वाज

'संस्कृति संस्कृतमाश्रिता:' अर्थात् संस्कृति संस्कृत भाषा पर निर्भर करती है। यह कथन भारतीय संस्कृति पर पूर्णत: चरितार्थ होता है। संस्कृत भाषा ने भारतीय संस्कृति को अत्यधिक प्रभावित किया है। संस्कृत भाषा को यदि भारतीय संस्कृति का दर्पण कहा जाए तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

आधुनिक समाज में प्रचलित कुरीतियों में कन्या भ्रूण हत्या सर्वप्रमुख है। जिस भारतीय संस्कृति में कन्या-पूजन का विधान है, उसी भारतीय संस्कृति में माता-पिता कन्या को जन्म लेने से पूर्व ही गर्भावस्था में समाप्त कर रहे हैं। वैदिक संस्कृति का तो मानना है कि कन्या को कन्या इसलिए कहते हैं, क्योंकि वह कमनीय अर्थात् सुंदर होती है। इसे लड़के की अपेक्षा अधिक सुंदर माना जाता है, अथवा कमनीय से अभिप्राय एषणीय है। यह कन्या सबके लिए वांछनीय है—

कन्या कमनीया भवति। क्वेयं नेतव्येति वा कमनेनानीयत¨ ।

कन्या शब्द का यह निर्वचन इसके महत्त्व को दरशाता है। भारतीय संस्कृति से संबंधित नीतिशास्त्र भी पुत्र एवं पुत्री में किसी भी प्रकार का भेदभाव करने की मनाही करता है। महर्षि शुक्राचार्य के अनुसार पुत्र की भाँति ही पुत्री भी मनुष्य के अंग-प्रत्यंग से जन्म लेती है—

···अङ्गादंगात् सम्भवति पुत्रवद् दुहिता नृणाम्॥

इसलिए दोनों एक समान हैं। कन्या के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए नीतिशास्त्र तो कन्या को पाँव से स्पर्श तक भी करने की मनाही करता है—

पादाभ्यां न स्पृशेदग्निं गुरुं ब्राह्मणमेव च।
नैव गां च कुमारीं च न वृद्धं न शिशुं तथा॥

धर्मशास्त्रकार महर्षि मनु का तो कहना है कि कन्या रूप में जन्म लेने वाली स्त्री का नाम रखते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि वह नाम सुखपूर्वक उच्चारण करने योग्य, अक्रूर तथा स्पष्ट अर्थ वाला, मनोहर, मंगलसूचक, अंत में दीर्घ स्वर वाला तथा आशीर्वाद से युक्त हो—

स्त्रीणां सुखोद्यमक्रूरं विस्पष्टार्थं मनोहरम्।
मङ्गल्यं दीर्घवर्णान्तमाशीर्वादाभिधानवत्॥

सुपरिचित लेखक। देश के विभिन्न राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं में शोध-पत्र प्रस्तुत इसके साथ ही लगभग ५० शोध-पत्र विभिन्न शोध-पत्रिकाओं एवं पुस्तकों में प्रकाशित। आकाशवाणी जालंधर से अनेक वार्ताओं का प्रसारण।

कन्यादान के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए संस्कृत साहित्य का कहना है कि होम के मंत्रों से संस्कृत कन्या को देकर पुरुष सौ ज्योतिष्टोम व अतिरात्र यज्ञों के सौ गुना फल को प्राप्त करता है—

ज्योतिष्टोमातिरात्राणां शतं शतगुणीकृतम्।
प्राप्नोति पुरुषो दत्त्वा होममन्त्रैस्तु संस्कृताम्॥

कन्यादान से प्राप्त धर्म का कभी नाश नहीं होता—

क्षयं च दृश्यते तस्य कन्यादाने न चैव हि।

परंतु यह सब तभी होगा, जब हम कन्या को गर्भ में ही न मारकर उसको जन्म लेने देंगे।

संस्कृत साहित्य में नीतिशास्त्रकार महर्षि शुक्राचार्य ने तो भ्रूण-हत्या (गर्भपात) की गणना अपराधों के अंतर्गत की है—

···गर्भस्य पातनं चैवेत्यपराधा दशैव तु॥

महात्मा विदुर ने भ्रूण-हत्यारे की तुलना ब्रह्म-हत्यारे के साथ की है—

भ्रूणहा गुरुतल्पी च यश्च स्यात् पानपो द्विज:।
···रक्षेत्युक्तश्च यो हिंस्यात् सर्वे ब्रह्महभि: समा:॥

संस्कृत साहित्य के अनुसार तो जो स्त्री गर्भपात करती है, उसकी तिलांजलि, श्राद्धादि क्रियाएँ न की जाएँ—

पाषण्डमाश्रितानां च चरन्तीनां च कामत:।
गर्भभर्तृद्रुहां चैव सुरापीनां च योषिताम्॥

भ्रूणहत्यारे के अन्न-भक्षण का निषेध भी संस्कृत साहित्य में वर्णित है। भ्रूण हत्या करने वाले का अन्न खाने से उसके पाप का दोष अन्न-भक्षक को प्राप्त हो जाता है—

अन्नादे भ्रूणहा माष्टि पत्यौ भार्यापवारिणी।

गुरौ शिष्यश्च याज्यश्च स्तेनो राजनि किल्बिषम्॥

यहाँ तक कि जिस अन्न को गर्भपात करने वाले ने देख भी लिया हो, उस अन्न का भक्षण नहीं करना चाहिए—

भ्रूणघ्नावेक्षितं चैव संस्पृष्टं चाप्युदक्यया।

पतत्रिणावलीढं न शुना संस्पृष्टमेव च॥

भारतीय संस्कृति की आधारशिला के रूप में विख्यात धर्मशास्त्र एवं नीतिशास्त्र दोनों ही गर्भपात करने पर उत्तम साहस का दंड देने की बात करते हैं—

शास्त्रावपाते गर्भस्य पातने चोत्तमो दमः··· ।

प्रहारेण गर्भं पातयत उत्तमो दण्डः··· ॥

औषधि द्वारा गर्भ गिराने वाले को मध्यम साहस दंड दिया जाए व कठोर काम कराकर गर्भ गिराने वाले को मध्यम साहस का दंड दिया जाए—

···भैषज्येन मध्यमः। परिक्लेशेन पूर्वः साहसदण्डः॥

गर्भपातादि दुष्कर्म करने के कारण अत्यंत दुष्टा, पुरुष की हत्या करने वाली तथा पुल को तोड़ने वाली स्त्री को यदि वह गर्भिणी न हो तो ही उसे दंडित किया जाना चाहिए—

विप्रदुष्टां स्त्रियं चैव पुरुषघ्नीमगर्भिणीम्।

सेतुभेदकरीं चाप्सु शिलां बध्वा प्रवेशयेत्॥

इसका तात्पर्य यह है कि गर्भावस्था के कारण ऐसी दुष्टा स्त्री को दंडित करना भी निषिद्ध है। स्त्री को पतित करने वाले दोषों में गर्भपात की गणना की जाती है—

नीचाभिगमनं गर्भपातनं भर्तृहिंसनम्।

विशेषपतनीयानि स्त्रीणामेतान्यपि ध्रुवम्॥

संस्कृत साहित्य के अनुसार, जो स्त्री पति द्वारा स्थापित किए गए गर्भ को नष्ट करती है, उसे महापातक का दोष लगता है—

महापातकदुष्टा च पतिगर्भविनाशिनी·· ।

पराशर मुनि का मानना है कि जो स्त्री गर्भपात करती है, उसके साथ वार्त्तालाप भी नहीं करना चाहिए, क्योंकि गर्भपात करने पर ब्रह्महत्या से दुगुना पाप लगता है, जिसका कोई भी प्रायश्चित्त नहीं है। ऐसी स्त्री का त्याग ही कर देना चाहिए—

···गर्भपातं च या कुर्यान् न तां संभाषयेत् क्वचित्॥

यत् पापं ब्रह्महत्याया द्विगुणं गर्भपातने।

प्रायश्चित्तं न तस्यास्ति तस्यास्त्यागो विधीयते॥

गौतमस्मृति का कहना है कि यदि पिता भ्रूण हत्यारा है, अर्थात् उसके कहने पर भ्रूण-हत्या की जाती है, ऐसा पिता भी त्याज्य है—

त्यजेत् पितरं राजघातकं शूद्रयाजकं वेदविप्लावकं भ्रूणहनं॥

महर्षि याज्ञवल्क्य ने गर्भ की हत्या करने वाली स्त्री के परित्याग की बात की है—

व्यभिचारादृतौ शुद्धिर्गर्भे त्यागो विधीयते।

गर्भभर्तृवधादौ च तथा महति पातके॥

किस पाप से मनुष्य को कौन सा रोग होता है, इसका वर्णन शातातपस्मृति में किया गया है। जिगर, तिल्ली व जलोदर रोगों की उत्पत्ति कारण वहाँ गर्भपात जैसा दुष्कर्म बताया गया है—

गर्भपातनजा रोगा यकृत्प्लीहजलोदराः।

याज्ञवल्क्यस्मृति का मानना है कि गर्भिणी स्त्री की प्रिय वस्तु उसको प्रदान न करने पर गर्भ में दोष आ जाता है तथा गर्भस्थ शिशु विरूपता अथवा मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। गर्भनाश न हो, इसलिए गर्भिणी स्त्री की जो कोई इच्छा हो, उसे पूर्ण किया जाए—

दौहृदस्याप्रदानेन गर्भो दोषमवाप्नुयात्।

वैरूप्यं मरणं वापि तस्मात्कार्यं प्रियं स्त्रियाः॥

'उत्तररामचरितम्' नाटक में भी ऋष्यशृंग के आश्रम से भगवती अरुंधती, कौसल्या आदि माताएँ व देवी शांता राम के लिए संदेश भेजती हैं कि गर्भवती सीता की जो कोई इच्छा हो, उसकी पूर्ति अविलंब की जाए—

इदं च भगवत्याऽरुन्धत्या देवीभिः शान्तया च भूयो भूयः संदिष्टम्-यः

कश्चिद्गर्भदोहदो भवत्यस्याः,

सोऽवश्यमचिरान्मानयितव्य' इति।

गर्भपातादि दुष्कर्म करने के कारण अत्यंत दुष्टा, पुरुष की हत्या करने वाली तथा पुल को तोड़ने वाली स्त्री को यदि वह गर्भिणी न हो तो ही उसे दंडित किया जाना चाहिए—

विप्रदुष्टां स्त्रियं चैव पुरुषघ्नीमगर्भिणीम्।

सेतुभेदकरीं चाप्सु शिलां बध्वा प्रवेशयेत्॥

भारतीय संस्कृति में श्राद्ध कर्म का अत्यंत महत्त्व है। इस श्राद्ध क्रिया के फलस्वरूप पितरों की तृप्ति होती है तथा वे प्रसन्न होकर हमारी इच्छाओं की पूर्ति करते हैं। याज्ञवल्क्य ऋषि ने कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को श्राद्ध करने से कन्या रत्न की प्राप्ति की बात कही है—

कन्यां कन्यावेदिनश्च।

···ज्ञातिश्रैष्ठ्यं सर्वकामानाप्नोति श्राद्धदः सदा॥

प्रतिपत्प्रभृतिष्वेकां वर्जयित्वा चतुर्दशीम्।

इस बात से यह सिद्ध होता है कि कन्या कोई अभिशाप नहीं है, अपितु एक श्रेष्ठ फल है। अतः संस्कृत साहित्य के आधारस्तंभ धर्मशास्त्रीय व नीतिशास्त्रीय उपर्युक्त दृष्टांत आधुनिक समाज में कन्या-भ्रूण हत्या जैसी प्रवृत्ति को रोकने में अत्यंत प्रासंगिक हैं।

साअ

असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, अमृतसर
दूरभाष : ९५०१८००३९५
vishal.sanskrit@gndu.ac.in

नीला मलहम

• लता अग्रवाल

आकाश में छितरे-छितरे से बादल थे, कुम्हलाया हुआ सा मन, एक मैले से संताप में लिप्त हुआ···या यह केवल सुलभा के मन की छाया हो, उसका तो हर दिन ही ऐसा होता है। सुबह-सुबह थकी हारी देह···भौंकता, चीखता लुटा-पिटा सा दिन, देह के साथ जब मन भी मर जाता है तो शायद यही स्थिति होती है। कल रात उसने एक स्वप्न देखा, एक ऐसा स्वप्न, जिसमें कोई उसके सपने को हथेलियों में कैद करना चाहता है और वह अपने सपने उसकी हथेली की कैद से वापस लेने की जद्दोजहद में है, काफी संघर्ष के बाद वह अपने सपनों को उन हथेलियों से आजाद करने में सफल होती है और बचा लेती है, सपनों के साथ अपने जीवन को भी, भागते-भागते अब वह एक हरे-भरे मैदान में खड़ी सुकून महसूस कर रही है। पेड़ की शीतल छाँह तले खड़े सुलभा सोच रही है, अगर आज भी उसने अपने सपनों को बचाने का कोई प्रयास न किया होता तो···वह अपने सपनों को खो देती। तभी घड़ी का अलार्म बज उठा, छह बज गए थे, उसके आराम का समय खत्म हो चुका है।

"सुलभा! सुलभा!" अखबार पढ़ते हुए सोमेश ने छत से ही पत्नी को आवाज लगाई।

"जी आई।" रसोई में काम करती सुलभा हड़बड़ाहट में गैस को धीमा कर, कमर से खुसा आँचल निकालकर कंधे पर डाल, सरपट सीढ़ियाँ चढ़ते हुए सोच रही थी··· 'अब क्या मुसीबत आ गई, जो सुबह-सुबह इतना शोर मचा रहे हैं? हर बात में नुक्ताचीनी निकालने की आदत है लाट साहब को।'

"क्या हुआ?" सुलभा ने करीब आ सहमते हुए पूछा।

"ये···ये तुम्हारी तसवीर है?" सोमेश ने लगभग गुस्से से अखबार सुलभा के सामने करते हुए पूछा।

"जी!" सुलभा ने सरसरी निगाह अखबार पर डालते हुए जवाब दिया, मानो उसके लिए कोई हैरत की बात नहीं।

"इसका मतलब, तुम्हें पता था।"

सुपरिचित लेखिका। चार कविता-संग्रह, पाँच बाल साहित्य, दो कहानी-संग्रह, पाँच लघुकथा-संग्रह, एक साक्षात्कार, बारह साझा संग्रह आदि के साथ ढेरों पुस्तकें प्रकाशित। मॉरीशस हिंदी साहित्य अकादमी द्वारा 'साहित्य रत्न' सहित अनेक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय सम्मानों से सम्मानित।

"हाँ, मोबाइल पर सूचित किया था उन्होंने।"

"यह कैसे हो सकता है?"

"क्या कैसे हो सकता है?"

"यही कि साहित्य के क्षेत्र में सुलभा वाजपेयी को उनके गीतों के लिए महादेवी पुरस्कार प्रदान किया जाता है। वरिष्ठ साहित्यकारों का मानना है कि उनके गीतों में महादेवीजी के गीतों का सा दर्द झलकता है।" सोमेश ने एक साँस में पूरी खबर पढ़कर सुना दी।

"तुम कब से गीत लिखने लगीं, वह भी दर्द भरे?"

"जबसे तुम्हारे साथ बंधन में बँधी हूँ।"

"व्हाट यू मीन···जब से तुम्हारे बंधन में बँधी हूँ। सीधे सवाल पूछ रहा हूँ, सीधा उत्तर दो।"

"सीधा उत्तर ही तो है।"

"मतलब मेरे साथ तुम खुश नहीं···बंधन है यह तुम्हारे लिए?"

"सच कहूँ तो हाँ।" सुलभा ने दृढ़ता से कहा।

"पहले कह देतीं तो यह बंधन ढोना न पड़ता तुम्हें, आजाद कर देता मैं।"

"कह देती मगर पहले सोचती रही कि शायद कभी एहसास हो तुम्हें, फिर बच्चे आ गए, उनकी खातिर यह बंधन स्वीकारना पड़ा।"

"घर में सारी सुविधाएँ होकर भी तुम्हें यह बंधन लगता है, किस बात की कमी है तुम्हें यहाँ?"

"उसकी,···जिसकी खातिर कोई भी लड़की अपने बाबुल को

बिसराकर एक अनजान आदमी के साथ निकल पड़ती है अनदेखे सफर पर।"

"देख रहा हूँ, यह साहित्य कुछ ज्यादा चढ़ गया है तुम्हारे दिमाग पर, सीधे उत्तर देते इज्जत घटती है तुम्हारी!"

"सीधे सुनना चाहते हो तो सुनो, लड़कपन में मैंने भी सपनों में राजकुमार देखा था। सोचा था कि उसके संग जीवन की तमाम खुशियाँ बाटूँगी···सँभाल लेगा वह मुझे अपने प्यार से और मैं सँभाल लूँगी उसका घर-संसार, पालूँगी बच्चे, चाह सुहागन मरने की, बस इसी चाह में जीवन पूरा करूँगी।"

"तो क्या नहीं है तुम्हारे पास···घर, बच्चे, तुम्हारा सुहाग, यानी मैं··· फिर किस बात का रोना?"

"रोना ही तो रहा जिंदगी में, बहुत ख्वाहिश थी, जब माँ-बाबा ने जीवन की डोर तुम्हारे हाथों सौंपी थी, मेरा हमसफर मेरा हमखयाल भी होगा, हमदर्द भी। हम एक-दूसरे की रूह को छू पाएँगे, मगर कहाँ·· हमारे संबंध तो देह तक ही सीमित रह गए।"

"कुछ ज्यादा पर नहीं लग गए तुम्हारे?"

"पर तो कब के पानी उड़ान भूल गए, हँसते-खेलते गुजरेंगे जिंदगी के दिन यही चाहा था, मगर आपने तो हँसने मुसकराने पर मानो कर्फ्यू ही लगा दिया।"

"तो तोड़ देतीं यह कर्फ्यू, किसने रोका था?"

"यह केवल तुम ही कह सकते हो,···माँ-बाबा हम बेटियों को अच्छा बनने की घुट्टी जो पिलाकर भेजते हैं, मगर अब थक गई हूँ अच्छा होने की सलीब ढोते हुए, मन उत्तर देना चाहता है।"

"जानती हो क्या बोल रही हो?" सोमेश झुँझला गया।

"आपने सीधे बात कहने की फरमाइश की, सो आप ही की आज्ञा का पालन कर रही हूँ।"

"बहुत ज्यादा नहीं बोल रही तुम?"

"मैं तो कुछ बोलना ही नहीं चाहती थी, जब से इस घर में आई हूँ, आप ही तो बोलते हैं, आपके अनुसार तो जी रही हूँ, अपने कंधे पर अपने अरमानों की लाश ढोती, खुलकर हँसना आपको पसंद नहीं, अपना सारा हुनर देह को सजाने में खर्च कर दिया आपके लिए, अब तो उस हुनर से मन उब गया है।"

"बस-बस बस, मैं सिर्फ इतना जानना चाहता हूँ, यह लिखने का रोग क्यों कर पाला? क्या इसके माध्यम से लोगों को अपना दुखड़ा सुनाना चाहती हो?"

"वही तो बता रही हूँ, संस्कारों की भारी-भरकम चुनर सर पर ओढ़े रही, डर से तुम्हारे···कभी देखे नहीं मन पसंद सपने, उल्टे लड़कपन के सारे सपने समेटकर रख दिए मन की अँधेरी कोठरी में। हमेशा आपकी नाराजगी का ताज सर पर पहने रही, उसकी चुभन अब टीस देने लगी है जी, आपसे मिलकर मेरी रूह अतृप्त ही रही, सो अपनी तृप्ति का यह उपाय खोजा है मैंने।"

"कौन सा उपाय?"

"नीला मलहम।"

"नीला मलहम, लगता है, उम्र का असर तुम्हारे दिमाग तक पहुँच गया है। पूछ कुछ रहा हूँ, जवाब कुछ दे रही हो।"

"सही कह रही हूँ, बस आप समझ नहीं पा रहे, वैसे भी आपने समझा ही कब है मुझे?"

"बहुत संकेतों में बात करने लगी हो आजकल।" सोमेश ने लगभग चिढ़ते हुए कहा।

"लो स्पष्ट किए देती हूँ। बचपन में एक बार गरम दूध गिरने से मेरा हाथ बुरी तरह से जल गया था, एक तो जलन की टीस उस पर यह चिंता कि कहीं फफोले पड़ने से मेरा हाथ खराब न हो जाए। लोग हँसेंगे मेरे दाग देखकर, मैं चीख-चीखकर रो रही थी, तभी माँ ने पास रखी नीली स्याही की दवात मेरे हाथ पर उढेल दी।

"ये क्या किया माँ, कोई दवा लगाई होती, मेरे हाथ पर फफोले पड़ जाएँगे, जानती हो, दाग कितने खराब लगते हैं।" मैंने रोते हुए माँ से कहा।

"बेटी! ये दवा ही है, देखना इससे तुझे जलन में भी आराम मिलेगा और छाले भी नहीं होंगे।" माँ ने समझाया।

"सच में उस नीली स्याही ने बहुत आराम दिया जलन में मुझे, और फफोले भी नहीं आए।"

"तुम फिर अपनी बात से भटक रही हो।"

"बिल्कुल नहीं, उसी पर आ रही हूँ। सोचो जरा, जब से तुम्हारे साथ ब्याहकर आई हूँ, किस दिन तुमने मेरे मन को जानने का प्रयास किया, मैं सिर्फ तुम्हारी जरूरत पूर्ति का साधन रही, कभी इनसान के रूप में मुझे देखा हो याद नहीं, तुम्हारी उपेक्षा, अवहेलना से मेरा दिल भी बहुत जलने लगा था। मैं एक बार फिर डर गई कि कहीं छाले न बन जाएँ, अन्यथा न चाहते हुए उनकी रिसन जमाने के लिए चर्चा का विषय बन जाएगी।

"मतलब?"

"मतलब लोग अब तक यही सोचते हैं कि हमारे बीच प्यार का निर्झर बह रहा है, हम दो जिस्म एक जान हैं। जैसा हम अमूमन समाज के सामने चेहरा लिये घूमते हैं। कोई नहीं जानता, हम नदी के दो किनारे हैं, जिसमें कहीं भीतर एक ज्वालामुखी भी रिस रहा है। बहुत तन्हा महसूस करती थी मैं तुम्हारे संग जुड़कर।"

"कुछ ज्यादा ख्वाहिशें नहीं पाल रखी हैं तुमने?"

"ख्वाहिशें पालना हक है हर इनसान का, फिर हर औरत की कुछ ख्वाहिशें, कुछ तमन्नाएँ होती हैं और जब उसे उन अधूरी अतृप्त कामनाओं के संग जीना पड़ता है न सोमेश, तब बहुत पीड़ा होती है। मैंने

झेला है वह अकेलापन, जब तुम होकर भी मेरे संग नहीं होते थे। तकिए को अपना हमनवाज बना बाँटती रही दुख-दर्द अपने। उसकी गलबहियाँ कर भिगोती रही उसे आँसुओं से अपने। जानती थी कि मैं कोई अमृता नहीं, जिसके लिए आसान हो कोई इमरोज का कंधा; अपना दुख-दर्द कहने को···।"

"तो यह रास्ता निकाला तुमने अपना गुबार निकलने का?"

"क्या बुरे है इसमें, तुम समझ नहीं पाए मुझे कभी, न अब भी समझ पाओगे। ऐसे में मेरे सामने दो ही रास्ते थे या तो अपने भीतर का लावा कहीं फ्लश में बहा दूँ, या किसी को सुनाकर हलकी हो जाऊँ, मगर किसे सुनाती दिल का हाल, जब सात फेरे का बंधन ही अपना न हुआ तो किसी से क्या अपेक्षा रखती? दूसरा रास्ता यह कि कोई और हमसफर, हमनवाज, हमदर्द तलाश लेती, जो मेरा हमखयाल भी होता और यकीन मानिए सोमेश, कोई मिल भी जाता, कई बार मन भी हुआ खोज लूँ कोई साथी, जो मेरी भावनाओं को समझे, मुझे दिल से प्यार करे, जिसके कंधे पर सर रख मैं अपना बोझ हलका कर सकूँ। जिस तरह तुम लापरवाह हो मेरी ओर से, वैसे ही मैं भी बेपरवाह हो जाऊँ आपकी ओर से, जी लूँ अपना वर्तमान।"

"मतलब अब तक तुम मुर्दा थीं, अब जीना चाहती हो।"

"हर रोज कोई मेरे भीतर चीख-चीखकर पूछता है, तुम मृत हो? ···उठो, जागो! दरअसल वह मुझे जिंदा होने का अहसास दिलाता था। देखना चाहती हूँ अब मैं वह ख्वाब, जो डर से तुम्हारे देखे नहीं। तमाम कर्तव्यों के बावजूद जब नाराजगी का ताज मेरे माथे जड़ा है तो क्यों न इस मन को ही कुछ राहत दे दूँ। आँसुओं में अपना गम जाया करती, इससे तो बेहतर लगा मुझे कि इसे कागज पर उतार लूँ। भावनाओं-संभावनाओं के जो बीज अनंकुरित ही रह गए हैं प्यार के। खाद-पानी के बिना अब वे जड़ हो गए हैं। सोचा, वहाँ शब्दों के कंक्रीट का ही सही, एक आशियाना बना लूँ। इतना हक तो है न मुझको?" सुलभा में आज न जाने कहाँ से इतनी ताकत आ गई, स्वयं सोमेश भी हैरान था।

"सोमेश! हम महिलाओं की एक कमजोरी है, हम न भविष्य की डोर को पहले थामना चाहती हैं, इसी चक्कर में कई बार हमसे अपने वर्तमान का सिरा छूट जाता है। मैंने भी अपने जीवन की तुला पर अपने इस सुख को तौलकर देखा तो मुझे लगा, मेरे वर्तमान से बड़ा है मेरे माता-पिता का अभिमान, जो उन्हें अपनी बेटी पर है, मेरे सास-ससुर के सम्मान की पूँजी, जो उन्होंने बरसों बरस तपस्या से अर्जित की है। इसलिए इस नीले मलहम को एक बार फिर मैंने अपने दर्द को कम करने का जरिया बनाया। मेरे भीतर का दर्द इसी मलहम से बाहर आता गया और मैं समाज के सामने अपने चेहरे पर मुसकान लिये जीती रही, एक सुखद, संपूर्ण दांपत्य की आभासी दुनिया का एहसास कराते हुए।" सोमेश खामोश सुलभा को देख रहा था। सुलभा को एहसास हुआ, उसने एक तंग मुट्ठी की कैद से अपने सपनों को आजाद कर लिया है।

३० सीनियर एमआईजी,
अप्सरा कॉम्प्लेक्स, इंद्रपुरी,
भेल क्षेत्र, भोपाल-४६२०२२ (म.प्र.)
दूरभाष : ९९२६४८१८७८

कविता

कविता

• रजनी भंडारी

टुकड़ा और जोड़
यही दोनों तो हैं बस जीवन में
टूटे खिलोने तो रोए जुड़े तो हँसे बच्चे
टूटा दिल तो मायूसी जुड़ा तो जिंदगी
रिश्ते जुड़े कहीं रक्त से तो कहीं मन के
जुड़े रिश्ते कभी टूट गए कभी किसी ने तोड़ दिए
इन टुकड़ों को सहेजा तो जोड़ बन गया
इन रिश्तों को समेटा तो दिन सज गया
शायर ने कहा कतरा-कतरा जिंदगी
टुकड़ों में बँटी सी जिंदगी, कहीं अधूरी तो कहीं पूरी
कोई टुकड़ा जुड़ गया फेविकोल से

तो कोई रिश्ता टूट गया काँच सा
क्या ये मेरी जिंदगी है या आपकी या सबकी
जिंदगी तो ही है खुदा तो नहीं टुकड़ों में ही सही
जुड़ी तो है बिखरी तो नहीं
टूटिए अगर तो जुड़ भी जाइए
सिर्फ टुकड़ा और जोड़ है जिंदगी।

१ फ्लोर, ३८, अशोक नगर, टावर चौराहा,
इंदौर-४५२००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५०४७७३३

ग़ज़लें

● सपना 'अहसास'

: एक :

उदास-उदास फजा, कायनात ठहरी है
लबों पे सब के कोई सच्ची बात ठहरी है

अजब सकूत का मंजर है सारे आलम में
है वक्त ठहरा हुआ और हयात ठहरी है

उफुक पे शम्स की आमद का शोर है कब से
इस इंतिजार में अब तक ये रात ठहरी है

किसी की जीस्त का रुकना मुहाल है लेकिन
किसी के वास्ते अकसर वफात ठहरी है

दरिंदे दश्त, फरिश्ते फर्क पे ठह्र गए
जमीं पे सिर्फ हमारी ही जात ठहरी है

ये चंद सिक्के कमाकर खुशी से फूलो मत
तुम्हारी फत्ह के अंदर ही मात ठहरी है

तमाम लोग चले जाएँ क्या बयाबाँ में
कि बस्तियों में कजा की बरात ठहरी है

शरीफजादों ने 'अहसास' तौबा कर ली क्या
हमारे शह्र में क्यों वारदातत ठहरी है

: दो :

सीधे-साधे लोग हमेशा अच्छाई में मरते हैं
हमदर्दी रखते हैं सब से रुसवाई में मरते हैं

सूनापन जिन के जीवन का जाँलेवा हो जाता है
ऐसे लोग कजा से पहले तन्हाई में मरते हैं

डूबे और फिर बच भी जाएँ अब ऐसे भी हालात नहीं
दीवाने तो उन आँखों की गहराई में मरते हैं

दरिया में, तालाब में पत्थर फेंकते हैं दीवाने ही
जो छींटों से डर जाते हैं, दानाई में मरते हैं

सपना दिल का कर्ज चुकाना रूह की जिम्मेदारी थी
हंगामा है यहाँ भी बरपा भरपाई में मरते हैं

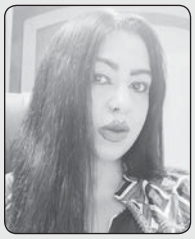

देश के विभिन्न समाचार पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ एवं लेख निरंतर प्रकाशित। तीन काव्य-संग्रह प्रकाशित। दो एकल काव्य-संग्रह प्रकाशन के तहत।

: तीन :

तेरे जहान में मालिक हैं इज्तराब बहुत
ए मेरी जीस्त जरा चल, पड़े हैं ख्वाब बहुत

करम खुदा के हैं कुछ हिम्मतें भी अपनी मगर
मिले हैं सारे ही मंजर मुझे खराब बहुत

वफा के बदले सनम ही नहीं मिला अब तक
मेरी किताब में बाकी जो हैं निसाब बहुत

खुशी में औरों की शामिल न खुश तरक्की पर
मैं चेहरे ढूँढ़ने निकली, मिले नकाब बहुत

सफर तवील न कर जिंदगी का रब मेरे
इक और जन्म लगेगा कि हैं हिसाब बहुत

अकेले हम ही नहीं सब्र करने वाले हैं
तमाम लोगों पे होते रहे इताब बहुत

सँभलते जाते हैं गिरते हैं क्या करें आखिर
बची हुई है अभी जाम में शराब बहुत

न तश्नगी, न कोई आसरा न कोई आस
जमाना फिर भी दिखाता रहा सराब बहुत

नजर न आए किसी कोई-न-कोई पढ़ पाया
हमारे चेहरे पे खिलते रहे गुलाब बहुत

जुदाई पर भी मैं खामोश ही रही 'अहसास'
मुझे पता था कि रखता है वो जवाब बहुत

ए/१, ४०१, ग्लेक्सो अपार्टमेंट,
मयूर विहार फेज-१ एक्सटेंशन, नई दिल्ली
दूरभाष : ९८११३४२२३३
astroagami@gmail.com

भीलनी गाए गीत

● तरुण दांगौडे

स्वर से सृजन हुआ। एक स्वर गूँजते हुए समूचे ब्रह्मांड में व्याप्त हो गया। समय की टेगरी पर रखे अंतरिक्ष के अँधियारे माठ से, स्वर बूँदों सा रिंझने लगा। रिंझते-रिंझते (टपकते-टपकते) सरगम के स्वर निकलने लगे। एक झंकार के साथ शून्य में नाचती अंसख्य मंदाकिनियों के पैरों से तारे-नक्षत्रों, ग्रहों-उपग्रहों के घुँघरू टूट-टूटकर बिखरने लगे। कालपुरुष ने माटी घोली और भविष्य कुम्हारनी बन उस माटी को रौंधने लगा। माटी के थेपे पर थेपे जमने लगे। काल पुरुष सृष्टि सृजन करते हुए वैदिक ऋचाएँ गा-गाकर जीवन के गीत गाने लगा। उसके गीत सुन नर्मदा के पल्लू में बँधा निमाड़ अंचल और उसकी भीलनियों ने भी गाना शुरू किया—

घड़ रेऽ कुमारल्या सव्ऽ घडळेऽ सौन्नांचे।
त्या नाखजे रे ऽ कुमारल्या सूरमळ चांदूळ, तारऽऽ॥

कुम्हार तू सोने के घड़े को घड़ना और उसमें सूरज-चाँद तथा तारे डालना। अंतरिक्ष के मटके में सूरज, चाँद, तारे, ग्रह-उपग्रह डाले हैं और इस अंतरिक्ष के मटके को मथने से ही सृष्टि का सृजन हुआ। सृष्टि-सृजन के संबंध में यह लोकगीत निमाड़ की भीलनियाँ गाती हैं।

विज्ञान ने सिद्ध कर दिया है कि सृष्टि का सृजन ध्वनि से हुआ है। पहले वह अनंत स्वर हुआ, जिसे भारतीय परंपरा में 'शब्द ब्रह्म' कहा गया। उस शब्द ब्रह्म की गर्जन से स्वर निकले और उस स्वर से विविध ध्वनियाँ, उन ध्वनियों से अक्षर-शब्द और बोली-भाषाएँ। उन अक्षर-शब्द और बोली-भाषाओं में प्रकृति ने संगीत भरा। गीत-संगीत प्रकृति के कण-कण से मुहाल (शहद) के रस सा निर्झरने लगा। उस रस को धरती ने चखा तो बीजों के रूप में अंकुरित हो गई और हरीतिमा की चुनर ओढ़ नाचने लगी। नदियों ने चखा तो कलकल का मल्हार गाने लगी। पंक्षी-पखेरुओं ने चखा तो भैरवी-हिंडोल रागों सा कलरव करने लगे। उसी संगीत से हवाओं ने सरसराहट का आशावरी राग गाया। नभ के चौड़े सीने में जब यह संगीत धड़कने लगा तो, उसने धरणी के बिछोह में कजरी गाया। जीवधारियों में यह संगीत श्वासों की बीन बजाने लगा और राजनर्तकियाँ बन पलकें नर्तन करने लगीं। गीत का स्वर ही मानव के कंठ से शब्द, बोली, भाषा के रूप में स्पंदित हुआ। मनुष्य ने सांकेतिक भाव-भंगिमाओं के साथ नृतन करते हुए, गीत गाए। कालचक्र अवार (मोहल्ले) में दौड़ते बाल-गोपाल के चाकले (चक्के) सा घुमने

सुपरिचित लेखक। आदिवासी लोक-साहित्य के अध्येता, हिंदी के विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, जर्नलों में निबंध, शोध-पत्र एवं शोध-आलेख प्रकाशित। संप्रति माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय, स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खंडवा।

लगा। मनुष्य के ज्ञान का रोटा सिका और अनुभव की अमाड़ी की भाजी (निमाड़ अंचल में खाई जाने वाली एक भाजी) चूड़ी और मानव अपने सुख-दु:ख, भाव-संवेदनओं, हास-परिहास, हर्ष-उल्लास, विषाद आदि मनोभावों को लोकगीत की माला में मोती सा पिरोने लगा। लोकगीत सामुदायिक जनचेतना का अग्रदूत है और समस्त मानव जाति के इतिहास का साक्षी भी, क्योंकि लोकगीत गाए जाते हैं और विश्व के सबसे प्राचीन ग्रंथ वेदों को भी गाया जाता है।

लोकज्ञान के रथ पर सवार होकर मनुष्य ने विकास की यात्राएँ प्रारंभ कीं। नर का विज्ञान बोध, गिलकी के रेले सा उन्नति के मांडवे (मचान) पर चढ़, महत्त्वकांक्षा की मुँड़ेर पर जा बैठा। ऋतुएँ बेटियों सी पीहर आने-जाने लगी और मौसम बेटों सा बदलने लगा। टूटते परिवार में पिता अंबर सा आधार विहिन हो गया और माँ वृद्धाश्राम मे धरती सी मौन हो गई। लालच की जेठानी-देवरानी ने दिन भर चुगली का मोबाइल कानों धरा तो प्रेम और स्नेह के भाई-बहनों का नेटवर्क ही नहीं मिलने दिया और तो और क्या कहूँ, जबसे स्वार्थ की पड़ोसन विश्वास के ससुराल में घुसी तो रिश्तों की बहू का नांदना (ससुराल में रहना) दूभर हो गया। मित्रता का जेठ मुँह फुलाकर जड़ें खोदने लगा और अपनेपन के फूपाजी घमंड की दारू पीकर, मर्यादाओं की फूपी को मारने-पीटने लगा। आधुनिकता की दौड़ में पूरे घर-परिवार का सत्यानाश हो गया। गाँव में अपनी खेत-बाड़ी बेचकर, बेटे-बहू के नाम अपनी सारी जायदाद लिख देने वाली जानकी फूपू को बेटा-बहू वापस गाँव छोड़ गए। तब से याणी-संझा (सुबह-शाम) जानकी फूपू अपने दासे (ओटले) पर बैठ अपनी शहरी बहू के विषय में कहने लगी। ''मी न मांजा धनी दुसरा कौनी येत त मारा पनी।'' मैं और मेरा पति दूसरा कोई आए तो मारों उसे पनही। ऐसे समय और ऐसे माहौल में लोकगीतों का बीज कहाँ ढिसूर फोड़े। शहर वालों को तो अपने

से ही फुरसत नहीं मिलती, वह सामुदायिकता की क्या बात करेंगे। शहरी लोक चेतना तो गमले में लगी सजावटी मनी प्लांट जैसी है। न गोढ़ मिले न जड़, अपने को ही हरा-भरा रखना, यही तो सीखा है शहर वालों ने।

हमारी दो चाकली फटफटी बड़वानी (म.प्र.) से निकल जैन तीर्थ बावनगजा की ध्यानस्थ सतपुड़ी पहाड़ियों के माथे में पड़ी जूँ सी तर-तर चलने लगी। सतपुड़ा की सूडौल काया-किसी सुंदरी की देहावष्टी की भाँति इस सावन में नैसर्गिक सौंदर्य से गदरा रहीं थी। जहाँ-तहाँ झरने सतपुड़ा के हृदय को चीर कलकल करते बगल रहे थे। सावन सेरे की बूँदें स्वश्तिवाचन करते हुए हमारे तन-बदन के प्रत्येक रोम छिंद्रों के रोमकेशों पर बैठ, मोती सी बत्तीसी बता रही थी।

दूर कही सतपुड़ा के शिखरों पर बारेला भील ग्वाला अपने ढौर-केर (मवेशियों) के पास बैठ अपनी पाउली (बाँसुरी) पर मधुरतान छेड़ रहा था। पाउली के स्वर सुमधुरता की घोंगडी (टाट का बरसाती कोट) ओड़ कर इधर-उधर भाग रहे थे। सावन सेरे (बौंछरें) की बौछारों ने अपनी तरुणाई छोड़ी और अपनी जवानी का जोश दिखाते हुए भदड़-भदड़ गिरने लगा। हम घबराकर, सड़क किनारे बाँस के झुरमुट में जा छिपे। पाटीदार सर ने निराशा भरे स्वर में कहा, शायद हम दोनों आज लैक्चर नहीं ले पाएँगे। लेकिन प्रकृति तो हर क्षण हमारा लैक्चर लेना चाहती हैं। मनुष्य ही लालच की कोचिंग करते फिरता है। उसे प्रकृति के नि:शुल्क शिक्षण से क्या लेना-देना। वह तो अपने लिए ही गोर (कब्र) खोद रहा है। और उस गोर में बैठकर प्रकृति का निरंतर उपभोग कर रहा है। अच्छे-बुरे दोनों प्रयासों से वह प्रतिदिन प्रकृति के दोहन में लगा है। सृजन की नहीं, विध्वंश की बातें करता फिरता है। भविष्य में मानव जाति ही इसका परिणाम भोगेगी। आज तो उपभोक्ता बन, प्रकृति की अँतड़ियों को खींचो।

बाँस की उस घनी झुरमुट के गेहरे में पाँच-छह लोग और आ गए। उनमें नीमड़ी फाल्या (भील बस्ती) के सुमला बड़वा भी थे, जो बरसते पानी को देख लगातार बड़बड़ा रहे थे। ''ज्यो पाणीबाबु आपणी माई कु नी हुयू'' यह पानी बाबा अपनी माँ का भी नहीं हुआ। मन में जिज्ञासा जगी। बाबा से पानी की लोककथा सुनी। बरसते पानी ने अपनी माँ को वचन दिया। माँ जा पनघट से पानी भरने जा। मैं तब तक नहीं बरसूँगा। माँ निश्चिंत हुई। माँ को इतना विश्वास दिलाया कि माँ ने रंग-बिरंगे कागज के कपड़े पहने और पनघट गई। लेकिन पानी तो पानी है। वह भी बरसात का पानी। सावन के सेरे का पानी। उसका मौसम और वह बरसे नहीं वह तो भदड़-भदड़ करके बरसने लगा। माँ के कागजी कपड़े भीगे और गल गए। माँ भोंगली (निर्वस्त्र) हुई। नंगी-पुंगी घर आकर, बेटे से शिकायत की। पानी बेटा मुसकरा दिया। मैं पानी हूँ। बरसात का पानी। मैं तो बरसूँगा। जी खोलकर बरसूँगा। बरसते-बरसते संगीत के सप्त सुरों का सृजन करूँगा। मांदल पर बरसूँगा तो मस्ती और उन्माद का संगीत बनकर निकलूँगा। पहाड़ पर गिरूँगा तो नदियों का गीत हो जाऊँगा। धरती पर गिरूँगा तो बीज की धड़कन बन जाउँगा। भीलों के गाँव में गिरूँगा तो, बैरनी, नवाई, नाईपूजा आदि लोकपर्वों के गीत बन, प्रकृति के प्रति उपकार के गीत गाऊँगा। मैं भीलनीयों के गाबडे (गरदन) में, झिबड़ा, आमडी, महुडी, आंबा, पिपल्या की गोंदी गई आकृतियों से झाकूँगा और भीलनियों के कंठों में राब (गुड़ की चासनी) की मिठास बन लोकगीतों के रूप में बरसूँगा। मैं तो पानी हूँ वह भी बरसात का पानी मैं तो बरसूँगा।

सूमला बाबा की लोककथाएँ आगे भी चलती रहीं। लोकमानस जब विस्तार पाता है तो उसका कोई अंत नहीं होता। समूचा ब्रह्मांड लोक के सूपड़े में फटकार खाता है। लोक समाज को झाड़-फटकारने और सुधारने का काम करता है। लोक के रूखड़े (गोया/घूरा) से ही सभ्यता और सामाजिकता का कंपोस्ट खाद तैयार होता है। मानवीय सभ्यता के विकास के लिए लोक संस्कारों की घुट्टी अनिवार्य है।

मेघों ने अपना घनघोर रूप धारण कर लिया। बांस का झुरमुट अँधियारे मेघों की कजलाई से ढक गया। नन्हीं बदराएँ आसमानी झीरे से पानी उलीच-उलीच धरती की गागर में डालने लगी। हमारे पीछे बागड़ के पार छान (ओसारे) से, एक मधुरतान सुनाई। झाँह आई जाऊँ (यहाँ आ जाओ) उस बारेला भीलनी का आग्रह सबने सहर्ष स्वीकार कर लिया। अपने टाप्रे के ओसारे में हमें बिठा, वह पुन: सूपड़े में ज्वार फटकारते हुए गाने लगी—

पुळा गाऊँ नेऽ डुंगरे पडझै रे पाणी बाबा।
नौंदीऽ आवसे रेऽ पाणीबाबा।
पुळा नाऽ खेतेऽ पौडझै रेऽ पाणीबाबा।
ओनाज पकसेऽ रे पाणी बाबा।

परले गाँव के पहाड़ पर गिरना रे पानी बाबा। वहाँ की नदियाँ सूख गई हैं। वहाँ की नदियों में पानी आएगा। परले गाँव के खेतों में ही बरसना पानी बाबा। वहाँ अनाज अच्छा पकेगा। गीत का भाव जानकर मन पसीज गया। यह होता है लोक, यह होता है, लोक कल्याण। अपने से पहले दूसरों का हित और दूसरों की चिंता। लोक चिंता स्वयं के लिए नहीं होती। लोक की चिंता तो समूचे जड़ चेतन के लिए होती है। लोक संवेदनाओं की नदी सबके मन को लोक संस्कारों के जल से सींचती है। सर्वजन हिताय-सर्वजन सुखाय और वसुधैव कुटुम्बकम् का यह भाव इस अनपढ़ आदिवासी महिला ने कहाँ से सीखा होगा। यह लोक का ही चमत्कार है। यहाँ कोई विश्वविद्यालयीन डिग्रियाँ नहीं दी जातीं। परंतु मानवीय भाव-संवेदनाओं से युक्त हृदय अवश्य दिया जाता है। जो जन कल्याण सीखाता है। प्रकृति के प्रति उपभोक्ता नहीं अपितु उपासना की दृष्टि देता है। अपूर्णता की नहीं संपूर्णता की बात करता हैं। लोक 'मैं' की नहीं 'हम' की बात करता है।

उस भीलनी का लोकगीत सुन, बरसाती बूँदों सा मेरा मन भी उमड़ने-घुमड़ने लगा। भीली लोककथाएँ, गाथाएँ, गायणे, वार्त्ताएँ, लोकगीत और भीली इतिहास से जुड़ी वह सारी बातें, दिमागी खोदरे (नाले) में अनाचक पुर ले आई। भील जब गाता है तो दुनिया सुनती है। निराकार-अंधकार में माई गऊँरा (गौरा-पार्वती) का मन नहीं लगा। समाधि से मादेव (महादेव) को जगाया। मैं किसके साथ बातें करूँ। मेरे साथ कौन खेलेगा। गौरी-महादेव ने विचार-विमर्श किया। गौरा की प्रेरणा से महादेव सृष्टि-सृजन में लग गए। नारी सृजन की प्रेरणा है। अपनी कोख की उपजाऊँ बाड़ी में सृजन के बीजों का पल्लवन करती है। पुरुष सृजन का बीज हो सकता है, किंतु उन बीजों में अंकुरण की क्षमता तो

नारी है। अंकुरण के बीना बीज का कोई अस्तित्व नहीं। सुलायले और घुन पड़े बीजों को किसान फेंक देता है। बीज कितना भी उन्नत कोटि का क्यों न हो उसका अंकुरण। उसका विकास माटी की कोख में ही होता है। जीव सभ्यता ने माँ की कोख से ही विकास पाया है। इसलिए देवादिदेव महादेव अर्धनारीश्वर है। गौरी की प्रेरणा से उस निराकार-अंधकार में महादेवजी ने अपने भाल के मेल से भील को बनाया और कंठ के मेल से भीलनी। भील को महादेव ने अपने डमरू से भीलों का वाद्यमंत्र 'ढॉक' बनाकर दिया, और कहा की मैं सृष्टि-सृजन करूँगा, तूने इसे बजाना है। भीलनी से कहा की तुम सृष्टि सृजन को देख-देख, सृष्टि-सृजन के गीत गाना। भीलनी ने धरती के गीत गाए। आसमान के गीत गाए। जल के गीत गाए। वायु-अग्नि के गीत गाए और जीव व जगत् के गीत गाए। भीलनी के गीत सुन-सुन, महादेव हाइबाप (जल्दी-जल्दी) से सृष्टि-सृजन करने लगे। भीली लोककथा की इस सुंदर परिकल्पना में मानव मन का कोमल भाव अभिव्यक्त हुआ। सृष्टि-सृजन नारी की प्रेरणा से संगीत की तान और गीत की लय पर हुआ। पुरुष जीवन-जगत् का संगीत है तो स्त्री प्रकृति और जीवन की लय। मानव-मन की गुनगुनाहट ने ही संगीत में सात स्वर और रागनियाँ भरीं, और अपने जीवानुभव को लोक-गीतों के माध्यम से अभिव्यक्त किया। लोकगीतों की रचना मानव के कोमल और कवले मन से हुई। लोकगीत प्रकृति का सहचर है। लोक एवं लोकगीत। वेद, पुराण, शास्त्र और सुसंस्कृत मानव साहित्य के परे है। लोक-साहित्य, लोक-संस्कृति, लोकगीत, संगीत का रूप ऐस ही है, जैसे घट्टी में दलने के पूर्व अनाज। लोक समाज की खड़ी फसल है और शास्त्र वैज्ञानिक तकनीकी से सुसंस्कृत समाज की चक्की में पीसा पीठा (आटा) है। दोनों का अनाज एक ही है, लेकिन स्वाद और स्वरूप भिन्न हो गए। लोकसाहित्य विशाल समुद्र है और शास्त्र ताल-पोखर। एक असीमित और दूसरे की सीमा मानवीय मेधा द्वारा निर्धारित होकर सीमित हो गई। किंतु लोक और लोकगीतों का निर्धारण, सीमाकंन और संग्रहण संभव नहीं। समाज व शास्त्र की यशोदा लोकस्वरूप कान्हा की कमर को नियमों के उखल से बाँध नहीं सकती। लोकगीतों का स्वर स्वार्थ के लिए नहीं अपितु परमार्थ के लिए गूँजता है। मैं से हम तक की यात्रा। नाम से अनाम हो जाने की यात्रा। एक से अनेक होने की यात्रा। स्वंय से सामुदायिक और समग्रता के भाव की यात्रा। लोक के अनंत मार्ग पर ही होती है। जीव-प्रकृति और परमात्मा तीनों का एक हो जाना ही लोक है। इसलिए लोकगीतों में व्यक्तिगत सुख-दु:ख व्यक्त नहीं होते अपितु लोकगीतों में समस्त प्रकृति, जीव के माध्यम से अपनी बात कहती हैं। लोक में मैं होने का भाव जलकर भस्म हो जाता है। ''जो घर जाले, आपणा सौ चले हमारे साथ।'' कबीर ने सांसारिक घर की नहीं अपितु मैं के भाव को जलाने की बात कही थी। शरीर रूपी घर को लोकज्ञान की अग्नि में स्वाह कर, प्रकृति को ही अपना घर मानना और लोकमय हो जाना ही लोकतत्त्व की प्राप्ति है। लोकगीतों का मधुर स्वर मैं और अहं के मुंड पर शोभा नहीं देता। इसलिए कबीर कहता है—''कबिरा यह घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं। सीस उतारे भुंई धरे तब पइसे घर माँहि।'' लोक में अंहकार का मुंड धड़ पर धरा नहीं होता, लोक में तो जनकल्याण की गंगा प्रत्येक प्राणी के माथे की शोभा होती है। इसलिए लोक में जड़-चेतन, देव-दानव-मानव और जीव-जंतु-जानवर सभी के प्रति समभाव की दृष्टि होती है। और लोकगीतों में करुणा का यही सर्वव्यापी स्वरूप मुखरित होता है। बरसते पानी में बारेला भीलनी के गीत सुन मन की गोदड़ी के सारे धागे मैंने उधेड़ डाले। बरसात में भीगने से ज्यादा उस भीलांगना के लोकगीतों के पावन स्वरों से मेरा तन-मन तरबतर हो गया। अब का पावस लोकगीतों का हरापन लेकर, तन की बागड़ पर जंगली ककोडे (जंगली सब्जी) की बेल सा हरिया गया। बौछारों की ठंडी-झड़प में भींझते-भींझते (भीगते-भीगते), बचपन में घर का काम करते वक्त माँ एक गीत गुनगुनाया करती थी—

झिलमिलऽ-झिलमिलऽ मेहुलड़ा बरसळाऽ।
आंगन कन्हैया भींझऽ रेऽ।
मांजा चतुर कन्हैया।
माता जसौदा हटीऽ हटी पूछऽ।
अथळी वारऽ कोड्ऽ लागळी रेऽ।
मांजा चतुर कन्हैया।

बेटा देर से आए। बरसात में भीगकर आए। बेटे पर कोई भी संकट का बादल गहराए। यशोदा जैसे दुनिया की असंख्य माताओं की हृदय नदी ममता के नीर से उफन पड़ती है। ममता और करुणा के भाव को पा कर माताओं ने तो बौद्ध के बौधीसत्त्व पाने के पहले ही बौधीसत्त्व पा लिया था। उनकी ममता और करुणा ने ही उनसे असंख्य लोकगीत गवाए। मन के गुंताडे में सोचते-सोचते, पानी बरसना बंद हो चुका था। हम सब उस टाप्रे से एक-एक कर अपने गतंव्य को निकलने लगे। जाते हुए मैं उस भीलनी के लोकगीत की अंतिम पंक्तियाँ बिल्ली जैसे कान खड़े कर सुन रहा था—

सूदे-सूदे घौर जाणे दीझै रे पानी बाबा।
जौगेत हाट भौरने दीझै रे पानी बाबा।
आऊणु-जाऊणु चाल्या कौरसे रे पानीबाबा।
डूळा पाणी राखजै रे पाणीबाबा।

हे पानी बाबा! तू सीधे-सीधे घर जाने देना। इस संसार का घर नहीं, उस परमात्मा के घर हमें सीधे-सीधे ही पहुँचाना। इस दुनिया के हाट-बाजार को यों ही लगने देना और जन्म-मृत्यु का खेल सदा चलने देना, पानी बाबा। लेकिन एक बात सुन, तू इनसानों में आँखों के पानी को हमेशा बनाए रखना। आँखों का आँसू मानवता की निशानी है। इनसानों में सरलता-तरलता और संवेदनशीलता आँसू ही व्यक्त करता है। इनसानों में इनसानियत का प्रमाण आँसू ही है। आँखों का यह पानी आँखों में सदा बनाकर रखना। हमारी फटफटी स्टार्ड होकर फटफट कर ठुनकने लग गई। मैं पीछे सीट पर जा कर बैठ गया। लेकिन वह भीलनी गाए जा रही थी। दूर तक उसकी खनकती आवाज हमारा पीछा करते हुए, सतपुड़ा की विशाल बाँहों में विलुप्त होकर देर तक गूँजती रही।

माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय
स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, खंडवा (म.प्र.)
दूरभाष : ९००९०९३३४९

दो कविताएँ

• डॉ. वीरेंद्र प्रसाद यादव, भा.प्र.से.

बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, पटना से स्नातक की डिग्री, फिर भारतीय प्रशासनिक सेवा में चयन। बिहार के विभिन्न जिलों में जिलाधिकारी के पद पर कार्यरत रहे। वर्तमान में बिहार सरकार में विशेष सचिव के पद पर हैं।

जब तुम चले जाओगे

यहाँ भी रह जाओगे
जब तुम चले जाओगे
जैसे रह जाती हैं
तृणापात पर तुहिन कण
पहली बरसात के बाद
धरती की सोंधी सुगंध
बोल तेरे खुशनुमा
बोलेगी आँखों की चमक
कुछ अधूरा सा सही, पर
दर्पण सा रह जाओगे
जब तुम चले जाओगे
यहाँ भी रह जाओगे
जैसे रह जाती है
सकार में भी तारे
गुंचा के मुरझाने पर भी
महक ढेर सारे
मंदिर की घंटियों में तुम
नदियाँ भी तुम्हें पुकारें
जीवन के डगर पर
थोड़ा सा रह जाओगे
जब तुम चले जाओगे
यहाँ भी रह जाओगे
जैसे रह जाती है
दमकती प्रार्थना मन में
वसंत के जाने के बाद भी
कलरव रहता उपवन में
तुम्हारे होने का अहसास
जीवट बनाए, पल में
सूरज के किरणों जैसे
कण-कण में बस जाओगे
जब तुम चले जाओगे।

जीवन का चिरंतन

मेरे जीवन का चिरंतन
तुम्हारे पलकों का कंपन
खुलते हैं पलक तेरे
झुकते हैं पलक तेरे
जैसे किसी सपने का खिलना
तेरे अधरों का स्पंदन।
तुम्हारे पलकों का कंपन
एक किरण सपनों की दो
एक चरण मेरे घर कर दो
मेरा इष्ट, तेरे सपने का कण होना
स्पर्श तेरा जैसे विकंपन
तुम्हारे पलकों का कंपन
जीवन का आधार बनो
कर्तव्य का शृंगार बनो
सब समय पराया लगता है
क्षण अपना, पलकों का झंपन
तुम्हारे पलकों का कंपन
मेरे जीवन का चिरंतन।

साअ
पटना

कन्नड़ की चार कविताएँ

कन्नड़ की सुपरिचित लेखिका एवं अनुवादिका। भगवती प्रसाद वाजपेयी का गद्य साहित्य, साठोत्तरी कन्नड-हिंदी कवयित्रियाँ, अन्वेषण (मौलिक कृतियाँ)। कल्याण की अवनति, सूर्य की छाया, इंद्रधनुष, कन्नड त्रिपदियों और लोककाव्य का हिंदी अनुवाद और हिंदी से कन्नड और कन्नड से हिंदी में अनेक लेख आदि का अनुवाद। 'इंद्रधनुष' कृति के लिए केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली के '२०१८ का हिंदीतर भाषी हिंदी लेखक पुरस्कार' से सम्मानित। कन्नड़ काव्य के चार लोकप्रिय कवियों की रचनाओं का सुमंगलाजी द्वारा किया गया हिंदी रूपांतर यहाँ पर दे रहे हैं।

लोकतंत्र

मूल : **चेन्नवीर कणवी (१९२८)**
अनुवाद : **सुमंगला मुम्मिगट्टी**

डूबता सूरज बूढ़े सिंह से होकर
पश्चिम पर्वत की गुहा में दुबक रहा है,
अपना सर्वाधिकार अंत होते-होते
लोगों की ओर घूरकर देख रहा है!

शाम के धुँधलके ने गगन सिंहासन पर
काला झंडा उठाकर दिखाया है
पक्षी संकुल एकत्र हो छुटकारे की खुशी में
गाकर जय-जयकार कर रहा है।

दिन की जलती धूप की
साम्राज्यशाही लुढ़ककर
पश्चिम सागर का जहाज चढ़ता रहा तो
संध्या समीर तो स्वातंत्र्य संदेश
लेकर चारों दिशाओं में फैला रहा है।

विस्तृत गगन में फिर से जनता राज्य
विज्रंभित हो रहा है नक्षत्र लोकतंत्र
व्यक्ति-व्यक्ति के गुण-विकास प्रकाश में
जग को प्रकाशित करना उसका मूलतत्त्व।

आकाशगंगा ने शासन सभा चलाकर
मंत्रिमंडल निर्मित किया है;
बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि,
मंगलादि प्रमुखों को
विविध मंत्री बनाकर नियुक्त किया है।

कृत्तिका मृगशिर सप्तर्षि मंडल
राजनीतिक पक्ष दल
दक्षिणोत्तर ध्रुव की मध्यस्थता से
क्या मुख्यमंत्री चंद्र बना है?

छुटकारे का सौभाग्य पाकर गगन में यों
शांति समदर्शिता की शीतल रात ने
धनिक-निर्धन न मानते
समता से संतृप्त किया है
सब को समभाग चंद्रिका।

कवच

मूल : **एल. हनुमंतय्य (१९५८)**
अनुवाद : **सुमंगला मुम्मिगट्टी**

जन्म से बँधा यह
कवच गिरता नहीं उठता नहीं
कर्णदानियों जैसे रखने पर भी काटकर
देह के पार्श्व को एकेक कर
कटता नहीं जन्म-मोह

दे कहने पर भी दाह नहीं दूर होता
जाता नहीं वज्रदेह जैसे
भूगर्भ को चीरकर
निकाले सोने को पिघलाकर रूमाल
बनाकर पोंछ लेने पर भी पिघलकर
जाता नहीं सपने में भी।

कोश पढ़कर देश घूमकर
आने पर भी बगल में सुलग उठेगा
धर्म नामक अधर्म भीतर का
बीज गिरकर अंकुरित हो पेड़ बनकर
फल की दूकान में लहलहाते
हँसते वक्त कवच तन गया था।

खोने के लिए ही घूमे कितने ही
महात्माओं ने मौन नाव में
शास्त्र के वस्त्र में लपेटकर
शरधि पार फेंकने पर भी जहाज चढ़कर

गर्जन बन बिजली बन बारिश की
बूँद-बूँद बनकर मिट्टी में मिल गया कवच

कण होकर अणु होकर व्रण होकर
लहू के आँगन में समा कर लाल सफेद
कणों में प्राण धातु।
अहिंसा अस्त्र को कंधे पर
ढोकर आई सज्जनता के
बुद्धदेव को खामोशी से
दूर रख कालांतरों के
कदमों में नाल बना है कवच।

रामानुजाश्रम में
मिलने पर भी कड़ी अक्षर की
छेनी ने तोड़ दिया था घुटने टेककर।
बसव के जोड़ने पर भी आँच में ही
जंग लगी थी बगल में ही
कल की जीभ जलाने वाले
दर्भ को रख समा गई
माया चरित के चक्र में।

सौ योजन राह तय करने पर भी
कोना कटा नहीं है घिसा नहीं है तनिक भी
पैर लड़खड़ाए नहीं हैं कमर टूटने पर भी
जन्म से मजबूत बना है
छाया से धूप से लता फूल से
जन्म से बँधा यह
कवच निकलता नहीं है
गिरता नहीं है मुझे छोड़कर
जन्म से ही जुड़ गया है
कवच, अछूता कवच।

मिले तो हँसी लाकर दोगी, सखी

मूल : **के. राजेश्वरी गौड़ (१९५४)**
अनुवाद : **सुमंगला मुम्मिगट्टी**

तुम क्यों आजकल
मुँह फुलाए रहती हो—
कहा आईने ने
भौंहें सिकुड गईं, कहा—
मुझे कौन है तुम्हें छोड़कर सखी,
पंछियों जैसे उड़ते हैं यांत्रिक होकर
वाहन छोड़े हुए धुएँ की
साँस लेते हैं
डिब्बे भीतर का नाश्ता पेट में
घुसाते हैं।
दुलारने की उनींदी आँखों के
लाल को दूसरों की गोद में
धकेलते हैं आँत के बंधन
मुरझाने जैसे मसलते हैं।
प्रीति को खदेड़कर
प्रेत को रखा है
हरियाली चाहनेवाली आँख को
टकरा रही तपती धूप
पैर रखे तो धँस जाने लायक कीचड़
भीतर की रुलाहट बाँट लेने को भी
फुरसत नहीं
एह ही छत तले रहकर भी
न मिलने का समयाभाव
धन के पीछे भाग-भागकर सुस्ताकर
हँसमुख खोकर तन गया है
सखी, मिले तो हँसी लाकर दोगी?

अदृष्ट

मूल : **सरजू काटकर (१९५३)**
अनुवाद : **सुमंगला मुम्मिगट्टी**

चेचन्या में यदि पैदा होता तो मैं
मर ही जाता दफना देते ऐसे
मानो किसी को पता न चले
रूसी सैनिकों से

वियतनाम में यदि पैदा होता तो मैं
अमरीका के बमों से
बचा लेना असंभव होता था
बमबारी करनेवालों से उध्वस्त हुआ होता सपरिवार

कराची में यदि पैदा होता तो मैं
काटकर रख देते
शिया-सुन्नी झगड़े में
मुसलमान कहने पर भी छोड़ते न थे दोनों

युगांडा में यदि पैदा होता तो मैं
किसी भयानक बीमारी की
बलि हुआ होता : बीमारी के साथ
मुझे भी दुनिया भर बदनाम किया होता

जर्मनी में यदि पैदा होता तो मैं
ज्यू कहकर जिंदा जला देते
हिटलर के सैनिकों के सामने
घुटने टेककर खड़ा होना पड़ता था रोज

अफ्रीका में यदि पैदा होता तो मैं
वर्णद्वेष की बलि चढ़ गया होता
काला कहकर गोरे, गोरे कहकर निग्रो
छील देते थे मुझे केले की तरह

श्रीलंका में यदि पैदा होता तो मैं
ह्यूमन बम से बचाते
बचाते मर ही गया होता
आकाश को उड़ता था चीथड़ा-चीथड़ा बनकर
सऊदी अरब में यदि पैदा होता तो मैं
हाथ-पैर कटवा लेता
किसी स्त्री को रास्ते में
जाते समय हाथ लगा कहकर

मेरा अदृष्ट अच्छा था;
भारत में ही पैदा हुआ मैं
कुछ भी न होते हुए भी चारों ओर
जीव तो है मेरा मेरे चारों ओर

७८, ४ क्रास, श्रीपाद नगर,
रानी चेन्नम्म नगर के पास,
धारवाड़-५८०००१ (कर्नाटक)
दूरभाष : ७६१९१६४१३९

गहरी निद्रा पैठ

● धर्मपाल महेंद्र जैन

सवेरे पाँच बजे उठने वाले प्राणियों पर मुझे दया आती है। यह समय ब्रह्म मुहूर्त कहा गया है। इसमें ब्रह्मांड के मुख्य कार्यपालक ब्रह्माजी उठते हैं। उनके उठते ही मुर्गे बाँग देते हैं। ब्रह्माजी के चमचे इसे शुभ मुहूर्त समझते हैं। यह ब्रह्माजी के लिए गार्ड ऑफ ऑनर है, चमचों के लिए नहीं, इसलिए आप वापस सो जाइए। ब्रह्मानुयायी कँपकँपाती ठंड में शीतल जल से स्नान कर ब्रह्माजी को अपनी कृशकाया बताते हैं। सूर्योदय होता है तो ये लोग सूर्य नमस्कार करने लग जाते हैं। कैसे परंपरागत दलबदलू हैं ये, हर आते देवता के सम्मान में निष्ठा बदल लेते हैं। इसी प्रवृत्ति के मारे देवी लक्ष्मीजी ने उल्लू, गणेशजी ने चूहे और विष्णुजी ने गरुड़ को अपना ड्राइवर चुना। किसी देवी-देवता ने मतलबी आदमी को ड्राइवर नहीं रखा। अवसादग्रस्त इन प्रात: उठक्कड़ों ने भ्रांति फैला रखी है। वे कहते हैं—'जो जागेगा वह पाएगा'। शायद वे नहीं जानते कि जागने के लिए सोना बहुत जरूरी है, इसलिए मेरे दुर्लभ पाठको, नींद का भरपूर आनंद लो, सपनों का स्वर्गीय सुख उठाओ। हमारे भरपूर सोने से देवताओं का दिमाग ठिकाने आ जाएगा और मानव जाति को अपनी खोई हुई कांति मिल जाएगी। मैं कुंभकर्ण का ऋणी हूँ, जिन्होंने महीनों सो कर निद्राक्रांति का कीर्तिमान बनाया। सोने में सर्वसिद्धि मानी गई है। सोना गोल्ड माना गया है। सरकार सोती है, प्रशासक सोते हैं, जनता सोती है। सारा का सारा देश सो रहा है, तभी प्रगति कर रहा है। जनसंख्या बढ़ रही है।

आदमी नींदजीवी है, आधी उम्र संकटमोचक निद्रादेवी की साधना में रहता है। सभी योनियों में जनमे प्राणीकाय इसके साधक हैं। कभी किसी ग्रह-उपग्रह पर जीव मिलें तो वे भी निद्रादेवी से संक्रमित ही होंगे। अमेरिकन हो या चीनी, चौपाया, दोपाया या लेटपाया, सभी निद्रादास हैं। मैं भी उनमें से एक हूँ। हर रात्रि टाँग पर टाँग चढ़ा, मुँह ढक भरपूर निद्रायोग करता हूँ। जो लोग यह योग बराबर नहीं करते, उन्हें बीमारियाँ घेर लेती हैं, उनका घर अस्पताल नजर आता हैं। उनकी काया जवानी में दवाई की बोतल और कालांतर में सीरिंज जैसी लगती है।

आदमी रोटीजीवी जमात भी है। एक जमाने में रोटियाँ पेड़ पर लगती थीं। लोग बिना कूपन के, बिना लाइन लगाए ताजी-ताजी रोटियाँ तोड़ते, खाते और ठंडी हवा में घर्र-घर्र-खर्र नींद निकालते। बुरा हो उस लालची, संग्रहखोर, अशक्त वृद्धा का, जिसने एक हफ्ते की रोटियाँ तोड़कर स्टॉक कर लीं। उस नाजीवादी तानाशाह को क्या कहें, जिसने रोटियों के बाग उजड़वा दिए। तब से हमें रोटी के लिए श्रम जैसे कठोर और अभारतीय काम करने पड़ते हैं। रोटियाँ क्या छिनीं, चादर तानकर सोने का मौलिक अधिकार छिन गया। आपकी तरह मुझे भी सवेरे-सवेरे लाजवाब नींद आती है। नींद 'आती' है, इसी विचार से मैं भाषाशास्त्रियों के ज्ञान का कायल हो जाता हूँ। यदि यह वाक्य नींद 'आता' है होता, तो मैं सवेरे चार बजे उठकर घर से विदा हो जाता। गरमी के मौसम में प्रात:काल ठंडी-ठंडी रुहअफजाई बहार का आनंद लेना हो तो चादर ताने रहो। सर्दियों की सुबह में स्व-सेते शरीर की गरमाहट का अविस्मरणीय अनुभव लेना हो तो रजाई में दुबके रहो। नींद का भरपूर जायका, बेहतरीन स्वाद और पूरी तसल्ली भाग्यवान प्राणी को सवेरे-सवेरे बिस्तर में पड़े-पड़े मिलती है। लोग यहीं से स्वर्ग पाना भी पसंद करते हैं।

जाने-माने लेखक। 'इमौजी की मौज में', 'दिमाग वालों सावधान', 'सर क्यों दाँत फाड़ रहा है' (व्यंग्य-संकलन), 'कुछ सम कुछ विषम' और 'इस समय तक' (काव्य-संकलन) रचनाएँ पत्रिकाओं में प्रकाशित। चाणक्य वार्त्ता एवं सेतु में स्तंभ लेखन।

मेरे उठने के इंतजार में पिता या पत्नी (जैसा भी मामला हो) आणविक विस्फोटक बनने लगते हैं। जम्हाई मुझे कभी बिरजू महाराज या कभी सोनल मानसिंह बना रही होती है। तभी ऊँची आवाज में राष्ट्रीय समाचार आने लगते हैं। पड़ोसी आज का ताजा अखबार लौटा जाते हैं। नाश्ते की उकसाती गंध बिस्तर से अधिक मोहक लगने लगती है, तब मैं उठ जाता हूँ। जो लोग जल्दी उठते हैं, उन्हें हर बात के लिए लाइन में लगना पड़ता है। रोजगार दफ्तर की लाइन की बजाय ये लोग शौचालय की लाइन में लगे रहते हैं। देर से उठो तो देर से सोओ। जल्दी सोने वालों की आधी रात में नींद खुल जाती है। आदमी चिंताओं का स्टॉक एक्सचेंज बनने लगता है। मच्छरों को अपना खून चूसते देख सरकारी विभागों की याद आती है। देर से सोने में यह फायदा तो है ही कि खटमल-मच्छर ज्यादा तंग नहीं करते। वे परिवारजन का खून पी-पीकर संतृप्त हो चुके

होते हैं। यदा-कदा उनकी भिन-भिन शास्त्रीय संगीत सी लगती है। शास्त्रीय संगीत सुनते हुए जब मुझे दिन में ही झपकी आ जाती है तो रात्रिकालीन संगीतसभा में गहरी नींद आना पक्का समझिए। सोने पर प्लेटिनम का टच। इस समय तक वरली-मटके के ओपन-क्लोज भाग्यांक आ चुके होते हैं। हमारे पड़ोसी की रोजी-रोटी इसी पर निर्भर करती है। उनके सोने की संभावना भाग्यांक पर आधारित है। थाली-बेलन और निहत्थे का गृहयुद्ध सामान्यत: रोज चलता है। इसलिए मेरे निद्रालीन होने का सुसमय अर्धरात्रि के बाद ही आता है। आप अल्हड़ अर्धरात्रि की कल्पना तो करें! भीड़ भरी सड़कें लॉकडाउन सी शांत हो जाती हैं। बंद दुकानें और खामोश खोमचे, चुनाव हारे राजनेता से मौन हो जाते हैं। सड़क पर मंद शीतल पवन की अनुभूति करते हुए ऐसा लगता है, जैसे हम जीवन की संभावनाओं का पता लगाने अन्य लोक में घूम रहे हों। बस पुलिस वालों से अचानक जान-पहचान के अवांछित सुख से बचकर रहें।

जो लोग जल्दी उठते हैं, उन्हें हर बात के लिए लाइन में लगना पड़ता है। रोजगार दफ्तर की लाइन की बजाय ये लोग शौचालय की लाइन में लगे रहते हैं। देर से उठो तो देर से सोओ। जल्दी सोने वालों की आधी रात में नींद खुल जाती है। आदमी चिंताओं का स्टॉक एक्सचेंज बनने लगता है। मच्छरों को अपना खून चूसते देख सरकारी विभागों की याद आती है। देर से सोने में यह फायदा तो है ही कि खटमल-मच्छर ज्यादा तंग नहीं करते। वे परिवारजन का खून पी-पीकर संतृप्त हो चुके होते हैं।

प्रात: देर से उठ हाय-तौबा मचाते हुए ऑफिस जाने का पौरुषीय सुख अवर्णनीय है। नहाने जैसा दंड मुझे मजबूरी में ही भुगतना पड़ता है। इस कारण सर्दी-खाँसी-कोरोना जैसे कुष्ठ रोग नहीं होते और असाध्य डॉक्टरों के पास जाने से मैं बच जाता हूँ। मेरी धारणा है कि भारतीय रोज नहाने के कारण गरीब हैं। कहावत है—पैसा हाथ का मैल है, नहाने पर मैल धुल जाता है। अरब देशों में लोग हफ्ते-दो हफ्ते में नहाते हैं, इसलिए अमीर हैं। चिंतन करते-करते ऑफिस पहुँच ही जाता हूँ। लेट पहुँचो और नजर आ जाओ तो अफसर बुलाएगा ही। उन्हें श्वेत-चौपाया बनाने के कई गोपनीय हथकंडे हैं, जो यहाँ सार्वजनिक नहीं किए जा सकते। ऑफिस में उबासी पीछा नहीं छोड़ती, आगंतुकों को मुझे कुछ कहना नहीं पड़ता, वे स्वत: ही राजधर्म निभा जाते हैं। दिन की शुरुआत ही पहली गेंद पर छक्का मारने जैसी लगती है। मजा तो तब आता है, जब बॉस कैबिन में बुलाते हैं, शिक्षाप्रद भाषण देते हैं। मैं होठों को भींचकर उबासी दबाए रखता हूँ, बॉस समझते हैं मैं आज्ञाकारी हूँ, मुसकराते हुए उनका उपदेश ग्रहण कर रहा हूँ। कैबिन से बाहर निकलने पर जम्हाई तेजी से आती है, भाव बदले होते हैं और मुँह खुला का खुला रह जाता है। सहयोगी समझते हैं, बॉस मुझ पर बहुत खुश हुए होंगे। देर से उठने के इस दैवीय गुण के कारण मैं चमचागीरी करने वाले सर्वोत्तम चमचों में गिना जाता हूँ। विवाहित आदमी फक्कड़ों की जिंदगी जीना चाहे तो उसका एकमात्र उपाय है देर तक सोना। पाठक, आप अभी से क्यों सो गए? कबीर की शैली में दो लाइनें तो सुन लें—'जिन सोया तिन पाइया गहरी निद्रा पैठ। हौ बोरा सोवन डरा रहा ठेठ का ठेठ।'

1512-17 Anndale Drive,
Toronto M2N2W7, Canada
दूरभाष : + ४१६ २२५ २४१५
dharmtoronto@gmail.com

पावन संकल्प

लघुकथा

● सत्य शुचि

नवदंपति घर में प्रवेश के लिए आतुर से गेट पर खड़े थे और वातावरण भी खुशियों से महक उठा था, मगर एकाएक, मम्मी-पापा नवदंपति के समीप पहुँचकर उन्होंने हर किसी का ध्यान अपनी ओर खींचना चाहा।

"बेटे!" पापा बोले, "घर में प्रवेश से पहले आपको एक नई रस्म अदायगी करनी होगी..."

"बोलिए-कहिए, पापा···! हमें बताइए···क्यों नहीं करेंगे?" प्रफुल्लित मुद्रा में उसने सहमति जताई।

"आप दोनों को एक संकल्प लेना-भरना होगा अभी।" पापा के हाथ में एक पीतल का लोटा था, जिसमें कदान्वित् पानी था कि गंगाजल था।

"ठीक है, आप कहते हैं तो ले लेते हैं सकल्प।" नवदंपति ने अपने दोनों हाथों में जल भरा-लिया और उसके बाद बड़े गौर से पापा को देखने लगे।

"अगर कल को आपके बेटी होवे तो उसे बचाना है···बस।" सार-तत्व में जानकारी परोसते हुए वह पलटे।

···क्षणों तक नवदंपति पापाजी की बात पर मंद-मंद मुसकराते रहे और तभी बेखटके वो घर के भीतर दाखिल हो गए।

साकेत नगर, ब्यावर-३०५९०१ (राज.)
दूरभाष : ०९४१३६८५८२०

ललित-निबंध की लोकतांत्रिक चेतनाएँ सांस्कृतिकता और गणतांत्रिक परंपरा

● गोविंद गुंजन

प्रसिद्ध ललित निबंधकार श्री कृष्ण बिहारी मिश्र का कथन है कि 'गद्य की निहायत आत्मीय और रम्य विधा है व्यक्ति व्यंजक निबंध।' यह व्यक्ति की स्वाधीन चिंता की उपज है। इसकी उन्मुक्त प्रकृति में लालित्य का सहज उल्लास होता है। कदाचित् इसी विशिष्ट प्रकृति लक्षण के आधार पर इस विधा को ललित निबंध कहा जाने लगा है।

ललित निबंधों का अध्ययन हमारी सांस्कृतिक मनीषा की उत्कृष्ट छवियों को समेटता है, साथ-ही-साथ भारतीय परंपरा के विकास और उसकी आधुनिकता के प्रत्येक चरणों की विवेचना भी इनमें प्राप्त होती है। निबंध लेखक की बहुश्रुतता, उसकी गहन अध्ययन दृष्टि, इतिहास और परंपरा के अटूट संबंध तथा मानवीय मूल्यों की करुणामय व्याख्या हमें ललित निबंधों में प्राप्त होती है, जिसके केंद्र में भारतीय राष्ट्र और भारतीय जन है।

भारतीय मानस प्राचीन काल से ही गणतंत्रात्मक परंपरा में विश्वास करता आया है। आर्य जाति स्वतंत्रता प्रेमी और भ्रमणप्रिय थी। वसुधा को अपना कुटुंब मानने वाली इस जाति के गणराज्यों का यदि आधुनिक दृष्टि से अध्ययन किया जाए तो हमें स्वतंत्रता, समानता, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता एवं अनुशासित शासन व्यवस्था के बहुमूल्य सूत्र प्राप्त होते हैं, जो हमारी परंपरा के उज्ज्वल आलोक-स्तंभ हैं। ललित निबंध अपनी विषय-वस्तुओं में प्रारंभ से परंपरा और संस्कृति के आतंरिक सूत्रों पर बल देता रहा है, अत: यह जानना बहुत रुचिकर होगा कि ललित निबंध की लोकतांत्रिक चेतना और सांस्कृतिकता का समन्वय किस तरह हमारी गणतांत्रिक परंपरा के विकास में सहायक हुआ है।

प्रसिद्ध ललित निबंधकार विद्यानिवास मिश्र लिखते हैं—'भारत में राजतंत्रीय और गणराज्यीय, दोनों प्रकार की व्यवस्थाओं में संस्कृति की स्वायत्तता थी। एक-दूसरे प्रकार की व्यवस्था भारतीय राजवाड़ों में रही। वहाँ चित्रकार, शिल्पी, कवि, संगीतकार, बड़े सम्मान के साथ रखे जाते थे। वे राजाओं और महाराजाओं की प्रतिष्ठा थे।' आगे चलकर मिश्रजी एक अन्य निबंध में प्राचीन परंपरा के आधुनिक युग में बिखराव पर चिंता व्यक्त करते हुए प्रतिपादित करते हैं—'देश के बँटवारे के बाद एक

एक कविता-संग्रह, एक ललित निबंध-संग्रह, एक उपन्यास एवं पत्र-पत्रिकाओं में दो सौ से अधिक निबंध एवं कविताओं का प्रकाशन तथा महत्त्वपूर्ण कृतियों पर समीक्षात्मक आलेख प्रकाशित।
अंबिका प्रसाद दिव्य प्रतिष्ठा पुरस्कार सहित अनेक पुरस्कारों से सम्मानित।

अत्यंत दुखद त्रासदी से गुजरने के बाद भी हमने सीखा नहीं, उधार ली हुई राष्ट्रीयता ढोते रहे। हमारे मज्जागत संस्कारों में भारतीयता है, जो अभी भी निरक्षर पर संस्कारी मन में मौजूद है, उसे अनदेखा करते रहे। हम भीरू हो गए हैं, समग्र की बात नहीं कर सकते, हमारे लिए समग्र बहुत सी चीजों का योग है, समग्र सबसे कुछ अलग है, जो सब में है, पर सबसे अलग है, क्योंकि वह सब होने का भाव है, अलग-अलग दिखने या पहचाने जाने का भाव नहीं।

इन पंक्तियों में भारतीय गणतंत्र की गूढ़ परंपरा की सारी विशेषताएँ आ जाती हैं। समग्रता की यह परिभाषा अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि समग्रता वह है, जो सब में है, पर सबसे अलग भी है। इसका समन्वय ही समाज को सदृढ़ता प्रदान करता है। हमारी गणतंत्रीय व्यवस्था का यही प्राचीन सूत्र सबको एक सदृढ़ और संघर्ष रहित एकता का पाठ पढ़ाता है। हिंदी के ललित निबंधों में प्रारंभ से ही इस भारतीय गणतंत्र की सांस्कृतिक एकता और जातीय विविधताओं के ताने-बाने का गहरा समन्वय प्राप्त होता है। यह समन्वय विविध बहुला परंपरा के सूत्रों से जोड़ा जाता है और गाँव के लिए परिवार, प्रदेश के लिए गाँव और राष्ट्र के लिए प्रदेश से ऊपर उठने की सतत शिक्षा देता रहा है।

हिंदी का ललित निबंध साहित्य अपने आधुनिक स्वरूप में आज बहुत ही विकसित और सुचिंतित भाषा की विकसित विधा के रूप में प्रतिष्ठित है, किंतु इसका प्रारंभ भारतेंदुयुगीन निबंधों के साथ ही माना जाता है। भारतेंदु युग के जिन दो प्रखर निबंधकारों का इसमें विशिष्ट योगदान माना जाता है, उनमें पंडित बालकृष्ण भट्ट और प्रताप नारायण मिश्र का स्थान इसके उद्गाताओं में प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं।

राष्ट्र के विविध पक्षों का चिंतन और राष्ट्रीय विचारधारा के विकास के साथ-साथ भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को गति देने में भी इन निबंधकारों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी।

सन् १८६५ ई. में हरियाणा के रोहतक जिले के गुडियानी कस्बे में जनमे बालमुकुंद गुप्त हिंदी भाषा, हिंदी जातीयता और विद्रोह वृत्ति को सींचने और पोसने वाले प्रमुख लेखक के रूप में जाने जाते हैं। गुप्तजी अखबार 'चुनार' १८८६ ई. 'कोहनूर' (१८८८-८९) 'हिंदुस्तान' (१८८९-१८९१) 'हिंदी बंगवासी' (१८९२-९८) और 'भारतमित्र' (१९९८-१९०७) इत्यादि अपने समय के प्रमुख समाचार-पत्रों में राष्ट्रीय चिंतन के विकास में अपना योगदान देते रहे। उन्हें सामाजिक और राष्ट्रीय चिंतन में जन-जन की आवाज उठाने वाले प्रखर लेखक के रूप में 'गूँगी जनता का वकील' कहा जाता था। उनके द्वारा लिखे गए 'शिवशंभू के चिठ्ठे' नामक शृंखला तो गहरे साहस की ही परिणति थी। इसमे वह स्वयं को चीथड़ापोशो का प्रतिनिधि बताते हुए स्वदेश प्रेम और मातृभूमि का महत्त्व अत्यंत सधे हुए तरीके से प्रस्तुत करते हैं। इसमें सर्वहारा वर्ग की भावनाओं को स्पष्ट तौर पर अभिव्यक्ति प्रदान की गई थी।

चिंतन की इस प्रणाली के अवलोकन से एक बात स्पष्ट है कि भारतीय स्वतंत्रता और गणतांत्रिक व्यवस्था के मूल में भारतीय मनीषियों और चिंतकों का प्राथमिक जोर व्यक्ति की आत्मशक्ति और उसके विकास पर था। निर्मल वर्मा ने एक निबंध में लिखा है—'एक आत्महीन व्यक्ति की स्वतंत्रता उस आहत पक्षी की तरह है, जिसके पंख तो हैं, किंतु वह उड़ नहीं सकता, इसलिए कोई भी सर्वसत्तावादी शक्ति एक बाज की तरह उसे अपने पंजे में दबोच सकती है। मनुष्य की स्वतंत्रता का स्रोत केवल व्यक्ति का आत्म हो सकता है, किंतु ऐसा राजनीतिक दर्शन नहीं जो इस आत्म की समुचित परिभाषा देता हो।'

व्यक्ति की संदिग्ध स्वतंत्रता और राज्यतंत्र की संदिग्ध वैधता इन दो चरणों के बीच झूलते हुए मनुष्य निरंतर झूठे मसीहाओं और आततायी व्यवस्थाओं का शिकार होता रहा है। इसीलिए लोकतांत्रिक व्यवस्था अन्य 'शासन तंत्रों की अपेक्षा अधिक मानवीय, दायित्वपूर्ण और संवेदनशील जान पड़ती है—वह किसी अमूर्त सिद्धांत या आदर्श की मरीचिका के पीछे न भागकर, मनुष्य जैसा है, उसे वैसा स्वीकार करती है, इसलिए किसी भविष्य के यूटोपिया की वेदी पर उसके वर्तमान को बलिदान नहीं करती।'

हिंदी का ललित-निबंध सांस्कृतिक चिंतन के साथ-साथ इतिहास और परंपरा का महत्त्व अपनी केंद्रीय विषयवस्तु में शामिल करता आया है। वह भारतीयता को किसी भौगोलिक सीमा में जातीयता अथवा भाषाओं के सीमित दायरों में नहीं बाँधता।

वह अखंडित भारतीयता की अवधारणा पर बल देता है, जिसका अर्थ है कि हमारी राष्ट्रीयता की मूल आत्मा को हम हमारे वैविध्य में जानकर उसका सांगोपांग विकास करें। इसको जातीयता और धर्मों की सीमा से ऊपर उठकर भाषा और प्रांतों के विभाजन से परे जाकर उसके समग्र स्वरूप में ग्रहण करें, ताकि उसकी शक्ति राष्ट्रशक्ति बनकर उभर सके।

इस वैविध्य में एकता की शक्ति ही हमारे गणतंत्र की सबसे बड़ी पूँजी है। 'देश की पहचान' शीर्षक से लिखे गए एक ललित निबंध में पं. विद्यानिवास मिश्र का यह कथन दृष्टव्य है—

'प्रदेश थे, प्रदेशों की सत्ताएँ थीं, उनकी रंगतें भी थीं, लेकिन सभी प्रदेश एक जगह से रस पाते थे। चाहे संस्कृत भाषा के कारण, कालांतर में प्राकृत के कारण, जिसने आसेतु हिमालय जोड़ा (जो भक्ति आंदोलन का संयोजन सूत्र बनी, नामदेव को जिसने 'शंकरदेव से जोड़ा, उस ब्रज भाषा के कारण चाहे दूसरे पच्चीसों कारण, जिनके बारे में यह पता करना मुश्किल है कि किस प्रांत में जनमे, या चाहे एक गहरे स्तर के सनातन जीवन प्रवाह में आस्था के कारण। कुमारिल भट्ट के ऊपर कौन सी तमिल छाप है? रामानुजाचार्य पर कौन आंध्र की छाप है? चैतन्य महाप्रभु पर कौन बँगला छाप है? गुरु गोविंद सिंह पर कौन सी छाप है। कोई बता सकता है, पंजाब की छाप लगी हुई है उनके ऊपर। ऐसे लोगों पर कोई छाप नहीं देखी जा सकती। कबीर, गुरुनानक देव कोई भी हो, उनके ऊपर कोई छाप नहीं है। सब भूमि गोपाल की।

देश को कुछ लोगों ने छोटा बनाने का काम किया था, किंतु इस छुटपन से मुक्त करने का फिर से काम गांधीजी ने शुरू किया था। गांधीजी का प्रयत्न उसी महान् परंपरा में था, जिसका उल्लेख अभी किया गया है। यह छोटापन जिस व्यवस्था में समाप्त होता है, वह हमारी शुद्ध भारतीय गणतंत्रिक प्रणाली है, जिसका विकास एक सुचिंतित विचार प्रणाली के द्वारा संभव हुआ है। इस चिंतन प्रणाली के विकास में हिंदी के ललित निबंधकारों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है।

भारतीय गणतंत्र के वैचारिक पक्ष पर इनका प्रभाव इस विवेचन से स्पष्ट है। अब हम इस गणराज्यीय व्यवस्था की संवैधानिक स्थिति पर विचार करते हैं। हमारे संविधान की मूल प्रस्तावना में यह घोषणा की गई थी कि 'हम भारत के लोग भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्व संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बंधुता को बढ़ाने के लिए दृढ संकल्प होकर अपनी इस संविधान सभा में आज दिनांक २६.०१.१९४९ ई. (मिति मार्ग 'शीर्ष शुक्ल सप्तमी, संवत् २००६ विक्रमी) को एतद द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।'

इस संकल्प के भीतर समाहित सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक न्याय की पीठिका को हम भारतेंदु युगीन मनीषियों के समस्त वैचारिक निबंधों में प्रमुख स्वर के रूप में प्राप्त कर सकते हैं। इन मनीषियों के राष्ट्रीय चिंतन में विचार स्वतंत्रता और धर्म तथा उपासना के पक्षपात रहित

अधिकार पर बाल मुकुंद गुप्त, बालकृष्ण भट्ट से लेकर प्रेमचंद तक आजादी से पूर्व अपने वैचारिक और ललित निबधों में पर्याप्त विवेचन कर चुके थे, जिसने एक समूह वैचारिक पीठिका तैयार कर दी थी। हमारे संविधान निर्माताओं के सामने यह पीठिका मार्गदर्शक सरणि के रूप में उपलब्ध थी, जिसका समावेश कर एक ऐसा अद्वितीय संविधान हमारे देश को प्राप्त हुआ, जिसमें विश्व के सभी श्रेष्ठ विचारों को अपने भीतर समाहित कर लिया।

हम इस बात पर गर्व कर सकते हैं कि हमारी गणराज्यीय व्यवस्था का निर्माण केवल कानूनी विशेषज्ञों की रचना भर नहीं थी। उसकी पृष्ठभूमि हमारे राष्ट्रीय चिंतकों मनस्वियों एवं साहित्यकारों की उस विचारधारा पर आधारित थी, जो उन्होंने जन-आंदोलन से जुड़कर देश के सुदूर ग्रामों में बसने वाले कृषकों मजदूरों और आम जनता के जनजीवन से अनुप्राणित होकर विकसित की थी। इसलिए इसमें करुणा, न्याय और मानवीयता के पक्ष पर इतना जोर है।

अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि शैली ने एक बार कहा था कि हम साहित्यकार एवं कवि संसार के अमान्यता प्राप्त संविधान निर्माता होते हैं। हम यह भी कह सकते हैं, वास्तव में वैचारिक एवं व्यावहारिक चिंतन के द्वारा जिन नीति-निर्देशों को साहित्यकार विकसित करता है, वह आगे चलकर एक सुदृढ़ व्यवस्था को जन्म देता है। इन साहित्यकारों को किसी ने विधि निर्माता नहीं कहा, पर एक नैतिक वैधानिक पृष्ठभूमि इसके बगैर निर्मित होना संभव भी नहीं है।

सौमित्र नगर, सुभाष स्कूल के पीछे,
खंडवा-४५०००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ०९४२५३४२६६५

बाल-कहानी

कौन था'''

● मनोहर चमोली 'मनु'

गिलहरी उचककर पैरों पर खड़ी हो गई। बुदबुदाई, "साँप, नेवला, खरगोश और मेढक एक साथ हैं! कोई तो वहाँ है।" गिलहरी दबे पांव चलना जानती थी। वह वहाँ जा पहुँची, जहाँ सब थे। वह एक बिल के चारों ओर इकट्ठा थे। सब बिल में झाँक रहे थे। बिल का मुँह बड़ा था। बिल गहरा था। अचानक मेढक आगे बढ़ता हुआ बोला, "मैं जाकर देखता हूँ।" मेढक ने छलाँग लगाई और बिल में जा घुसा। लेकिन यह क्या! वह दूसरे ही पल बिल से बाहर आ गया। हाँफता हुआ बोला, "कोई तो है! वह बिल में आग जलाए बैठा है!"

खरगोश ने हँसते हुए कहा, "आग की लपटें घटती-बढ़ती हैं। जहाँ आग होती है, वहाँ धुआँ भी तो होता है। लेकिन यहाँ धुआँ नहीं है। पीछे हटो। मैं देखता हूँ।" यह कहकर खरगोश बिल में जा घुसा। पर यह क्या! वह दूसरे ही क्षण लौट आया। उसकी लाल आँखें सिकुड़ गईं। वह घबराते हुए बोला, "कोई तो है! उसने सूरज के बच्चे को पकड़ा हुआ है!"

गिलहरी भला क्यों चुप रहती। वह हँसते हुए बोली, "सूरज का बच्चा! सूरज आग का गोला है। वह अकेला है। उसका कोई बच्चा नहीं है। पीछे हटो। मैं देखती हूँ।" यह कहकर गिलहरी बिल में जा घुसी। परंतु वह उलटे पांव लौट आई। उसकी झाड़ू जैसी पूँछ हवा में काँप रही थी। वह बोली, "नागमणि है। नाग भी बिल में ही है।" साँप हँसने लगा। तभी नेवला बोला, "यह बात गलत है। कोई भी साँप मणि नहीं रखता। पीछे हटो। मैं देखता हूँ।" नेवला बिल में घुस गया। तुरंत ही लौट आया। उसके दाँत किटकिटा रहे थे। बोला, "कोई तो है। वह एक आँख वाला है।"

जाने-माने बाल-साहित्यकार। 'हास्य-व्यंग्य कथाएँ', 'उत्तराखंड की लोक-कथाएँ', 'किलकारी', 'यमलोक की यात्रा', 'ऐसे बदला खानपुर', 'बदल गया मालवा', 'बिगड़ी बात बनी', 'खुशी', 'अब बजाओ ताली', 'बोडा की बातें', 'सवाल दस रुपए का' आदि। बाल कहानियाँ मराठी में अनूदित।

चूहा आगे आया। बोला, "एक आँख वाला कोई कहाँ होता है? मैं देखता हूँ। पीछे हटो।" यह सुनकर सब हँसने लगे। बंदर ने मुँह में हाथ रखते हुए कहा, "तुम तो रहने ही दो।" लेकिन चूहा नहीं माना। वह बिल में चला गया। बिल से आवाज आने लगीं, 'सररर। सरसर। खररर। खरखर।' साँप ने कहा, "चूहे की तो वाट लग गई।" तभी नेवले ने कहा, "देखो। चूहे की पूँछ बिल से बाहर आ रही है!" गिलहरी ने जवाब दिया, "नहीं! नहीं! कोई चूहे को बाहर धकेल रहा है।" खरगोश बोला, "नहीं! नहीं! चूहा किसी को खींच कर बाहर ला रहा है।"

चूहा बिल से बाहर आ गया। चूहे के दाँतों में एक डोर थी। डोर से टॉर्च बँधी हुई थी। टॉर्च जल रही थी। "ओह! ये तो टॉर्च है!" सब ने गहरी सांस लेते हुए एक साथ कहा।

गुरु भवन, निकट डिप्टी धारा,
पोस्ट बॉक्स-२३, पौड़ी-२४६००१ (उत्तराखंड)
दूरभाष : ९४१२१५८६८८
chamoli123456789@gmail.com

कविताएँ

• वीणा द्विवेदी

आतंक

तुम्हारी अविराम सफलता
मुझे आतंकित नहीं करती,
वरन् आनंदित करती है।
किंतु आतंकित करता है—
तुम्हारा महामानव हो जाना।
जड़ों से दूर शीर्ष को ही सर्वस्व
समझ लेना।
तुम्हारी अतृप्ति मुझे आतंकित
नहीं करती है, बल्कि
आतंकित करता है
सत्य को भूल असत्य को सत्य मान बैठना
मृगतृष्णा में स्वयं का ही सर्वनाश कर बैठना
अपनी कस्तूरी को अन्यत्र ढूँढ़ना
आतंकित करता है मुझे।
तुम्हारी खुशी मुझे आतंकित नहीं करती;
आतंकित करती है तो झूठी
एवं कुटिल हँसी
मुखौटे के पीछे का बीभत्स चेहरा
तुम्हारे दरबारी मुझे आतंकित करते हैं
आतंकित करते हैं तुम्हारे नुमाइंदे।
जानते हो!
तुम्हारी उपलब्धियों पर आनंदित
होकर मैंने एक फूल का
पौधा रोपा था, जिससे
सबको सौंदर्य एवं सुगंध
से अभीभूत करा सकूँ
किंतु तुम्हारी कृत्रिमता एवं
वीभत्सता से आतंकित हो
मैं पानी देना भूल गई
वह पौधा समय से पहले ही सूख गया।
जानते हो हमने एक भविष्य को खो दिया।
वह भविष्य, जो करुणा और दया का बीज था
वह भविष्य, जो समता एवं न्याय का प्रतिरूप था
वह भविष्य, जो सौंदर्य और सुगंध का पर्याय था
वह भविष्य, जो असंख्य भविष्य का स्रोत
एवं आधार था
जो दे सकता था छाया एवं प्राणवायु
किंतु तुम्हारे आतंक की छाया ने
हमसे हमारा सुखद भविष्य छीन लिया
मुझे सपने आतंकित नहीं करते हैं
मुझे आतंकित करते हैं,
सपनों का मर जाना
हाँ, मुझे वे सब आतंकित करते हैं,
जो तुम्हें आतंकित नहीं करते।

प्रयास

हे समाज के तथाकथित
महानायक युग पुरोधा राष्ट्र निर्माता भाग्य विधाता!
तुमने युग को गतिमान कर
किया है महान् कार्य
एक नई दिशा दी है तुमने
समाज को, किंतु हे युग पुरोधा!
आज के सभ्य एवं आदर्श कहे
जाने वाले समाज का आदर्श
क्या नग्नता, क्रूरता तथा हिंसक
प्रतिकार है?
हे पुरस्कृत एवं सम्मानित राष्ट्रनायक!
क्या युगपुरुष कहलाने के लिए
जोड़-तोड़ एवं हिंसक गतिविधियों में
संलिप्तता आवश्यक है?
हे युग पुरोधा!
यदि यह सत्य है तो उतार फेंको
खोखले आदर्श का लबादा
उजागर कर दो परदे के पीछे की
सच्चाई को
क्यों अपनी आत्मा को दो पाटों
में बाँटकर अंतरात्मा के साथ
अन्याय करते हो। नहीं, परमात्मा
के साथ अन्याय करते हो, जो मूक है।
हे महानायक!
तुम तो समाज के अग्रदूत हो,
तुम मुखर हो,
तुम तो राष्ट्र निर्माता हो
क्या तुम मुझे बता सकने में
सक्षम हो कि तुम्हारे बनाए
हुए राष्ट्र में मेरे लिए
साढ़े तीन हाथ जमीन की भी
कोई व्यवस्था है?
हाँ, सिर्फ साढ़े तीन हाथ
क्योंकि इससे अधिक की
आशा व्यर्थ है
या मुझे करनी होगी याचना
कृष्ण के दाहिने हाथ की? क्योंकि
बाँया तो पहले से ही एलॉट हो
चुका है किसी कर्ण के नाम
और जग जाहिर है मैं कर्ण नहीं हूँ
और हाँ! मैं द्रौपदी भी तो नहीं हूँ
फिर मैं क्या हूँ? कौन हूँ?
मुझे नहीं मालूम
पर हाँ, मुझे इतना अवश्य मालूम है
कि मेरे और तुम्हारे आदर्श
एक से नहीं हैं और तुम!
तुम विपक्ष को सहन नहीं
कर सकते
और कृष्ण? कृष्ण!
विश्वास तो नहीं पर कोशिश
की जा सकती है
एक प्रयास एक विनम्र प्रयास
शायद आखिरी शायद अनंत
किंतु? किंतु याचना नहीं
सिर्फ और सिर्फ एक प्रयास
एक कोशिश
और? कुछ नहीं हाँ!

सुपरिचित लेखिका। साहित्य अमृत, काशी प्रतिमान आदि पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। आकाशवाणी गोरखपुर, आकाशवाणी वाराणसी से प्रसारित।

मु.-सदापुर महुआ (निकट-महावीर मंदिर),
पो.-सदापुर महुआ,
जिला-वैशाली-८४४१२२ (बिहार)
दूरभाष : ८२९२४८८९९१
veenadwivedi10@gmail.com

कहानी

सौंदर्यमेव सर्वम

● संगीता गुप्ता

पुष्पलताजी में सुंदर वस्तुओं की गजब की समझ थी। वे रिश्तेदारों और पड़ोस की बहुओं के नख-शिख का वर्णन इस प्रकार करती कि लगता है, यदि आज के समय में मलिक मोहम्मद जायसी भी होता तो पद्मावती के वर्णन में स्वयं को फीका ही मानता, पर उन्होंने कभी नहीं सोचा था कि इस तरह से यदि उनके नख-शिख का वर्णन कोई करता तो वह किस तरह का होता। संसार में इज्जत देने वाली प्रत्येक वस्तु से उन्हें प्राणपण से लगाव था, अत: वे उसे पूरी आस्था के साथ ईश्वर से माँगती। उनको लगता था, सुरूप वाला व्यक्ति ही मान से जी सकता है, अत: अपने प्रति जो आत्माभिमान होना चाहिए, उससे वे दूर ही रहीं। कई बार एकांत में जब भगवान् के आगे खड़ी होती तो आँखों में आँसू भर-भर पड़ते थे। पल्लू से आँसू पोंछते हुए यही कहतीं कि जब ऊपर आऊँगी तो आपसे पूछूँगी कि यह काली छतरी सा रंग क्या मुझे ही देना था। बहुत सारा दहेज देकर पिता ने बेटी को विदा किया तो अनहोनी की आशंका से सिहर उठे थे। पर भगवान् ने उनके पिता का मान रख लिया। दूल्हे राजा इस घोर सांसारिकता के युग में भी 'धन और तन की अंतिम गति माटी ही है' वाले विचारों के धनी थे, अत: उन्हें अपनी पत्नी के साँवला होने का तनिक भी मलाल न हुआ। पुष्पलताजी ने भी संपूर्ण प्रेम अपनी ननद और देवर पर वार दिया। ननद-देवर ने भी सदा उन्हें पूरा मान दिया। उन्होंने इस अपने बच्चों तक सीमित कर देने वाले युग में भी पूरी जिम्मेदारियाँ निभाई थीं।

ईश्वर भक्त घनघोर घटा सी पुष्पलताजी ने प्रण किया था, मेहनत कर-करके मान पैदा करेंगी। वे प्रात:काल मुँह अँधेरे उठ जातीं और महानगर के प्रसिद्ध शिव मंदिर तक पैदल जातीं, फिर अभिषेक करतीं। अभिषेक के बाद शिवजी पर चढ़े दूध को भगोनी में भर लेती और निकट ही रहने वाले सब्जी बेचने वाले परिवार को दे आतीं। यह उनका अंधविश्वास ही था कि यदि दूध जैसी श्वेत त्वचा चाहिए तो श्वेत वस्तु का ही दान करना चाहिए और वह भी श्वेत वर्ण की कन्या को···और उस परिवार में एक नहीं, तीन कन्याएँ थीं, वे भी गौर वर्ण की, अत: उन्होंने पंडितजी को छोड़कर इस परिवार को दूध देने का निर्णय लिया था। उनका शिव मंदिर जाने का क्रम वर्षों से अनवरत जारी रहा था। माँग एक ही थी कि अगले जन्म में मांसल त्वचा और दूध सा श्वेत रंग मिले।

रोहित विवाह योग्य था ही और इन्हीं दिनों में एक दिन उनकी गुड्डी हाथ मटकाती हुई आई और बोली, "हाय भाभी, क्या लड़की है···बगल से निकले तो लगे कोई देवी निकल रही है।"

आलेख, व्यंग्य, बाल कविता, गीत व कहानी सहित लगभग ३५ रचनाएँ विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। आकाशवाणी ग्वालियर से कहानी का प्रसारण व दूरदर्शन से गीतों का प्रसारण। मैथिलीशरण गुप्त सम्मान सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित।

वे बोलीं, "देवी··· ?"

"हाँ···तो फिल्मी हीरोइनों से तुलना करें अपनी होने वाली बहू की ?···सबकी सब चरित्रहीन पैसे के लिए उतार-चढ़ाव बेचने वाली।"

"हाँ गुड्डी, कान पकड़ती हूँ, भूल हुई, कह तो सही रही हो। हे आग लगें इन हीरोइनों को···तुम तो फोटो दिखाओ।" पुष्पलताजी रोटी बनाते में से ही हाथ धोकर चली आईं। उनकी ननद ने झट से चलभाष पर फेसबुक खोली और दिखा दी।

"पर पैसा नहीं है अगले के पास··· ?" गुड्डी ने त्यौरियाँ चढ़ाईं।

"ठीक है, अपना रोहित क्या कम कमाता है, जो हम भिखारी की तरह माँगें ?" उन्होंने सीख दी।

इस तरह दो माह के भीतर रोहित का विवाह हो गया। जब सुकन्या चावल फेंकने आई, तब ही उनकी देवरानी ने कहा, "पूरी कॉलोनी में रोशनी भर देगी हमारी बहू।"

तभी पुष्पलता ने फुसफुसाहट सुनी, "कैसा कोयला सा लड़का चुन लिया इस लड़की ने ?"

यह सुनकर पुष्पलताजी के मन की खुशी जाती रही।

यह कोई नई बात तो थी नहीं सुकन्या को तो प्रत्येक लड़की की तरह होश सँभालते ही आभास हो गया था कि वह बहुत सुंदर है। पर वह प्यासे कुएँ की तरह सुंदरता के लिए उसका पागलपन करेला—नीम चढ़ा था। लंबी, धवल और चंद्राकार मुख वाली सुकन्या ने ऊँचे पद, धन और धवल कन्याओं को ही अपने पास आने दिया था। वह मानती थी कि किसी भी प्रकार के असौंदर्य को आँखों के सामने रखना अर्थात् ऊँची सीढ़ी से निचली सीढ़ी पर आना। कहते हैं, मनुष्य जहाँ चाहे वहाँ स्वर्ग बना सकता है। स्वर्ग बनाने का यह उसका अपना तरीका था कि असौंदर्य को आँखों के सामने ही न आने दिया जाए। फिर उसने सुन रखा था कि बड़े-बड़े लोगों की बहुएँ शहर की गंदी गलियों को देखे बिना ही संपूर्ण जीवन व्यतीत कर देती हैं और बस चारों ओर सुंदरता को ही देखती हैं। उसने उन्हें ही अपनी आदर्श महिलाएँ बनाया था। इस तरह सुकन्या ने

गौतम बुद्ध की तरह दुख, जरा और व्याधि को देखा ही न था। नीचे देखने से उसे भय लगता था कि यदि नीचे वालों को देखा और उनके दुख बाँट लिए तो ऊँचे पद-धन पाने के लक्ष्यों से वह पीछे हट जाएगी। हालाँकि कई लोग इसे घमंड कहते हैं तो कहते रहें, सुकन्या किसी की परवाह नहीं करती थी। यह बात सभी पर समान रूप से लागू होती थी, चाहे वह उसकी सास पुष्पलता ही क्यों न हो, अत: सास के पास बैठते ही वह कोई-न-कोई काम बता देती। जब भी गुड्डी यह देखती तो ताव से भर जाती, पर मन को दबा देती कि कहीं रोहित ने कहने लगे कि बुआ घर में कलह फैला जाती हैं।

अभी आठ माह ही बीते कि एक सर्द दोपहर में दोनों लान में बैठी थीं। गुड्डी उनकी बेटी से कम न थी। वह टोह लेने के लिए हँसने लगी, "और भाभी अब बहू के हाथ की गरम-गरम खा रही होंगी।"

वे स्वेटर बुनते-बुनते तुरंत अपनी छुटकी के मन की बुनाई समझ गईं और मुसकरा उठीं, "बता गुड्डी, काम करने से रक्त का संचरण अच्छे से होता है कि नहीं?"

"होता तो है।"

"और मैं अभी बूढ़ी थोड़ी हुई हूँ। हँसते-हँसते उस जैसे चार को बिठाकर रोटी खिला दूँ। जितना उसका मन हो, काम करे, हम कुछ नहीं कहेंगे। पास बैठकर बात करे या न करे, हमें कोई अंतर नहीं पड़ता।" इस तरह उन्होंने गुड्डी को रिश्ते की नई बुनाई समझाई।

"भाभी पड़ोस की बहुओं के तो बहुत मीन-मेख निकाले हैं हम लोगों ने? अपना वक्त आया तो बदल जाएँ, हम हवा का झोंका हैं क्या?" उसने पुष्पलताजी को चाय दी।

"अब तो सब बंद कर दिया न···।" उन्होंने गोले को ढील दी।

"अब उर्मिला भाभी तो टोकती ही होंगी, तुमने भी तो बहुत कमियाँ निकाली हैं उनकी बहू की।"

"कुछ बातें स्वयं पर बीतती हैं, तभी समझ आती हैं, क्या करें।" उन्होंने मठरी मुँह में रखी।

"पर भाभी, रिश्तेदारों का भी मान नहीं करेंगी क्या? क्या बड़ों के पाँव भी नहीं छुएगी?" गुड्डी का मन कसैला हो गया।

"मर्जी है उसकी। अब तो किसी की भी बहू पाँव नहीं छूती।" उन्होंने फिर चाय की चुस्की ली।

"कहीं जाते समय पूछती है कि नहीं?" गुड्डी व्यग्र हो गई।

"अरे छोड़ो बिन्नू, न पूछे। खूब सहेलियों के साथ घूमने जाए, क्या अंतर पड़ता है।" उन्होंने सलाई बदली।

"भाभी, आप ही बदल गई, तब हम भी बदल जाते हैं, जिसमें आप प्रसन्न उसमें ही हम भी प्रसन्न हैं।" दोनों मन ही मन नए सलीके गढ़ने लगी।

एक प्रकार से सुकन्या को मायके से भी अधिक ससुराल में प्रेम मिल रहा था। पर यह तो उसका अधिकार ही था, क्योंकि वह सास के लिए आदर्श नायिका थी, चाहे फिर वह केवल देखने में ही हो। वे पुत्र और पति से पीठ पीछे भी कुछ न कहती। इस प्रकार पुष्पलताजी नयनसुख में ही मन का सुख ले रही थीं और माँ से अच्छी सास पाकर सुकन्या के दिन भी अच्छे से बीत रहे थे।

दिन बीतते-बीतते चार वर्ष हो गए, फिर धीरे-धीरे पुष्पलताजी का शरीर जवाब देने लगा। अब प्रात: काल उनसे उठा न जाता था, सो पानी कौन भरे। अब उन्होंने छत पर दो बड़ी-बड़ी टंकियाँ रखवा दी थीं और पीने के लिए फिल्टर लगवाकर पानी भरने का रट्टा ही समाप्त कर दिया था। बहू के नन्ही हुई तो उन्होंने आगे-पीछे घूम-घूमकर बहू की सेवा में कोई गुंजाइश न छोड़ी।

लगभग सभी घरों में पुरुष जन तो कैसी भी बहुएँ हों, वे उनके अनुरूप ढल ही जाते हैं। प्रत्येक लड़की को बस एक सास का ही भय लगा रहता है, जिसके कारण बहू सबका मान करती है और अपने मायके वालों से करवाती भी है। यह भय बिठाना भी सही है, क्योंकि भय तो माता-पिता को भी बालक में बिठाना ही पड़ता है तभी तो बालक माता-पिता का आज्ञा पालन करता है, मान करता है और बड़ा होकर करवाता भी है। पर यहाँ भय बिठाया ही नहीं गया था, बस सेवा की गई थी एक देवी की तरह···अत: धीरे-धीरे सुकन्या उच्छृंखल हो गई। इस अनकहे को रोहित के साले-सालियों ने भी शीघ्र ही समझ लिया। अब पुष्पलताजी नित्य ही आने वाले सुकन्या के भाई-बहनों और मम्मी के लिए भी काम वाली बाई की तरह हो गईं। इस प्रकार समधिन वाला मान भी उनको मजबूरी वश त्यागना ही पड़ा।

एक बार वे बीमार हुईं तो बिस्तर से उठ न पाईं। उन्हें होश नहीं था कि वे कहाँ हैं। किसी तरह मन पक्का करके उन्होंने सुबह खाना बना दिया और दिखा दिखाकर चिल्ला-चिल्लाकर कहा कि मुझे बुखार है। तब भी बहू कमरे से बाहर न आई, तब उनकी आँखों से आँसू ही निकल आए। वे बुदबुदाईं—हे ईश्वर मुझे स्वयं में मिला लो।

पता नहीं कहाँ से उनके पति ने सुन लिया और वे उन्हें लिटाकर और चाय पिलाकर कार्यालय चले गए।

उस बुखार में तीन दिन घर में खाना नहीं बना और सुबह का नाश्ता तथा दोनों समय का भोजन होटल से आया, तीन हजार रुपए का बिल बना। जब पुष्पलताजी ठीक हुईं तो भयंकर दुख में डूब गईं और विचारने लगीं कि क्या त्वचा को महत्त्व देना सही था? पर अब तो सोचना भी मूर्खता था। अत: एक नियम मन-ही-मन बनाया कि अंतिम समय तक सबके काम के साथ बहू की भी सेवा करना है। दो-चार वर्ष में ही धीरे-धीरे कार्य की अति होने से उनका शरीर सूखे बेर की तरह दिखने लगा।

चार वर्षों बाद उनके पति हृदयाघात से चले गए। पिता के जाने के बाद रोहित सुकन्या के विचारानुरूप कार्य करने लगा। अंतिम समय में वे महीनों बीमार रही। अब दोनों पति-पत्नी उन्हें बुरी तरह सुनाते और कभी मिलने न आते। वे एक कमरे में ही रहतीं, वहाँ से निकलने पर उन्हें खूब डाँटा जाता। अंत समय में मल-मूत्र भी बिस्तर पर छूटने लगे। वे बेटे-बहू के सामने हाथ जोड़े बैठी रहती और क्षमा माँगती रहतीं। इसी तरह कई बदबूदार महीने बीत गए और क्षमा माँगते-माँगते ही वे इस मायावी संसार से विदा हो गईं। कहीं वे उस परम तत्त्व से तो क्षमा नहीं माँग रही थीं कि काया तो मिट्टी का ही बदला हुआ स्वरूप है, जो मिट्टी में मिलना है फिर मिट्टी-काली हो या श्वेत, कोई अंतर ईश्वर नहीं करता और उन्होंने उस ईश्वरीय नियम को तोड़ा था, अत: वे क्षमाप्रार्थी हैं।

साअ

फालके बाजार लश्कर,
ग्वालियर-४७४००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ८३५८०८०९४७

संकटों के बीच

मूल : **चार्ल्स बर्नस्टीन**
अनुवाद : **बालकृष्ण काबरा 'एतेश'**

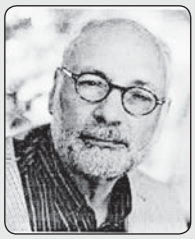

अमेरिकी कवि, निबंधकार एवं संपादक। पेनसिल्वेनिया विश्वविद्यालय के अंग्रेजी विभाग में प्रोफेसर। वर्ष २००६ में अमेरिकन एकेडमी ऑफ आर्ट्स ऐंड साइंसेज के फेलो चुने गए। वर्ष २०१९ में 'नीयर/मिस' के प्रकाशन पर येल विश्विद्यालय द्वारा 'बोलिंगन पुरस्कार'। २०१० में 'ऑल द व्हिस्की इन हैवन' एवं २०१२ में 'साल्ट कम्पेनियन तो चार्ल्स बर्नस्टीन' का प्रकाशन। यहाँ इनकी दो अमेरिकन कविताओं का हिंदी रूपांतर प्रस्तुत कर रहे हैं।

यह कविता...
(*धन्यवाद कहने के लिए धन्यवाद से*)

यह पूर्णत:
सरल कविता है।
इस कविता में
ऐसा कुछ नहीं
कि किसी भी तरह
यह समझ में
न आए।
सभी शब्द
सरल और
प्रासंगिक हैं।
कोई नई
अवधारणा नहीं,
न ही कोई सिद्धांत
न ही भ्रमित करने वाला
कोई विचार।
इस कविता में कोई
बौद्धिक दावा नहीं।
यह पूर्णत:
भावप्रधान है।
यह पूरी तरह लेखक की
भावनाओं को,
मेरी भावनाओं को
अभिव्यक्त करती है,
मैं वह व्यक्ति
जो तुमसे
अभी बात कर रहा है।
यह सब
संप्रेषण के बारे में है
हृदय से हृदय तक
यह कविता
पाठक के रूप में
आपको मान देती है और
आपकी सराहना करती है
यह कठिनाइयों और
संकटों के बीच
मानव कल्पना की
विजय का उत्सव मनाती है।
इस कविता में ९० पंक्तियाँ
३१४ शब्द और जितना समय
मेरे पास गिनने को
उससे अधिक शब्दांश हैं।
हर पंक्ति, शब्द
और शब्दांश को
चुना गया है
केवल चाहे गए अर्थ को
व्यक्त करने और
इसके अलावा कुछ नहीं।
यह कविता करती है परिहार
गूढ़ता और दुर्बोधता का।
सैकड़ों पाठक पढ़ेंगे
इस कविता को,
हर पाठक
एक समान रूप से और
इससे उन्हें एक समान
संदेश ही मिलेगा।
यह कविता, सभी अच्छी
कविताओं की तरह
कहती है एक कहानी
सीधी शैली में और
पाठक को
नहीं लगाना पड़ता है
कभी भी कोई अनुमान।
जबकि कभी-कभी

अभिव्यक्त करते हुए
कटुता, क्रोध
आक्रोश, विदेशी द्वेष
और नस्लवाद के अर्थ,
इसका मुख्य भाव
सकारात्मक होता है।
यह जीवन के
उन द्वेषपूर्ण क्षणों में भी
आनंद उठाती है जो यह
आपके साथ साझा करती है।
काव्य के प्रति यह कविता
उम्मीद दरशाती है
यह दर्शकों को
अपनी पीठ नहीं दिखाती
यह नहीं सोचती कि
यह पाठक से बेहतर है,
यह काव्य के लिए
प्रतिबद्ध है लोकप्रिय रूप में,
पतंग उड़ाने और
मछली पकड़ने की तरह।
यह कविता किसी सिद्धांत
या धर्म-सिद्धांत की नहीं है।
यह किसी रीति का
अनुसरण नहीं करती।
यह कहती है वही
जो इसे कहना है।
यह वास्तविक है।

के बिना···

(हाई टाइड एट रेस पॉइंट से)

संवाद के बिना व्यवहार
रेत के बिना समुद्र तट
प्रेम के बिना प्रेमी
आकार के बिना सतह
हाथ के बिना स्पर्श
कारण के बिना विरोध
तल के बिना कुआँ
घाव के बिना डंक
मुँह के बिना चीख
लड़ाई के बिना मुट्ठी

सुपरिचित लेखक एवं कवि और अनुवादक। अद्यतन कविता संग्रह 'छिपेगा कुछ नहीं यहाँ'। विश्व काव्यों के अनुवादों का संग्रह 'स्वतंत्रता जैसे शब्द' प्रकाशित एवं दूसरा संग्रह 'जब उतरेगी साँझ शांतिमय' प्रकाशनाधीन।

घंटे के बिना दिन
बेंचों के बिना पार्क
शब्दों के बिना कविता
आवाज के बिना गायक
मेमोरी के बिना कंप्यूटर
समुद्र-तट के बिना तंबू
सड़क के बिना हिचकोले
हानि के बिना पछतावा

उद्देश्य के बिना लक्ष्य
कथानक के बिना कहानी
नाव के बिना पाल
पंखों के बिना विमान
स्याही के बिना पेन
शिकार के बिना हिंसा
पापी के बिना पाप
शर्तों के बिना समझौता
स्वाद के बिना मसाला
हिलने के बिना अंग-संचालन
दृश्य के बिना दर्शक
वक्र के बिना ढलान
इच्छा के बिना ललक
माप के बिना मात्रा
यहूदी के बिना नाजी
हँसी के बिना हास्य
उम्मीद के बिना वादा
सांत्वनादाता के बिना सांत्वना
निश्चित होने के बिना निश्चितता
चुराने के बिना चोरी
था के बिना हुआ होगा
ईश्वराज्ञा के बिना मूसा-संहिता
एक के बिना दो
रेशम के बिना रेशमी
आवश्यकता के बिना अनिवार्य
तर्क के बिना निष्कर्ष
परिवर्तन के बिना गति
गहराई के बिना घाटी
गंध के बिना धुआँ
लक्ष्य के बिना दृढ़निश्चय
लसीलेपन के बिना जेल
बीमारी के बिना इलाज
लक्षण के बिना बीमार
आकृति के बिना खनिज
विस्तार के बिना लकीर
इरादे के बिना दृढ़ता
रिक्तता के बिना रिक्त
विभाजन के बिना सीमा
डोरियों के बिना कठपुतली
नियम के बिना अनुपालन
आशा के बिना निराशा
रंगत के बिना रंग
विषय के बिना विचार
और अंत के बिना दुख।

११, सूर्या अपार्टमेंट, रिंग रोड,
राणाप्रताप नगर, नागपुर-४४००२२ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ९४२२८११६७१
balkrishna.kabra2@gmail.com

हिंदी भाषा और शहरी लहजा

• मिस्बाह अ. हमीद पुनेकर

भाषा मनुष्य का भाव साधन रूप है। वह मनुष्य का आईना होती है। भाषा वह इकाई है, जिसका संबंध मानव जाति से है। भाषा के बनने में बोली सहायक होती है और सबसे मुख्य है कि बोली और भाषा में अंतर समझना।

बोली भाषा की छोटी इकाई है। इसका संबंध ग्राम या मंडल से होता है। किसी सीमित क्षेत्र की उपभाषा को बोली कहते है। भाषा व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध होती है। पाश्चात्य विचारक ब्लूमफील्ड के अनुसार— "आई हैव नन (I have none)' यह भाषा का रूप है और "आ हाए नेन' तो यह बोली है। इस उदाहरण में व्याकरण और शब्द भंडार एक ही है, भेद केवल शब्दों के उच्चारण में है। व्यक्ति जीवन की विभिन्न आवश्यकताओं में अपनी बोली में चाहे जितने परिवर्तन करे, जिस समाज में वह रहता है उसमें उसकी बोली समझी जाती है। ठीक उसी तरह शहरी लहजे में वही अंतर है। भाषा उचित उच्चारण एवं व्याकरण की पूर्णताओं से भरपूर होती है। हिंदी भाषायी वाक्य पद्धति कर्ता + कर्म + क्रिया है, जैसे 'राम ने फल खाया।' परंतु लहजे में मनुष्य कर्म + कर्ता + क्रिया इस तरह भी रख सकता है, अर्थात् 'फल राम ने खाया।' यह व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध है। भाषा के विकास में स्थान विशेषोच्चारण भाषा के सौंदर्य का साथी होता है।

हमारे सोलापुर शहर में विविध बोलियों का प्रयोग किया जाता है, जिसका प्रभाव हिंदी भाषा पर पड़ा है। व्यक्ति अपनी भावनाओं को जिस लहजे में प्रकट करता है वह व्यक्तिविशेष भाषा का रूप बन जाता है। शुद्ध भाषा और शहरी लहजे में अंतर क्या है? इसका अध्ययन हमें इस अनुसंधान में मिलेगा।

भाषा का संबंध मनुष्य से है और मनुष्य का समाज से, परिवार से, पडोस से, पडोस के परिवेश से है। मनुष्य उसी लहजे को अपनाता है जो उसे सरल लगता है। अगर कोई शब्द उसके लिए कठिन लगता है तो वह अन्य भाषा से उसके लिए समान शब्द लेता है। जैसे 'लोह पट्टी युक्त अग्नि रथ-पथ विश्राम धाम।' इसका प्रयोग न करते हुए वह अंग्रेजी शब्द स्टेशन का प्रयोग करता है। इसका एक कारण है कि भाषा कठिनाई से

नवोदित लेखिका। एम.ए, भाग-२ (हिंदी स्नातकोत्तर विभाग)। अनेक लेख पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित। वालचंद कॉलेज ऑफ आर्टस ऐंड साइंस, सोलापुर।

सरलता की ओर जाती है। एक ही स्थान पर कार्य करनेवाले लोग एक भाषायी नहीं होते हैं। सोलापुर तो बहुभाषी शहर है। जिसके कारण सभी भाषाएँ एक-दूसरे में मिश्रित हो जाती है और व्यक्तिविशेष का लहजा निर्माण हो जाता है, परंतु हिंदी ऐसी भाषा है, जिससे सभी परिचित होते है, इसलिए हर कोई अपने लहजे में कहता है। यह जनसंपर्क की भाषा है और हमारे लिए आवश्यक है कि जिस हिंदी का प्रसार हो रहा है, वह किस प्रकार है? वहाँ का लहजा किस प्रकार का है?

सोलापुर शहर के नाम में ही भाषा विज्ञान का अध्ययन छिपा है। सोलापुर दो शब्दों से मिलकर बना है 'सोला और पुर'। 'सोला अर्थात् सोलह, पुर अर्थात् गाँव।' 'सोलह गाँव' इस तरह माना जाता था। परंतु एक संशोधन से ज्ञात होता है कि यह मुसलिम शासनकाल में 'सोनलपुर' था और समय के साथ 'न' वर्ण लुप्त हो गया और 'सोलापुर' बन गया। इतना ही नही 'स' और 'श' वर्ण उच्चारण भेद को लेकर यह 'शोलापुर' बना था। जिसका अर्थ अत्यंत गुस्सेवाले लोगों का गाँव माना जाने लगा। बाद में ब्रिटिश शासन काल में 'सोलापुर' रह गया। इससे हमें यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि मनुष्य हमेशा शब्दों को तोड़-मरोड़कर प्रयोग करता है। समाज जिस भावना के लिए शब्द कहता है, वह शब्द प्रचलित हो जाता है। मनुष्य भाषा का अर्जन समाज से करता है।

सोलापुर की जनसंख्या २०११ के अनुसार १२,५०००० है। शहरी लोकसंख्या ३२.४ प्रतिशत है। यह ऐसा शहर है, जिससे कर्नाटक राज्य की सीमा मिलती है। जिसके कारण यहाँ की बोलियों पर उनका प्रभाव दिखाई देता है। एक स्थान पर कहे जानेवाले शब्द दूसरे स्थान पर कहे जाते है तो वहाँ अर्थ भिन्न होता है। उदाहरण 'मौज' यह शब्द कर्नाटक

(कलबुर्गी) में 'केले' के लिए प्रयोग होता है, परंतु यहाँ 'मौजे' जुराब (socks) के अर्थ में प्रयोग होता है। सोलापुर महाराष्ट्र में स्थित होने के कारण यहाँ की मुख्य मातृभाषा मराठी है। यहाँ पर मराठी, हिंदी, कन्नड, तेलगु अधिक बोली जानेवाली भाषाएँ हैं। जिनके उपभाषाओं के रूप में निम्नलिखित बोलियाँ बोली जाती हैं—कैकाडी, पारधी, गोरमाटी, राजस्थानी, मारवाडी, वडारी आदि। इस शहर में अनेक धर्म के माननेवाले लोग बसते हैं, जिसका प्रभाव हिंदी भाषा पर पड़ा। हिंदू धर्म के अंतर्गत ब्राह्मण, लिंगायत, मराठा, विरशैव, चमार, ढोर, मतांग, लमाण आदि। इनके अतिरिक्त बौद्ध, जैन, ईसाई और मुसलिम है। इन सबसे होकर हिंदी भाषा का लहजा आता है। सोलापुरवासियों की विशेषता है कि वह संयुक्ताक्षर का प्रयोग अधिक करते है। शब्दों का उच्चारण खींचकर करते हैं या झट से। दीर्घ स्वर को ह्रस्व स्वर और ह्रस्व को दीर्घ स्वर कर देते हैं। जैसे **कैसा** शब्द का उच्चारण **कइसा** और **कहाँ** का उच्चारण **कां** इस प्रकार करते है। इसके अतिरिक्त कई वर्णों का उच्चारण इनके लहजे में है, जैसे च, कू, इ, सो, कते, शी आदि। इनका प्रयोग वह शब्द के अंत में करते हैं।

सोलापुरी लहजे की विशेषता है कि वह **बे** के बिना पूर्ण नहीं होता है। सोलापुरी होने की मुख्य पहचान है। हिंदी भाषा उच्चारण के समय मराठी लहजा भी इसमें आ जाता है। जैसे होनाच, करनाच आदि। इसके अतिरिक्त हिंदी और मराठी में कुछ ऐसे शब्द है जो एक से है, परंतु अर्थ की दृष्टि से भिन्न है। जैसे 'चेष्टा' शब्द। हिंदी में **प्रयास** और मराठी में **मजाक** का अर्थ है। अगर गलती से गलत अर्थ ग्रहण किया जाए तो अर्थ का अनर्थ हो जाएगा। कन्नड भाषा में अ, उ, ऊ ध्वनियों का अधिक प्रयोग होता है, जिसका प्रभाव हिंदी लहजे पर पड़ा। जैसे **किसलिए** पूछने के लिए **कायकू** शब्द का प्रयोग हुआ। इससे यह स्पष्ट होता है कि कन्नड़ भाषा का प्रभाव हिंदी पर पड़ा। तेलुगु भाषायी लोग **ह** वर्ण का उच्चारण **अ** से ही करते है, जैसे **हमेशा** को **अमेशा**। झट से उच्चारित करते हैं। इन सभी भाषाओं का मिश्रण हिंदी लहजे में हमें मिलता है।

कहा जाता है कि 'दस कोस पर पानी बदले, बीस कोस पर बानी (वाणी)।' परंतु सोलापुर में हर घर, हर गली लहजा बदल जाता है। निम्नलिखित कुछ शब्द है जिनका प्रयोग सोलापुरी लहजे में इस प्रकार होता है। जैसे उसे-उशे, नही-नकको, स्टेशन-टेशन, गली-गल्ली/ बोल, शरारती बच्चा-औचारी, कारण प्राप्ति के लिए-कि/ क्यकू, स्कूल-साल, भोजन होने के संदर्भ में—टाकन हुआ क्या? आदि। ऐसे कई शब्द है, जिनका प्रयोग केवल सोलापुर में ही होता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि 'लहजे पर स्थानीय उच्चारण का प्रभाव पडता है।' सोलापुर के गली-कूचों में अगर महिलाओं के हिंदी लहजे को देखा जाए तो उनके लहजे में **गे** ध्वनि का समावेश है। जैसा की मराठी में काय ग? इस प्रकार है उसी तरह **क्या गे**, आगे का प्रयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त बच्चों के लहजे की बात की जाए तो वह इस प्रकार है—**मइ भागते-भागते गया धपकन पड्या**। वह व्याकरण की दृष्टि से नहीं बोलेगा। बच्चों के संदर्भ में देखें तो वह कभी शुद्ध भाषा नहीं बोलते।

अगर भाषा की समृद्धि और सभ्यता का विकास देखना है तो वह निम्न तीन स्त्रोतों से देख सकते हैं—मुहावरे, कहावतें और लोकोक्तियाँ। मुहावरे मुलत: अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ है बातचीत या उतर देना। मुहावरे भाषा को सुदृढ़, गतिशील और रुचिकर बनाते हैं। कहावतें आम बोलचाल में प्रयोग होनेवाले उस वाक्यांश को कहते है, जिसका संबंध पौराणिक कहानी से जुड़ा होता है या जीवन के दीर्घकाल के अनुभव को वाक्य द्वारा कहना। और अंत में लोकोक्ति लोगों के मुँहचढ़े वाक्य लोकोक्ति के तौर पर जाने जाते हैं।

सोलापुर शहर में हिंदी भाषा का सौंदर्य इन मुहावरो, कहावतों और लोकोक्तियों से है। जिसका अर्थ केवल सोलापुरी ही लगा सकता है। अन्य शहर का व्यक्ति अर्थ जानकर आश्चर्य में पड़ जाएगा। वह इस प्रकार है—

मुहावरे

क्र. सं.	मुहावरे	अर्थ
1	दीवार पडना	विवाह समारोह में भोजन खत्म होना।
2	झाड़ी करना	ताक-झाँक करना/ छिपकर देखना
3	देढ शहना	अल्प ज्ञान रखनेवाला व्यक्ति।
4	मट्टी डालो	किसी बात को भूलने के लिए।
5	उड़ जाना	किसी की मृत्यु होने पर।

कहावतें

क्र. सं.	कहावतें	अर्थ
1	मोर का नाच मुर्गी क्या जाने।	किसी का अनुकरण करने के बाद भी उसके जैसी प्रतिभा न आना।
2	जा बेटा काम कू क्या खाएगा शाम कू।	वृद्ध लोगों का युवाओं के रोजगार के संदर्भ में कहना।
3	बंदर के हाथ नारियल।	अज्ञानी मनुष्य के लिए
4	देखकर आ बोले तो भौंककर आया।	कोई संकट लाने पर।
5	जैसा बाप वैसा बेटा।	बाप बेटे की समानता।
6	बंद मुट्ठी लाख की खोले तो खाक की	भ्रम टूट जाने पर।

लोकोक्तियाँ

क्र. सं.	लोकोक्तियाँ	अर्थ
1	चमचा	किसी की हाँ जी करना।
2	स्टेशन	अधिक बातें करनेवाला व्यक्ति जब दूर से दिखाई देता है तो इस शब्द का प्रयोग होता है।
3	अवलीपीर	अत्यंत शरारती बच्चे को कहा जाता है।

4	छिपकली	छिपकर बातें सुननेवाली महिला।
5	चिल्लर	मनुष्य जब व्यर्थ बातें करता है तो उसकी बातों को चिल्लर बातें कहना।
6	औकाली	शरारती बच्चे को।

ऐसे कई कहावतें, मुहावरे व लोकोक्तियाँ हैं, जो स्थानीय हैं, जिनका साहित्यिक हिंदी से कुछ लेना-देना नहीं है। यह दैनिक जीवन में आमतौर से प्रयोग होते हैं। जो मुख से निकल ही जाते हैं। "दैनिक जीवन की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए प्रयोग में आते है।''

अगर हम शिक्षित वर्ग के हिंदी लहजे को देखें तो वह हिंगलिश है। जिसके अंतर्गत चार शब्द हिंदी के हैं तो दो अंग्रेजी के शब्द होते हैं। इसका प्रमाण हमें शैक्षणिक स्थलों, अपार्टमेंटों, सोसाइटियों आदि पर देखने को मिलता है। आधुनिकता के कारण लोगों की हिंदी भाषा पर भी प्रभाव पड़ा है। सोशल मीडिया साइटस फेसबुक, इंस्टाग्राम, ट्विटर आदि से इसका अनुकरण किया जाता है, जैसे done यार, chill मार, cool यार, sorry, please, thanks, hi आदि। ऐसे कई शब्द जो हिंदी लहजे में प्रयोग होते हैं। हिंदी भाषायी लहजे में उर्दू शब्द भी पीछे नहीं है। "हिंदी और उर्दू आपस में मिलती-झुलती भाषाएँ हैं। हिंदी-उर्दू एक ही जाति की भाषाएँ हैं।" इसलिए इनकी बुनियादी एकता को कभी भूलना नहीं चाहिए। उर्दू शब्दों के बिना हिंदी फिल्मों के गीत तथा फिल्म पूर्ण हो ही नहीं सकते। इन्हीं से मनुष्य शब्द ग्रहण करके अपने लहजे में लाता है। अगर आम तौर से देखा जाए तो निम्नलिखित कारण लहजा बनने में योगदान देते हैं—

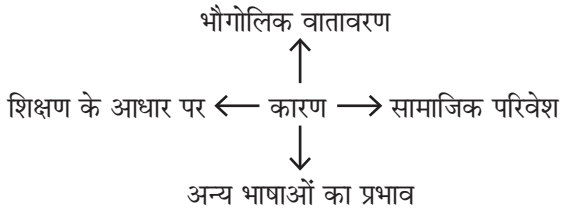

लहजा बनने के मुख्य कारणों में से एक भौगोलिक वातावरण है। सोलापुर के सुखे वातावरण के कारण यहाँ के उच्चारण पर प्रभाव पड़ा है। सोलापुर मैदानी भाग है और मैदानी भागों में भाषा का विकास शीघ्रता से होता है और इन इलाकों में दूर-दूर तक संपर्क बनाया जा सकता है। यही कारण है कि सोलापुर में कई बोलियाँ बोली जाती है। शैक्षणिक स्तर के भेद या धर्म भी लहजा बनने के कारणों में से एक है। लहजे के बनने में परिवार भी मुख्य होता है। इसके अतिरिक्त शारीरिक भिन्नता या शब्द उच्चारण करने में दिक्कत हो तो वह भी एक कारण है। जैसे स, श, वर्ण या न, ण आदि। वक्ता का कहना और श्रोता का गलत ग्रहण करने से वह शब्द समाज में आमतौर से प्रचलित होने लगते हैं। जैसे इक्कीस को एक्कीस, और को, हौर आदि। अरस्तू के अनुसार—अनुकरण मनुष्य का प्रधान गुण है। लहजे के अंतर्गत उन शब्दों का प्रयोग होता है, जो सामान्य से सामान्य व्यक्ति समझ सकता है। जैसे कि आज हम पानीपूरी वाले को नीरपूरी या जलपूरी नहीं माँग सकते। वहाँ पर शुद्ध हिंदी की कोई आवश्यकता नहीं, हम पानी ही कहेंगे। शब्दों का महत्त्व स्थान से होता है और मनुष्य भाषा व्यवस्था से अधिक भाषा व्यवहार को महत्त्व देता है। अगर सभी मनुष्य शिक्षित होते तो बोली का निर्माण ही नहीं होता। निष्कर्षत: हमें यह प्रश्न निर्माण होता है कि क्या हम मनुष्य के लहजे पर उसका स्वभाव या व्यक्तित्व तय कर सकते है ? जो भाषाविद् की दृष्टि से भाषाशास्त्र का विषय बनकर भाषा के विकास में सहयोग दे सके।

निष्कर्ष—

१. सोलापुर शहर में जिस हिंदी का प्रयोग होता है, वह विभिन्न जनपदों की भाषाओं से होकर आती है। वहाँ की उपभाषाओं से प्रभावित होकर स्थानीय रूप ग्रहण कर लेती है।
२. जब दो भाषा के लोग आपस में मिलते हैं, तो भाषा का विकास होता है और शब्द-भंडार बढ़ता है तथा लहजे पर प्रभाव पड़ता है।
३. मुख्य बात सामने आती है कि जिस शहर के लहजे में कहे गए शब्द उसी शहर का मनुष्य उसका अर्थ समझ सकता है, उन शब्दों से स्थानीय भावनाएँ जुड़ी रहती हैं।
४. मनुष्य समय और व्यक्ति को देखकर अपने बात करने के लहजे में परिवर्तन करता है।
५. लहजा मनुष्य के पेशे अथवा कार्य पर निर्भर होता है।
६. लहजा व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध है।

सोलापुर बहुभाषिक क्षेत्र वाला शहर है, इसमें बोली जाने वाली बोलियाँ कहीं-न-कहीं भाषा का सौंदर्य बन पाएगी, क्योंकि व्यक्ति उच्चारण ही उसके भाषा का प्रमाण होता है और वही भाषा के विकास का प्रमाण। लहजे में मधुरता होती है। सोलापुर शहर में हिंदी भाषा का विकास मराठी, तेलुगु, कन्नड़, उर्दू आदि से प्रभावित होकर हुआ है। अगर हम भाषा की शुद्धता के पीछे जाएँगे तो हम भाषा की सुंदरता एवं सौंदर्य को खो देंगे। भाषा की सुंदरता उसके शहरी लहजे में है। भाषा तब ही विकास करती है, जब वह स्थानीय रूप ग्रहण करती है। आज विश्व में ऐसी कई भाषाएँ हैं, जो मर रही हैं अर्थात् खत्म हो रही हैं। अगर भाषा का विकास करना हो तो उस भाषा में इतनी क्षमता होनी चाहिए कि वह अन्य भाषाओं के शब्द ग्रहण करे। तब ही वह विकास के पथ पर होगी। हमारी हिंदी भाषा भी इस तरह की भाषा है। आज विश्व में सबसे अधिक कही व समझी जानेवाली भाषा है। सोलापुर में भी इसने स्थानीय रूप ग्रहण किया। भाषा के लहजे पर ही सैराट नामक मराठी फिल्म ने पूरे मराठी फिल्मों का रिकॉर्ड तोड़ दिया। जिसमें सोलापुर के स्थानीय ध्वनियों का समावेश था, जिसे लोगों ने पसंद किया।

सा अ

१३०, के.एम.सी. कॉम्प्लेक्स,
सिद्धेश्वर पेठ, सोलापुर
दूरभाष : ९०२२६८७७७३
misbapunekar19@gmail.com

बाल-कहानी

घर का खाना

● **प्रवीन कुमार**

पिंकी और बबलू को बाहर का खाना बहुत पसंद था। वे अकसर माँ के बनाए खाने को नापसंद कर देते और पापा से बाहर खाने के लिए जिद्द करते। पापा को भी उनकी जिद्द पूरी करनी पड़ती।

एक बार बबलू का जन्मदिन था, मम्मी ने कहा, "मैं घर पर छोले-पूरी बना दूँगी।"

पर पिंकी और बबलू ने पापा से बाहर छोले-भठूरे खाने की जिद्द की।

बबलू बोला, "जो स्वाद रेस्टोरेंट के खाने में आता है, वह घर पर कहाँ?"

पापा अपनी बाइक पर दोनों को ले गए और उनका मनपसंद खाना उन्हें खिलाया।

एक दिन मम्मी की माँ बीमार थी, उन्हें देखने वह अपने मायके चली गई। बबलू और पिंकी बहुत खुश हो रहे थे कि उन्हें अब कई दिन तक बाहर का खाना खाने को मिलेगा। उनके घर के आगे गोलगप्पे की रेहड़ीवाला आया। दोनों भाई-बहन गोलगप्पे खाने लगे। पिंकी जैसे ही दोने में गोलगप्पा खा रही थी, उसने देखा, गोलगप्पे के पानी में एक मरा हुआ चींटा पड़ा था। पिंकी को बहुत घिन्न आई। उसने बीच में ही खाना छोड़ दिया। थोड़ी देर में बबलू के पेट में मरोड़ उठने लगी। पिंकी ने पापा के पास फोन किया। पापा ने तुरंत डॉक्टर को बुलाया।

डॉक्टर ने चेकअप किया और पूछा कि उसने क्या खाया था? पिंकी ने बता दिया कि उन्होंने रेहड़ीवाले से गोलगप्पे खाए थे। डॉक्टर ने बताया कि बाहर का खाना नहीं खाना चाहिए, क्योंकि अकसर होटल और रेस्तराँ में भी साफ-सफाई का खयाल नहीं रखा जाता, जिससे बबलू के पेट में इंफेक्शन हो गया है। डॉक्टर ने दवा दी और बाहर का खाना न खाने की हिदायत भी दी।

डॉक्टर के जाने के बाद पापा ने सफेद चावल उबाल दिए और दाल बना दी। भूख लगने पर बबलू और पिंकी ने थोड़ा-बहुत ही खाया। सुबह सबने ब्रेड का नाश्ता किया। पापा को खाना बनाना नहीं आता था, इसलिए दोपहर में भी चावल ही खाने पड़े। पिंकी ने पराँठा बनाने की कोशिश की, पर आटा ही सही ढंग से न गूँथ सकी। कोई पराँठा जल गया तो कोई कच्चा रह गया।

देश की प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में बाल-रचनाएँ प्रकाशित। इसके अतिरिक्त एक साझा लघुकथा संकलन ज्ञानमुद्रा प्रकाशन, भोपाल से प्रकाशित हो रहा है। वर्तमान में स्वतंत्र लेखन कर रहा हूँ।

पिंकी को याद आया, जब मम्मी उनके लिए स्वादिष्ट खाना बनाती थी, पर वे मम्मी के बनाए खाने की तुलना बाहर के खाने से करती थी। घर का खाना कितनी साफ-सफाई से बनता है, जबकि बाहर रेहड़ीवाले कैसे गंदे हाथों से खाना बनाते और परोसते हैं। अकसर किसी सब्जी में कीड़ा निकल आए तो मम्मी उसे फेंक देती है, पर बाहर होटल और रेहड़ीवाले तो कीड़ों वाली सब्जी भी इस्तेमाल करते होंगे। खाने के बरतनों को भी वे ढंग से साफ नहीं करते होंगे।

पिंकी ने तय किया कि वह मम्मी से खाना बनाना सीखेगी, ताकि आगे से मम्मी का रसोईघर में हाथ बँटा सके और घर पर ही स्वादिष्ट खाना बना सके। उसने पापा से एक रेसिपि-बुक मँगाई, जिसमें बहुत सारी व्यंजन-विधियाँ लिखी थीं।

तीन दिन बाद मम्मी आई तो बबलू और पिंकी दोनों मम्मी से लिपट गए। उन्होंने मम्मी को सारी बात बताई। "मम्मी, हमें माफ कर दो, हम आपके बनाए खाने में कमियाँ निकालते थे, अब हमें पता चला कि घर का खाना ही सबसे अच्छा होता है और माँ के हाथों में जो प्यार और स्वाद होता है, वह कहीं नहीं मिल सकता" मम्मी ने उन्हें गले लगा लिया और उनकी आँखें खुशी से गीली हो गईं।

गाँव-कन्हौरा, रेवाड़ी-१२३०३५ (हरियाणा)
दूरभाष : ७०८२५१५९१३
pk13390@gmail.com

कविताएँ

बाल-कविता

• रामनिवास मानव

सुपरिचित लेखक। इनकी रचनाओं पर अब तक सत्तर से अधिक शोधार्थी शोध कर चुके हैं। दस अनूदित कृतियाँ प्रकाशित। देश-विदेश की डेढ़ सौ से अधिक संस्थाओं द्वारा हिंदी-साहित्य में विशिष्ट योगदान हेतु विभिन्न पुरस्कारों और सम्मानों से सम्मानित।

मोनू के रंग-ढंग

मोनूजी के रंग अनूठे।
मोनूजी के ढंग अनूठे॥

मोनूजी के भाव अनूठे।
मोनूजी के चाव अनूठे॥

मोनूजी की सूरत प्यारी।
मोनूजी की मूरत प्यारी॥

मोनूजी की महिमा न्यारी।
करें पीठ पर सदा सवारी॥

मोनूजी का रूप सलोना।
लगते हैं अनमोल खिलौना॥

मोनू मन का सच्चा

मोनू जिद्दी बच्चा है।
लेकिन मन का सच्चा है॥
अनु को खूब सताता है।
दिन-भर उसे चिढ़ाता है॥

तंग सभी को करता है।
नहीं किसी से डरता है॥
नकल चिढ़ाता है सबकी।
हँसी उड़ाता है सबकी॥

करता खों-खों खर-खर है।
बिना पूँछ का बंदर है॥
जाने क्या-क्या कहता है।
चुप नहीं कभी रहता है॥

पर डैडी का प्यारा है।
माँ का राजदुलारा है॥
मोनू जिद्दी बच्चा है।
लगता फिर भी अच्छा है॥

मोनू इसका नाम

नूतन पथ का राही है।
सच्चा वीर सिपाही है।
मोनू इसका नाम।
सारे करो प्रणाम।

आगे बढ़ते जाना है।
बस मंजिल को पाना है।
नहीं कभी आराम।
सारे करो प्रणाम।

कभी न शीश झुकाएगा।
ऊँची ध्वजा उठाएगा।
खूब करेगा काम।
सारे करो प्रणाम।

मोनू राजा

मोनू राजा आजा,
बैठ बजाएँ बाजा।
मिलकर सुनें कहानी,
राज था या रानी।

खेलें चोर-सिपाई,
मिटे सभी बुराई।
तितली पकड़ें भागें,
परी-लोक में जागें।

पीएँ दूध-बताशा,
देखें खूब तमाशा।
नहीं किसी को डाँटें,
जी भर खुशियाँ बाँटें।

मोनूजी 'इस्कूल' चले

मोनूजी 'इस्कूल' चले हैं।
लगते सबको बहुत भले हैं॥

छोटे कंधे, बस्ता भारी।
फिर भी कभी न हिम्मत हारी॥

टिफिन साथ में लाते हैं जी।
तैयारी से आते हैं जी॥

होमवर्क भी करते पूरा।
काम न कोई रहे अधूरा॥

पढ़ते जाना, बढ़ते जाना।
मोनूजी का यही तराना॥

अनुशासन में खूब ढले हैं।
मोनूजी 'इस्कूल' चले हैं॥

नाच-नचाते मोनूजी

जब जगमग दीवाली आती,
दीप जलाते मोनूजी।
होली पर भी हँसते-गाते
रंग उड़ाते मोनूजी।

विजया-दशमी पर रावण को
स्वयं जलाते मोनूजी।
नया वर्ष भी हँसी-खुशी से
खूब मनाते मोनूजी।

हो कोई त्योहार भले ही,
धूम मचाते मोनूजी।
बालकृष्ण बन घर में सबको
नाच-नचाते मोनूजी

मोनू का जन्मदिन

जन्मदिन है मोनू का आज।
बजेगा बाजा, बनेगा राजा
मोनू पहनकर सुंदर ताज।
जन्मदिन है मोनू का आज।

घर भर में लगे हुए गुब्बारे,
रंग-बिरंगे प्यारे-प्यारे।
ड्राइंग-रूम भी खूब सजा है,
सब ओर खुशी है, खूब मजा है।

सोनू-गिल्लू, रिंकू-बबली,
सब आए है, चहक रहे हैं।
फुदक रहे है, बहक रहे हैं।
सजे-सँवरे सब लगते लवली।

खूब मिठाई घर में आई—
बरफी, पेड़े, रस-मलाई।
जलेंगी रंगीन मोमबत्तियाँ,
केक कटेगा, सब में बँटेगा।
फिर सब खाएँगे केक-मिठाई।
देंगे बधाई, मिलकर गाएँगे—
"हैप्पी बर्थ-डे टु मोनू!
वैरी हैप्पी बर्थ-डे टु मोनू!"

मोनू का उत्पात

पापाजी का पैन चुराकर
मूँछ बनाई मोनू ने।
दादाजी का बेंत उठाकर
पूँछ लगाई मोनू ने।

करने लगे उत्पात अनेक
उछल-उछलकर फिर घर में।
किया नाक में दम सभी का
मोनूजी ने पल भर में।

मम्मी के समझाने से भी
न मोनू महाशय माने।
डंडाजी जब दिए दिखाई,
तब आए होश ठिकाने।

५७१, सेक्टर-१, पार्ट-२
नारनौल-१२३००१ (हरियाणा)
दूरभाष : ८०५३५४५६३२

वर्ग पहेली (१८३)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० अप्रैल, २०२१ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें दो सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते जून २०२१ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (१८१) का शुद्ध हल

१ य	२ म	■	३ कि	स्म	४ त	का	५ ध	६ नी
७ ज	र	■	ता	■	ज	■	८ रा	म
९ मा	ह	■	१० बी	११ त	ना	■	१२ त	ट
१३ नी	म	१४ ह	की	म	■	१५ झा	ल	र
■	■	१६ जू	ड़ा	■	१७ दा	म	■	■
१८ न	१९ ह	र	■	२० ब	र	क	२१ रा	२२ र
२३ र	म	■	२४ बा	ल	म	■	२५ ह	द
२६ ह	रा	■	र	■	दा	■	२७ ज	प
२८ र	ह	र	ह	क	र	■	२९ न	ट

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री मधुर मोहन मिश्र**
ज्ञानोदय विद्यालय परिसर
केंद्रीय विद्यालय क्र. १ के पास
रीवा-४८६००१ (म.प्र.)
दूरभाष : ९४२५८७८५६८

२. **श्रीमती कुसुम कुर्रे**
साहू पारा, गुढ़ियारी
रायपुर (छत्तीसगढ़)
दूरभाष : ९८२७०७६६००

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली १८१ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री शिवकांत, ब्रह्मानंद 'खिच्ची' (महेंद्रगढ़), विनीता सहल (मुंबई), फकीरचंद ढुल, जगदीश चंद (कैथल), शिवानंद सिंह 'सहयोगी' (मेरठ), अमरदेव अंगिरस (सोलन), जगदीश राय गर्ग (मानसा), बद्रीलाल व्यास (राजगढ़) वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), मोहन जगदाले (उज्जैन), ज्योति लोढ़ा (उदयपुर), प्रभात कुमार गुप्ता (मोहाली), मोहन उपाध्याय (अजमेर), बी.डी. बजाज, दिनकर सहल (दिल्ली)।

बाएँ से दाएँ—

१. कृषि-क्षेत्र (२)
३. मामूली, तुच्छ, नगण्य (२-२)
७. चुनौती (४)
९. गीली जमीन, जिसमें पाँव धँसता चला जाए (४)
११. शर्म (२)
१२. कीड़े के काटने से उत्पन्न चुभन (२)
१३. क्रिकेट के खेल में स्कोर की इकाई (२)
१४. मांस का टुकड़ा (२)
१५. पताका (२)
१६. पूजन की सामग्री (३)
१७. हिस्सेदारी, भागीदारी (२)
१८. पुलिस कर्मचारियों का पहरे के लिए घूमना (३)
१९. आकाश (३)
२१. दीवाल में बना ताक (२)
२२. वस्तु का भार, तौल, नाप (२)
२३. शरीर की हड्डी (२)
२४. अमृत (२)
२५. जानकार (२)
२६. भेंट (४)
२८. परिश्रम और हृदय से (२-२)
३०. एक खट्टा फल, जो सब्जी के रूप में खाया जाता है (४)
३१. समाधान (२)

ऊपर से नीचे—

१. क्रीड़ा, करतब (२)
२. तराई, पहाड़ के नीचे की भूमि, जहाँ तरी रहती है (४)
३. लड़की (२)
४. लड्डू (३)
५. लकड़ी की दुकान (२)
६. भोजन, वस्त्र आदि देकर जीवन-रक्षा करने की क्रिया (३-३)
८. शरीर (२)
१०. स्थान, श्रेणी (३)
१२. छड़ी (२)
१४. छात्रावास (३, ३)
१५. हवा का झोंका, प्रचंड वायु (२)
१६. वंश-परंपरा में गणना-क्रम में कोई स्थान (२)
१७. वह पत्थर, जिस पर रगड़कर अस्त्रों की धार तेज की जाती है (२)
१८. कंठ, कंठनाली (२)
२०. बिना चबाए निगल जाने की क्रिया (३)
२१. वस्तु के दो बराबर भागों में से एक (२)
२२. माता का पिता, नाना (४)
२४. महीन चूर्ण, जो आँखों की सुंदरता बढ़ाता है (३)
२५. बोध, जानना, जानकारी (२)
२७. बाजार, बाजार लगने का दिन (२)
२८. गीला, भीगा हुआ (२)
२९. पानी की टोंटी (२)

वर्ग पहेली (१८३)

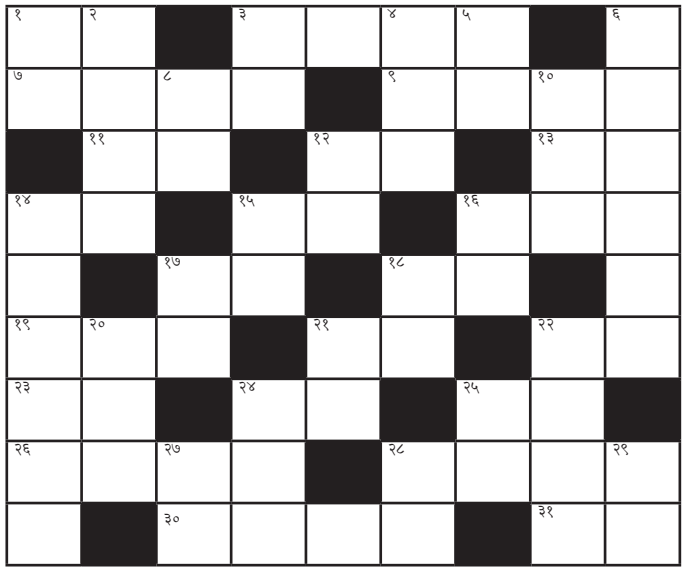

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

वर्ग पहेली (१८२) का हल अगले अंक में।

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' वर्षों से मेरी प्रिय पत्रिका रही है। जनवरी अंक में शरतचंद्र की कहानी 'गुरुजी', नरेंद्र कोहली की 'बुड्ढा सोता बहुत है', कमलकिशोर गोयनका का आलेख 'प्रेमचंद साहित्य में माँ का स्वरूप', प्रकाश मनु का 'और लहरा उठा तिरंगा', विज्ञान व्रत की गजलें, अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी का 'परंपरा के पुरुषार्थ : पं. विद्यानिवास मिश्र', श्रीराम परिहार का 'कोरोना! ऐसा मत करो ना', सुनीता सानू की 'चमचों की दुकान' रचनाएँ पसंद आईं तथा उत्प्रेरक लगीं। 'साहित्य अमृत' का हर अंक संग्रहणीय होता है।

—नंदकिशोर तिवारी, वाराणसी (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का फरवरी का वसंत को समर्पित अंक आवरण के चित्र से ही आकर्षक लगा। वसंत को भारत में बहुत अधिक महत्त्व दिया जाता है तथा वसंत पंचमी को सरस्वती पूजन से मन में उमंग, उल्लास उत्पन्न हो जाता है। इसे बढ़ाने में 'साहित्य अमृत' का यह अंक बहुत ही मददगार साबित हुआ। प्रतिस्मृति में आचार्य चतुरसेन की कहानी 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी' उम्दा लगी। वासंती स्वर में भारतेंदु हरिश्चंद्र और सुभद्राकुमारी चौहान की रचनाएँ बहुत ही अच्छी लगीं। अन्य सभी आलेख, कविताएँ, लघुकथाएँ बहुत अच्छी लगीं। पाठकों के ज्ञानवर्धन, ज्ञानरंजन के लिए साहित्य अमृत का आभार।

—विजयपाल सेहलंगिया, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

'साहित्य अमृत' पत्रिका निरंतर प्राप्त हो रही है। पत्रिका के दिसंबर अंक में आपने संपादकीय के माध्यम से महत्त्वपूर्ण सवाल उठाया है कि आखिर शहीद के परिवार की पीड़ा पर लेखकों का ध्यान क्यों नहीं जाता? निश्चित ही लेखकों को इस ओर ध्यान देना चाहिए। इस अंक में धर्मवीर भारती, विनोद कुमार मिश्र, नलिन चौहान, रसाल सिंह, विजय कुमार, कुमुद शर्मा आदि के आलेख अच्छे लगे। मित्रवर ललित राठौर 'शौर्य' की बाल कहानी 'पानी रे पानी' भी पढ़ने को मिली, जो आधुनिक समय में पानी के महत्त्व को दरशाती है। पत्रिका में प्रकाशित अन्य रचनाएँ भी अत्यंत उपयोगी और पठनीय हैं।

—पवनेश ठाकुरठी, अल्मोड़ा

'कि तुम मेरी जिंदगी हो' कहानी ने अभिभूत कर दिया। यह रचना समकाल में उसके बदले हुए और सूक्ष्म रूपों को भाँपती है। इसका वैशिष्ट्य उसके प्रसंगों या ब्योरों में उतना नहीं, जितना इसके संयोजन और प्रस्तुतीकरण में, भाषा व्यवहार में है। कहानी में विचार संवेदनात्मक कलात्मकता में गुँथे हुए हैं और दो-चार पीढ़ी बाद भी प्रासंगिक हैं। प्यार में झूठ बोलना, धोखा देना, अविश्वास करना प्यार को कमजोर बनाता है। 'स्वयं से भागा नहीं जा सकता'—यह वाक्य कहानी की आत्मा है; लेखक पूरन सिंहजी बधाई के पात्र हैं। महादेवीजी की कविता 'सरिता ही मेरा जीवन' में 'चिर मिलन विरह पुलिनों की/सरिता हो मेरा जीवन/प्रतिपल होता रहता हो/युग कूलों का आलिंगन।' ने मेरे मर्म को छू लिया।

—बी.डी. बजाज, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक मिला। आचार्य चतुरसेन की कहानी 'दुखवा मैं कासे कहूँ मोरी सजनी', मंजु मधुकर की 'सच्ची जीत', पुष्पा राही की कविता, भावना शेखर की कथा 'साँकल', जहीर कुरेशी की गजलें, हरिंद्र कुमार का 'वृंदावन की बाल विधवा', गोपाल चतुर्वेदी का व्यंग्य आलेख 'शिकारपुर और उसके वासी', श्यामसुंदर दुबे का 'सखा धर्ममय असरथ जाके', गिरीश भट्ट की कहानी 'मुलाकात' अच्छी लगीं। ऊषा निगम ने मणींद्रनाथ बनर्जी की शहादत का मार्मिक वर्णन किया है। राजशेखर व्यास द्वारा संकलित 'महीयसी महादेवी वर्मा के पत्र पं. सूर्यनारायण व्यास के नाम' और पंडित विद्यानिवास मिश्र पर पूजा शर्मा का शोध-आलेख संग्रहणीय है।

—सुशील बुड़ाकोटी 'शैलांचली', गुरुग्राम

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक मिला; कलेवर अच्छा लगा। संपादकीय में 'महिला सशक्तीकरण : नए क्षितिज' कहानियों में 'दृष्टि', 'नहीं चाहिए बेटी', 'कि तुम मेरी जिंदगी हो' अच्छी लगीं। अशोक अंजुम और रवि ऋषि की गजलें बेहद पसंद आईं।

—ब्रह्मानंद 'खिच्ची', महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

बासंती आभा से आच्छादित और मासूम सौंदर्य से परिपूरित आवरण पृष्ठ लिये 'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक प्राप्त हुआ। यह अंक वासंती रचनाओं व नवीन परंपरागत मूल्यों, विश्वासों, आस्थाओं की झलक देता है। व्यंग्य 'ठेले पर वैक्सीन' तथा नवांकुर रचना 'नव गति, नव लय' पसंद आईं।

—प्रमिला मजेजी, कोरबा

साहित्य अमृत का मार्च अंक प्राप्त हुआ। अपने नाम के अनुकूल साहित्य के अमृत को हम सबके समक्ष प्रस्तुत करता हुआ उसके विविध अंगों कहानी, कविता, लोक-साहित्य, संस्मरण और शोध विषय को समाहित करता हुआ एक स्मरणीय अंक के रूप में दिखाई महिला सशक्तीकरण पर विमर्शपूर्ण संपादकीय और हिंदी की सरस्वती सुश्री महादेवी वर्मा का 'सरिता हो मेरा जीवन' पढ़कर मन भाव-विभोर हो उठा। श्री प्रेमपाल शर्मा का 'राजस्थान के तीर्थ-दर्शन' पढ़ने के बाद साँवलिया धाम, द्वारकाधीश मंदिर, शनि मंदिर और मुगल कालीन विसंगतियों के विषय में उनका सजीव चित्रण, शब्दों का चयन (बूढ़ा सूरज), इतिहास से तादात्म्य बनाए रखने की उनकी निपुणता कमाल की दिखी। दक्षिण की तुलू भाषा की कविताओं को हिंदी में रखकर पत्रिका ने हिंदी को अन्य भारतीय भाषाओं के निकट लेने का स्तुत्य प्रयास किया है। 'नहीं चाहिए बेटी' भी प्रसंगानुकूल बन पड़ी है। कुल मिलकर इस संगृहणीय अंक के लिए संपूर्ण संपादक मंडल को हृदय से बधाई।

—डॉ. श्रीधर द्विवेदी, नोएडा (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक पढ़ा, कवर पेज का चित्र अच्छा लगा। संपादकीय में महिला सशक्तीकरण पर महिलाओं के बारे में जानकर खुशी हुई। भारत में किसी विदेशी मूल की महिला की सत्ता में भागीदारी नगण्य है। 'दृष्टि' कहानी खूब पसंद आई। प्रेमपाल शर्मा का 'राजस्थान के तीर्थ दर्शन' पसंद आया। इसके साथ अन्य रचनाएँ भी पसंद आईं।

—बद्री प्रसाद वर्मा अनजान, गोरखपुर (उ.प्र.)

हरियाणा साहित्य अकादेमी के पुरस्कार घोषित

१९ फरवरी को चंडीगढ़ में साहित्य अकादेमी द्वारा साहित्यकार सम्मान योजना के तहत 'आजीवन साहित्य साधना सम्मान' हेतु वर्ष २०१७ के लिए डॉ. कमल किशोर गोयनका, वर्ष २०१८ के लिए डॉ. सुरेश गौतम तथा वर्ष २०१९ के लिए श्री माधव कौशिक का चयन किया गया। सम्मानस्वरूप इन्हें सात लाख रुपए की राशि दी जाएगी। 'महाकवि सूरदास आजीवन साहित्य साधना सम्मान' हेतु वर्ष २०१७ के लिए डॉ. पूर्णचंद शर्मा, वर्ष २०१८ के श्री मधुकांत तथा डॉ. संतराम देशवाल एवं वर्ष २०१९ के लिए डॉ. सुदर्शन रत्नाकर एवं श्रीमती चंद्रकांता को सम्मानस्वरूप पाँच लाख रुपए की राशि दी जाएगी। 'पंडित माधव प्रसाद मिश्र सम्मान' के अंतर्गत वर्ष २०१७ के लिए डॉ. रामफल चहल, वर्ष २०१८ के लिए डॉ. महावीर प्रसाद शर्मा तथा डॉ. शील कौशिक तथा वर्ष २०१९ के लिए डॉ. लालचंद गुप्त मंगल को सम्मानस्वरूप ढाई लाख रुपए की राशि दी जाएगी। 'बाबू बालमुकुंद गुप्त सम्मान' के अंतर्गत वर्ष २०१७ के लिए डॉ. अशोक भाटिया तथा डॉ. दिनेश दधीचि, वर्ष २०१८ के लिए डॉ. रूप देवगुण तथा डॉ. राजकुमार निजात एवं वर्ष २०१९ के लिए श्री गुलशन मदान तथा डॉ. घमंडीलाल अग्रवाल को सम्मानस्वरूप दो लाख रुपए की राशि दी जाएगी।

'लाला देशबंधु गुप्त सम्मान' (दो लाख रुपए) के अंतर्गत वर्ष २०१७ के लिए श्री विकेश निझावन, वर्ष २०१९ के लिए श्री सुरेश जांगिड 'पंडित लखमीचंद सम्मान' के अंतर्गत वर्ष २०१९ के लिए श्री रामफल गौड़, 'जनकवि मेहर सिंह सम्मान' के अंतर्गत वर्ष २०१७ के लिए डॉ. महासिंह पुनिया, वर्ष २०१८ के लिए श्री सत्यवीर नाहड़िया तथा वर्ष २०१९ के लिए डॉ. बालकिशन शर्मा एवं डॉ. राजेंद्र बड़गूजर का चयन किया गया है। इन्हें सम्मानस्वरूप दो लाख रुपए की राशि दी जाएगी। 'हरियाणा गौरव सम्मान' के अंतर्गत वर्ष २०१७ के लिए डॉ. सारस्वत मोहन मनीषी तथा वर्ष २०१८ के लिए श्री विनोद बब्बर का चयन किया गया है। यह सम्मान हरियाणा में जनमे ऐसे साहित्यकारों को प्रदान किया जाता है, जो हरियाणा से बाहर रहकर साहित्य साधना द्वारा हरियाणा को गौरवान्वित करते हैं। इस सम्मान के अंतर्गत दो लाख रुपए प्रदान की जाएगी।

'आदित्य अल्हड़ हास्य सम्मान' के अंतर्गत वर्ष २०१७ के लिए श्री मनजीत सिंह, वर्ष २०१८ के लिए श्री महेंद्र शर्मा तथा वर्ष २०१९ के लिए डॉ. अशोक बत्रा को सम्मानस्वरूप दो लाख रुपए राशि दी जाएगी। 'श्रेष्ठ महिला रचनाकार सम्मान' के अंतर्गत वर्ष २०१७ के लिए डॉ. रोहिणी अग्रवाल तथा डॉ. शमीम शर्मा, वर्ष २०१८ के लिए श्रीमती धीरा खंडेलवाल एवं वर्ष २०१९ के लिए श्रीमती कमलेश मलिक तथा डॉ. ज्ञानी देवी को सम्मानस्वरूप दो लाख रुपए की राशि दी जाएगी। 'स्वामी विवेकानंद स्वर्ण जयंती युवा लेखक सम्मान' वर्ष २०१७ के लिए डॉ. ज्योति, वर्ष २०१८ के लिए डॉ. राजेश भारती तथा वर्ष २०१९ के लिए डॉ. शिवा का चयन किया गया है। □

'निज पथ का अविचल पंथी' कृति लोकार्पित

२३ फरवरी को नई दिल्ली के कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में पूर्व केंद्रीय मंत्री तथा पूर्व मुख्यमंत्री (हि.प्र.) श्री शांता कुमार की आत्मकथा 'निज पथ का अविचल पंथी' का लोकार्पण पूर्व केंद्रीय शिक्षा मंत्री डॉ. मुरली मनोहर जोशी, वरिष्ठ पत्रकार श्री प्रभु चावला तथा केंद्रीय संस्कृति एवं पर्यटन राज्यमंत्री मान. श्री प्रह्लाद सिंह पटेल की गरिमामयी उपस्थिति में संपन्न हुआ। किताबघर प्रकाशन द्वारा प्रकाशित यह कृति श्री शांता कुमारजी के निजी जीवन के साथ ही संघ, जनसंघ और भाजपा के विकास की यात्रा भी है। □

'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ : स्वर्णिम भारत के दिशा-सूत्र' कृति लोकार्पित

२६ फरवरी को लखनऊ के इंदिरा गांधी प्रतिष्ठान में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वरिष्ठ प्रचारक श्री सुनील आंबेकर की सद्य:प्रकाशित पुस्तक 'राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ : स्वर्णिम भारत के दिशा-सूत्र' का लोकार्पण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सह-सरकार्यवाह मान. श्री दत्तात्रेय होसबाले द्वारा उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री मान. योगी आदित्यनाथजी के पावन सान्निध्य में संपन्न हुआ। मान. योगी आदित्यनाथ ने कहा कि भारत की दृष्टि ही संघ की दृष्टि रही है। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को समझना है तो उसकी सेवा की दृष्टि को समझना होगा। यह एक ऐसा संगठन है, जो बिना किसी सरकारी सहयोग के देश के नागरिकों में बिना कोई भेदभाव किए दिन-रात सेवा कार्यों में लगा रहता है। श्री होसबालेजी ने कहा कि हिंदुत्व का अर्थ हिंदू धर्म नहीं है। इसको संकुचित रूप से नहीं देखना चाहिए। वरिष्ठ स्तंभकार श्री नरेंद्र भदौरिया व गोविंद वल्लभ पंत संस्थान के निदेशक श्री बद्री नारायण ने पुस्तक के बारे में जानकारी दी। श्री सुनील आंबेकर ने कहा कि संगठन के प्रति आ रही जिज्ञासाओं के समाधान का प्रयास इस पुस्तक में किया गया है। □

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान के पुरस्कार घोषित

२७ फरवरी को लखनऊ के हिंदी संस्थान द्वारा हिंदी लेखकों के लिए वर्ष २०१९ के पुरस्कारों की उत्तर प्रदेश सूची जारी की गई। सर्वाधिक प्रतिष्ठित पाँच लाख रुपए का 'भारत भारती सम्मान' मुंबई की डॉ. सूर्यबाला को दिया जाएगा। सर्वश्री दयानंद पांडेय को 'लोहिया साहित्य सम्मान'; तरुण विजय को 'हिंदी गौरव सम्मान'; रामेश्वर प्रसाद मिश्र 'पंकज' को 'महात्मा गांधी साहित्य सम्मान'; सूर्यकांत बाली को 'पं. दीनदयाल उपाध्याय साहित्य सम्मान'; कपिल तिवारी को 'अवंतीबाई साहित्य सम्मान'; राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा को 'राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन सम्मान' के रूप में चार लाख रुपए राशि प्रदान की जाएगी।

सर्वश्री पन्नालाल 'असर' को 'लोकभूषण सम्मान'; राजेंद्र सिंह पुंडीर को 'कलाभूषण सम्मान'; ब्रजेंद्र कुमार सिंहल को 'विद्या भूषण

सम्मान'; विनोद जैन को 'विज्ञान भूषण सम्मान'; राजेंद्र शर्मा को 'पत्रकारिता भूषण सम्मान'; रेणु राजवंशी गुप्ता को 'प्रवासी भारतीय हिंदी भूषण सम्मान'; रत्नाकर नराले को 'हिंदी विदेश प्रसार सम्मान'; देवेंद्र कुमार और सुकीर्ति भटनागर को 'बाल साहित्य भारती सम्मान'; कृष्णचंद्र लाल को 'मधुलिमये साहित्य सम्मान'; डॉ. सुरेश अवस्थी को 'पं. श्रीनारायण चतुर्वेदी साहित्य सम्मान'; अरविंद जैन को 'विधि भूषण सम्मान'; पवन अग्रवाल और योगेंद्र प्रताप सिंह 'मदन मोहन मालवीय विश्वविद्यालय स्तरीय सम्मान'; बिनय षडंगी राजाराम को 'साहित्य भूषण सम्मान', कमलेश कुमार मौर्य 'मृदु', भुवनेश्वर प्रसाद गुरुमैता, महेश चंद्र द्विवेदी, रामनिवास शर्मा, कुमुद शर्मा, अवनिजेश अवस्थी, साधुशरण वर्मा, लक्ष्मीशंकर गुप्त, कुलदीप चंद्र अग्निहोत्री, राजेश अरोरा 'शलभ', प्रमोदकांत मिश्र शंकर खरे 'असर', प्रमिला भारती, दीपक शर्मा व गोपाल कृष्ण शर्मा 'मृदुल', आचार्य भगवत दुबे, महेश चंद्र 'दिवाकर', नरसिंह बहादुर 'चंद', कृष्णबिहारी त्रिपाठी को 'साहित्य भूषण सम्मान' तथा सर्वश्री सुनील कुमार लवटे, मराठी; समगला शिवप्प मम्मिगट्टी, कन्नड़; पवन कुमार शास्त्री, संस्कृत; अजय शर्मा, पंजाबी 'सौहार्द सम्मान' सीजे प्रसन्नकुमारी, मलयालम; के.आर. विट्ठलदास, तमिल; जितेंद्र ऊधमपुरी, डोंगरी; सैयद अली करीम, उर्दू; भगवान त्रिपाठी, उड़िया; उपेंद्रनाथ रैणा, कश्मीरी; बलवंतराय जानी, गुजरातीय ओम प्रकाश गट्टाणी, असमिया; हजारीमयुम सुवदनी देवी, मणिपुरी को 'सौहार्द सम्मान' स्वरूप सभी को 'दो लाख रुपए' राशि का पुरस्कार दिया जाएगा।

२०१९ में प्रकाशित पुस्तकों पर नामित पुरस्कार, (७५ हजार रुपए) के अंतर्गत—'तुलसी पुरस्कार' पुस्तक 'श्रीगुरुजी काव्यांजलि', योगेश चंद्र वर्मा 'योगी', हरदोई को; 'जयशंकर प्रसाद पुरस्कार' पुस्तक 'दुर्योधन-वध', रामलखन शुक्ल, प्रयागराज। 'स्मृतियों का वातायन' के लिए अनिता अग्रवाल को 'श्रीधर पाठक पुरस्कार'; 'अंतराएँ बोलती हैं' के लिए डॉ. विनय भदौरिया को 'निराला पुरस्कार'; 'साथ गुनगुनाएँगे' के लिए रुद्रदेव नारायण श्रीवास्तव को 'दुष्यंत कुमार पुरस्कार'। 'निर्गुण गाँव सगुण प्रीति' के लिए अश्विनी कुमार को 'महावीर प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार'; 'इक्ष्वाकु वंशज' के लिए बजरंग बहादुर सिंह को 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार'; 'हलाला और अन्य कहानियाँ' के लिए रिफअत शाहीन को 'यशपाल पुरस्कार'; 'निगमागम सम्मत तुलसी चिंतन' (भाग-१ व २) के लिए डॉ. रामगोपाल पांडेय को 'रामचंद्र शुक्ल पुरस्कार'; 'एवरेस्ट' (सपनों की उड़ान सिफर से शिखर तक) के लिए रविंद्र कुमार को 'सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' पुरस्कार'; 'राहुल सांकृत्यायन, जिन्हें सीसीए नहीं रोक सकी' के लिए जगदीश प्रसाद, बरनवाल 'कुंद' को 'पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र' पुरस्कार'; 'मैं बपुरा बूड़न डरा' के लिए के.के. अस्थाना को 'हरिशंकर परसाई पुरस्कार'; 'अवधी के अंचरा मा' के लिए खुशीराम द्विवेदी 'दिव्य' को 'मलिक मुहम्मद जायसी पुरस्कार'; 'माधौ' के लिए देवी प्रसाद गौड़ को 'जगन्नाथदास रत्नाकर पुरस्कार'; 'जाए की बेरिया' के लिए प्रेमशीला शुक्ल को 'राहुल सांकृत्यायन पुरस्कार'; 'क्यों डूबी पनडुब्बी' के लिए पंकज चतुर्वेदी को 'सुर पुरस्कार'; 'राष्ट्रवाद चिंतन एवं विकास' के लिए राजेंद्रनाथ तिवारी को 'कबीर पुरस्कार'; 'कबीर साहब' के लिए डॉ. फाजिल अहसन हाशमी को 'सुब्रह्मण्य भारती पुरस्कार'; 'अंतहीन यात्रा : खेल पत्रकारिता और मैं' के लिए पद्मपति शर्मा को 'बाबूराव विष्णु पराड़कर पुरस्कार'; अभिदेशक (मासिक पत्रिका) के लिए संपादक डॉ. ओंकारनाथ द्विवेदी को 'सरस्वती पुरस्कार'; 'वैदिक संस्कृति विमर्श' के लिए डॉ. उपेंद्र कुमार त्रिपाठी को 'भगवानदास पुरस्कार'; 'आयुर्वेद में पर्यावरण की संस्कृति' के लिए डॉ. राधेश्याम शुक्ल को 'हजारी प्रसाद द्विवेदी पुरस्कार'; 'ब्रज के मौसम-गीत और लोकोत्सव' के लिए रागिनी चतुर्वेदी को 'पं. रामनरेश त्रिपाठी पुरस्कार'; 'महिला स्वास्थ्य' के लिए सुश्री नित्या द्विवेदी को 'पं. सत्यनारायण शास्त्री पुरस्कार'; 'हिंदुओं की संघर्ष गाथा' के लिए श्री लक्ष्मी नारायण अग्रवाल को 'आचार्य नरेंद्र देव पुरस्कार'; 'समान नागरिक संहिता' (चुनौतियाँ और समाधान) के लिए श्री अनूप बरनवाल को 'गणेशशंकर विद्यार्थी पुरस्कार'; 'हिंदी के प्रयोग में मानसिक अवरोध' के लिए डॉ. ईश्वर सिंह को 'डॉ. धीरेंद्र वर्मा पुरस्कार'; 'है छिपा सूरज कहाँ पर' के लिए सुश्री गरिमा सक्सेना को 'बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' पुरस्कार'; 'देवगढ़ की सांस्कृतिक विरासत' के लिए श्रीमती पद्मिनी श्वेता सिंह को 'महादेवी वर्मा पुरस्कार'; 'कथ्य शेष है' के लिए नागेंद्र वारिद को 'प्रेमचंद पुरस्कार' प्रदान किया जाएगा।

चालीस हजार रुपए के 'सर्जना पुरस्कार' के अंतर्गत 'हनुमत हुंकार' के लिए श्री उमाशंकर शुक्ल 'शितिकंठ' को 'जगदीश गुप्त पुरस्कार'; 'छूट गया हूँ मैं' के लिए श्री श्रीधर मिश्र को 'विजयदेव नारायण साही पुरस्कार'; 'चुप्पियों को तोड़ते हैं' के लिए श्री योगेंद्र प्रताप मौर्य को 'बलबीर सिंह 'रंग' पुरस्कार'; 'गजल आबशार' के लिए महेंद्र 'हुमा' को 'अदम गोंडवी पुरस्कार'; 'शब्द और संवाद' के लिए डॉ. आशा उपाध्याय को 'गुलाब राय पुरस्कार'; 'वन टू का फोर' के लिए श्री राम किशोर नाग को 'मोहन राकेश पुरस्कार'; 'अनुभूति' के लिए श्री चिरंजीव सिन्हा एवं हर्षाश्री को 'नरेश मेहता पुरस्कार'; 'भक्ति : भय और भूख की अंतर्यात्रा' के लिए नित्यानंद श्रीवास्तव को 'रामबिलास शर्मा पुरस्कार'; 'लौट के बताता हूँ' के लिए श्री मुकुल श्रीवास्तव को 'निर्मल वर्मा पुरस्कार'; 'डंके की चोट पर' के लिए श्री अलंकार रस्तोगी को 'शरद जोशी पुरस्कार'; 'माटी' के लिए रमाकांत तिवारी 'रामिल' को 'वंशीधर शुक्ल पुरस्कार'; 'नजरबट्टू' के लिए सुश्री अर्चना चतुर्वेदी को 'रामशंकर शुक्ल 'रसाल' पुरस्कार'; 'हुंकारी' के लिए डॉ. सुमन सिंह को 'भिखारी ठाकुर पुरस्कार'; 'गरम पहाड़ और अन्य कहानियाँ' के लिए डॉ. अनिता भटनागर जैन को 'सोहनलाल द्विवेदी पुरस्कार'; 'गोपी भाव की साधना और संत महाकवि सूरदास' के लिए डॉ. अरविंद कुमार राम को 'नजीर अकबराबादी पुरस्कार'; 'केनोपनिषद्' के लिए बालकृष्ण मिश्र को 'काका कालेलकर पुरस्कार'; 'मीडिया समग्र' के लिए डॉ. अर्जुन तिवारी को 'धर्मवीर भारती पुरस्कार'; पत्रिका 'अभिनव मीमांसा' (त्रैमासिक) के लिए संपादक डॉ. विवेक पांडेय को 'धर्मयुग पुरस्कार'; 'नाथ संप्रदाय के सिद्ध योगी' के लिए डॉ. अरुण कुमार

त्रिपाठी को 'नंद किशोर देवराज पुरस्कार'; 'संस्कृति सेतु' के लिए डॉ. मुरारी लाल अग्रवाल को 'विद्यानिवास मिश्र पुरस्कार'; 'काव्य-भौतिकी' के लिए डॉ. ऋषि कुमार सिंघल को 'डॉ. गोरख प्रसाद पुरस्कार'; 'अवध अतीत और वर्तमान' के लिए श्री पवन बख्शी और डॉ. राकेश मेहता को 'ईश्वरी प्रसाद पुरस्कार'; 'विभाजन की त्रासदी' के लिए मनीष त्रिपाठी को 'के.एम. मुंशी पुरस्कार'; 'उत्तर प्रदेश की अर्थव्यवस्था' के लिए सर्वश्री अरविंद नारायन मिश्र और वेदपाल सिंह सरोहा को 'जे.के. मेहता पुरस्कार'; 'खड़ी बोली की विकास-यात्रा' के लिए डॉ. केशरी नारायण को 'किशोरदास वाजपेयी पुरस्कार'; युवा लेखन (३५ वर्ष तक के लेखकों हेतु) 'मैं भारत हूँ' के लिए श्री अतुल बाजपेयी को 'डॉ. रांगेय राघव पुरस्कार' समस्त विधाओं में केवल महिला साहित्यकारों की कृति पर, पुस्तक 'भारतीय गो संपदा' के लिए वर्षा अग्रवाल को 'विद्यावती कोकिल पुरस्कार'; 'श्यामल काया-गोरी छाया' के लिए डॉ. डी.एस. शुक्ला को 'अमृतलाल नागर पुरस्कार' दिया जाएगा।

'भावना के पृष्ठ पर' के लिए रेनू द्विवेदी को पच्चीस हजार रुपए का 'हरिवंश राय बच्चन युवा गीतकार सम्मान' दिया जाएगा। २०१९ में प्रकाशित (३५ से ६० वर्ष) तक की महिला रचनाकार की कथाकृति पर पुस्तक 'लकी चार्म', डॉ. मोनिका शर्मा, रामपुर को 'पं. बद्री प्रसाद शिंगलू स्मृति सम्मान' के अंतर्गत आठ हजार रुपए राशि का पुरस्कार दिया जाएगा। ☐

'जिंदगी की बोनस' कृति लोकार्पित

२४ फरवरी को नई दिल्ली के इंडिया इंटरनेशनल सेंटर में प्रसिद्ध संस्कृतिकर्मी डॉ. सच्चिदानंद जोशी द्वारा लिखित पुस्तक 'जिंदगी का बोनस' का लोकार्पण प्रसिद्ध भारतीय कथक नृत्यांगना सुश्री शोभना नारायण की अध्यक्षता में वरिष्ठ व्यंग्यकार एवं लेखक प्रो. अशोक चक्रधर के करकमलों से संपन्न हुआ। विशिष्ट अतिथि सुश्री अल्पना मिश्र तथा प्रो. संजय द्विवेदी रहे। इस अवसर पर प्रो. संजय द्विवेदी ने कहा कि लेखक की सहृदयता ने जिंदगी की बहुत साधारण घटनाओं को 'जिंदगी का बोनस' बना दिया है, यह पुस्तक संवेदना के धागों से बुनी गई है। लेखक की यही संवेदना, आत्मीयता और आनंद की खोज इस पुस्तक का प्राणतत्त्व है।

श्रीमती अल्पना मिश्र ने कहा कि इस पुस्तक के बहाने हिंदी साहित्य को एक अनूठा गद्य मिला है। जिसमें ललित निबंध, रिपोर्ताज, कथा, निबंध चारों के मिले-जुले रूप दिखते हैं। इन रम्य कथाओं में विविधता बहुत है और इनका भरोसा एक सुंदर दुनिया बनाने में है। श्री अशोक चक्रधर ने इस कृति को हिंदी साहित्य के लिए बोनस बताया और कहा कि देश की मिली-जुली संस्कृति और संवेदना का इसमें दर्शन है, यही भावना प्रमोदक है। संवेदन तंत्रिका को झंकृत कर जाती है। इनकी कहानियों की प्रेरणा उनके सौंदर्य अनुभूति को दर्शाती है। प्रसिद्ध नृत्यांगना सुश्री शोभना नारायण ने कहा कि लघुकथा के इस संग्रह में चिंतन और मनन दिखाई देता है। सामान्य घटनाओं से निष्कर्ष निकालना और सीख लेना मानवीयता, सूक्ष्मता, सूझबूझ और जीवन जीने का साहस भी इसमें दिखाई देता है। साथ-ही-साथ रसास्वादन भी है। ये रचनाएँ ज्ञानवर्धक भी हैं। श्री सच्चिदानंद जोशी ने लेखकीय वक्तव्य दिया और अपनी दो कहानियों का पाठ भी किया। कार्यक्रम का संचालन सुश्री श्रुति नागपाल और आभार ज्ञापन श्रीमती मालविका जोशी ने किया। ☐

लघुकथा सम्मेलन संपन्न

२२ फरवरी को पटना में भारतीय युवा साहित्यकार परिषद् के तत्त्वावधान में फेसबुक के 'अवसर साहित्यधर्मी पत्रिका' के पेज पर 'ऑनलाइन मासिक हेलो फेसबुल लघुकथा सम्मेलन' का संचालन करते हुए संयोजक श्री सिद्धेश्वर तथा मुख्य अतिथि डॉ. योगेंद्र नाथ शुक्ल ने अपने विचार व्यक्त किए। सम्मेलन में देश-विदेश के बाईस लघुकथा-कार शामिल हुए। सर्वश्री संतोष सुपेकर, विजयानंद विजय, अपूर्व कुमार ने अपने विचार व्यक्त किए। इसके अतिरिक्त श्रीमती चित्रा मुद्गल के विचार वीडियो द्वारा प्रस्तुत किए गए। ☐

प्रो. वेलचेरु नारायण राव को साहित्य अकादेमी की मानद महत्तर सदस्यता

२६ फरवरी को साहित्य अकादेमी की आम सभा द्वारा डॉ. चंद्रशेखर कंबार की अध्यक्षता में बानबेवीं बैठक में प्रो. वेलचेरु नारायण राव को साहित्य अकादेमी का मानद महत्तर सदस्य चुना गया। प्रो. वेलचेरु नारायण राव १४वें विद्वान् हैं, जो साहित्य अकादेमी के मानद महत्तर सदस्य बनेंगे। प्रो. नारायण राव लब्धप्रतिष्ठ विद्वान्, लेखक, विद्याविद् और अनुवादक हैं, जिन्होंने तेलुगु साहित्य, दक्षिण भारतीय इतिहास और अनेक मौलिक कृतियों के अनुवाद में अपना योगदान दिया है। प्रो. नारायण राव को अनुवाद के लिए ए.के. रामानुजन पुरस्कार तथा राधा-कृष्णन स्मृति पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। ☐

लोकार्पण समारोह आयोजित

केंद्रीय शिक्षा मंत्री श्री रमेश पोखरियाल 'निशंक' ने 'बी.एल. गौड़ का गीत-लोक' तथा श्री बी.एल. गौड़ ने श्री रमेश पोखरियाल 'निशंक' पर केंद्रित पुस्तक 'अंतहीन विमर्शों का पुंज' का लोकार्पण किया। दोनों पुस्तकों का विवेचनात्मक लेखन डॉ. सुधांशु कुमार शुक्ला द्वारा किया गया। श्री रमेश पोखरियाल 'निशंक' ने सर्वश्री बी.एल. गौड़, सुधांशु कुमार शुक्ला और विवेक गौतम का शॉल ओढ़ाकर तथा पुष्पों से अभिनंदन किया। श्री रमेश पोखरियाल 'निशंक' का अभिनंदन गौड़ समूह के प्रबंध निदेशक श्री मनोज गौड़, निदेशक श्रीमती मंजू गौड़ तथा शारदा गौड़ ने पुष्पों से और शॉल ओढ़ाकर किया। डॉ. विवेक गौतम के संचालन में सर्वश्री रमेश कुमार पांडेय, शारदा गौड़, मनोज गौड़, मंजू गौड़, मणींद्र जैन, अनिल शर्मा जोशी, आशीष कंधवे, हेमंत कुकरेती, किरण शर्मा, गुलशन सैफी, बेचैन कंडियाल और प्रेम मिश्र सहित अनेक गण्यमान्य व्यक्ति उपस्थित रहे। ☐

'बिहारी पुरस्कार' घोषित

विगत दिनों के.के. बिरला फाउंडेशन ने वर्ष २०२० के तीसवें

बिहारी पुरस्कार के लिए राजस्थान के प्रसिद्ध लेखक श्री मोहनकृष्ण बोहरा की आलोचनात्मक कृति 'तसलीमा : संघर्ष और साहित्य' को चुना है, जिसे पुरस्कारस्वरूप प्रशस्ति-पत्र, प्रतीक-चिह्न तथा ढाई लाख रुपए की राशि भेंट की जाएगी। □

रेणुजी की शताब्दी मनाई गई

४ मार्च को अररिया, रेणु ग्राम में लोक-हृदय सम्राट्, आंचलिकता को हिंदी में स्थापित करनेवाले अलबेले कथाकार श्री फणीश्वरनाथ रेणु की सौवीं जयंती उनकी जन्मभूमि पर कोलकाता की साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्था 'नीलांबर' द्वारा मनाई गई। उद्घाटन रेणुजी के पुत्र-द्वय श्री पद्म पराग और श्री अपराजित ने किया। सर्वश्री विनय कुमार, राकेश बिहारी, राजेश कमल एवं जिला प्रशासन के कई वरिष्ठ अधिकारी उपस्थित रहे। सर्वश्री पद्म पराग, विनय कुमार, राकेश बिहारी, रितेश कुमार ने अपने विचार व्यक्त किए। संवदिया फिल्म के कलाकारों को सम्मानित किया गया। संचालन सुश्री ममता पांडेय ने तथा धन्यवाद ज्ञापन डॉ. मंटू कुमार ने किया। □

पाटोत्सव ब्रजभाषा समारोह संपन्न

५ मार्च को नाथद्वारा में जयपुर के रामानंदाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय तथा साहित्य मंडल, श्रीनाथद्वारा के तत्त्वावधान में पाटोत्सव ब्रजभाषा समारोह के उद्घाटन सत्र में पूज्य विनय बाबा साहब पीठाधीश्वर की अध्यक्षता में मुख्य अतिथि श्रीमती अनुला मौर्य ने अपने विचार व्यक्त किए। अतिविशिष्ट अतिथि श्री अमर सिंह वधान रहे। सर्वश्री अंजीव अंजुम, लेकेंद्र नाथ कौशिक, कृष्ण शरद, अरविंद कुमार कौशिक ने अपने पत्र का वाचन किया। साहित्य मंडल के प्रधानमंत्री श्री श्याम प्रकाश देवपुरा द्वारा संपादित कृति 'श्याम सुधा रस' एवं अंजीव अंजुम की ब्रजभाषा काव्यकृति 'ब्रज गुंजन' का लोकार्पण हुआ। संस्थान द्वारा प्रो. अनुला मौर्य को 'साहित्य ज्योत्स्ना उपाधि', श्री सियाराम शर्मा एवं श्री देवनारायण जैमन को समाज शिक्षा एवं साहित्य सेवा में प्रशंसनीय कार्य हेतु अभिनंदित किया गया। ब्रजभाषा का श्रेष्ठ पाँच हजार एक सौ राशि का 'श्री रामशरण जी पीतलिया स्मृति सम्मान' डॉ. रामसनेही लाल यायावर को एवं ग्यारह हजार रुपए राशि का 'श्री गणेशवल्लभ राठी स्मृति सम्मान' श्री अशोक कुमार शर्मा 'नीलेश' को दिया गया। 'ब्रजभाषा विभूषण' की मानद उपाधि से सर्वश्री सुभाश चंद गुप्त 'मुसाफिर', रामसिंहजी साद, अटलराम चतुर्वेदी, नवीन सी चतुर्वेदी, नरेंद्र निर्मल, तेजवीर सिंह तेज, रेवती प्रसाद शर्मा, पंकज पाराशर एवं नारायण सिंह को विभूषित किया गया।

रात्रि सत्र में साहित्य मंडल द्वारा अखिल भारतीय ब्रजभाषा कवि सम्मेलन का आयोजन श्री अमर सिंह वधान की अध्यक्षता में श्री रामेश्वर शर्मा 'रामू भैया' के मुख्य आतिथ्य में संपन्न हुआ। सर्वश्री गोपाल प्रसाद गोप, पूनम शर्मा, अंजीव अंजुम, सुरेंद्र सार्थक, राधागोविंद पाठक, हरिओम हरि, अशोक अज्ञ, शिवसागर शर्मा ने अपनी रचनाएँ प्रस्तुत कीं। संचालन श्री सुरेंद्र सार्थक ने किया। □

कार्यक्रम आयोजित

नई दिल्ली के हिंदू कॉलेज की हिंदी साहित्य सभा द्वारा आयोजित लोकार्पण समारोह में पत्रिका 'हस्ताक्षर' एवं दो भित्ति पत्रिकाओं 'लहर' एवं 'अभिव्यक्ति' का लोकार्पण सुश्री अंजू श्रीवास्तव की अध्यक्षता एवं मुख्य अतिथि श्योराज सिंह बेचैन के सान्निध्य में संपन्न हुआ। डॉ. पल्लव ने 'हस्ताक्षर' पत्रिका के परिचय के साथ श्योराज सिंह 'बेचैन' और अंजू श्रीवास्तव का स्वागत किया और पत्रिका के इतिहास के संबंध में बताया। सर्वश्री प्रो. बेचैन, प्रो अंजू श्रीवास्तव, प्रद्युम्न कुमार ने अपने वक्तव्य दिए। पत्रिका प्रकाशन में योगदान देनेवाले विद्यार्थियों एवं पत्रिका की संपादक रचना सिंह को बधाई दी। इसके पश्चात प्रो. बेचैन ने हिंदी विभाग की भित्ति पत्रिका 'लहर' का लोकार्पण किया और प्रोफेसर अंजू श्रीवास्तव ने कॉलेज की भित्ति पत्रिका 'अभिव्यक्ति' का लोकार्पण किया। अतिथियों का परिचय श्री रमेश कुमार ने दिया। श्री अभय रंजन ने कोरोना के नियमों की अनुपालना के साथ गतिविधियों के संचालन पर बल देते हुए संपादक मंडल को बधाई दी। आभार व्यक्त श्री नौशाद अली ने किया। □

अज्ञेयजी की ११०वीं जयंती मनाई गई

७ मार्च को कुशीनगर स्थित अज्ञेय उपवन में सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' की ११०वीं जयंती के अवसर पर स.ही.वा. अज्ञेय भारतीय संस्थान न्यास समिति, श्रद्धानिधि न्यास और बुद्ध स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कुशीनगर के संयुक्त तत्त्वावधान तथा प्रो. महेश्वर मिश्र की अध्यक्षता में 'अज्ञेय स्मृति व्याख्यान' और 'हिंदी साहित्य में अज्ञेय का अवदान' विषयक संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री सदानंद गुप्त, अरुणेश नीरन, चितरंजन मिश्र, अनंत मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। श्री गिरिधर करुण ने काव्यपाठ किया तथा संचालन और अतिथियों का स्वागत श्री गौरव तिवारी ने किया। धन्यवाद ज्ञापन श्री अमृतांशु शुक्ल ने किया। □

लोकार्पण संपन्न

१० मार्च को साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली में डॉ. सुधा कुमारी द्वारा रचित चित्रयुक्त काव्य-संग्रह 'ओ मातृभूमि' का विमोचन तथा पुस्तक-परिचर्चा का आयोजन देश के प्रतिष्ठित साहित्यकारों सर्वश्री दिविक रमेश, प्रेम जनमेजय, प्रताप सहगल, शशि सहगल, राजेश कुमार, दामिनी यादव की उपस्थिति में संपन्न हुआ। संचालन श्री रणविजय ने किया। □

संस्कृत कवि-गोष्ठी संपन्न

१४ फरवरी को पं. विद्यानिवास मिश्र की पुण्यतिथि पर विद्याश्री न्यास के सांवत्सर आयोजनों में आभासी मंच पर 'संस्कृत कवि-गोष्ठी' आयोजित की गई, जिसमें देश के विभिन्न संस्कृत-साहित्यानुरागियों की भागीदारी रही। उद्घाटन सत्र 'पं. मुनिवर मिश्र स्मृति व्याख्यानमाला' के अंतर्गत प्रो. वसंत कुमार भट्ट के 'अभिज्ञान शाकुंतल में प्रतीकों का विनियोग' विषयक व्याख्यान संपन्न हुआ। सत्र का श्री शुभारंभ यज्ञेश्वर

मिश्र द्वारा पंडितजी और पं. मुनिवर मिश्र के चित्रों पर माल्यार्पण, श्री पतंजलि मिश्र के विधिपूर्वक वैदिक मंगलाचरण तथा सर्वश्री मीनाक्षी पाठक और चेतना पांडेय के संगीत-संगत पौराणिक मंगलाचरण तथा विद्याश्री न्यास एवं श्रद्धानिधि न्यास के सचिव श्री दयानिधि मिश्र के भावपूर्ण स्वागत-भाषण से हुआ। सर्वश्री वसंत कुमार भट्ट तथा वाचस्पति मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। अध्यक्षीय उद्‌बोधन प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी ने दिया तथा संयोजन श्री प्रकाश उदय ने किया।

द्वितीय सत्र सर्वश्री अभिराज राजेंद्र मिश्र तथा संपूर्णानंद की अध्यक्षता में अखिल भारतीय संस्कृत कवि-गोष्ठी के रूप में संपन्न हुआ। गरिमामय अध्यक्षीय काव्य-पाठ के साथ सर्वश्री अमृतलाल भोगयता, ऋषिराज पाठक, जगदीश प्रसाद सेमवाल, परमानंद झा, पी.वी. मुरलीमाधवन, पुष्पा दीक्षित, बलराम शुक्ल, रहस बिहारी द्विवेदी, राजकुमार मिश्र, शंकर राजारामन, हरेकृष्ण मेहेर, संस्कृता मिश्रा, उपेंद्र पांडेय, उमारानी त्रिपाठी, कमला पांडेय, कौशलेंद्र पांडेय, गायत्री प्रसाद पांडेय, चंद्रकांता राय, धर्मदत्त चतुर्वेदी, मनुलता शर्मा, रेवा प्रसाद द्विवेदी, विवेक पांडेय, विंध्येश्वरी प्रसाद मिश्र, सदाशिव कुमार द्विवेदी और हरिप्रसाद अधिकारी प्रभृति कवियों ने श्रोताओं को अपने काव्य-पाठ से अभिभूत किया। धन्यवाद ज्ञापन तथा संचालन श्री हरिप्रसाद अधिकारी ने किया।

'साहित्य अकादेमी बाल साहित्य पुरस्कार' घोषित

विगत दिनों साहित्य अकादेमी बाल साहित्य पुरस्कार २०२० की घोषणा की गई। पुरस्कारस्वरूप एक उत्कीर्ण ताम्रफलक और पचास हजार रुपए की राशि सम्मानित रचनाकारों को प्रदान की जाएगी। सम्मानित रचनाकार हैं : असमिया में 'फूसोंग' (लघुकथा) के लिए मधुरिमा घारफालिया को; बांग्ला में 'गोपोन बक्सो खुलते नेई' (कहानी) के लिए प्रचेता गुप्त को; बोडो में 'गथ सा बिसाम्बि' (निबंध) के लिए अजित बर को; डोगरी में 'दादी दा हिरख' (कहानी-संग्रह) के लिए शिव देव सुशील को; अंग्रेजी में 'डेड ऐज ए डोडो' के लिए (कथा साहित्य) वेनिता कोल्हो को; गुजराती में 'भुरीनी अजायब सफर' (कहानी-संग्रह) के लिए नटवर पटेल को; हिंदी में 'संपूर्ण बाल कविताएँ' के लिए बालस्वरूप राही को; कन्नड़ में 'नानू अंबेडकर' (उपन्यास) के लिए एच.एस. ब्याकोड को; कश्मीरी में 'पाधिच आश' (कविता) के लिए सैयद अख्तर हुसैन मंसूर को; कोंकणी में 'बालु' (लघु उपन्यास) के लिए वी. कृष्ण वाध्यार को; मैथिली में 'सोनहुला इजोतवला खिड़की' (कविता) के लिए सियाराम झा 'सरस' को; मणिपुरी में 'उचान मैरा' (कविता) के लिए नाउरेम बिद्यासागर को; मराठी में 'आबाची गोष्ट' (लघुकथा) के लिए आबा गोविंदा महाजन को; नेपाली में 'अक्षर उज्यालो' (नाटक) के लिए ध्रुव चौहान को; ओडिआ में 'बन देउला रे सुना नेउला' (कहानी-संग्रह) के लिए रामचंद्र नायक को; पंजाबी में 'फुल्लां दा शहर' (यात्रा-वृत्तांत) के लिए कर्नेल सिंह सोमल को; राजस्थानी में 'कुदरत रो न्याव' (कविता) के लिए मंगत बादल को; संथाली में 'भांज कूल भूरकह इपिल सुनारम सोरेन' (जीवनी) के लिए जोयराम टुडु को; सिंधी में 'मुंडी केर पाए?' (नाटक) के लिए साहिब बिजाणी को; तेलुगु में 'स्नेहितुलू' (लघुकथा) के लिए कन्नेगंटि अनसूया को; उर्दू में 'फख्र-ए-वतन' के लिए हाफिज कर्नाटकी को। मलयालम, संस्कृत, तमिल भाषाओं के पुरस्कार बाद में घोषित किए जाएँगे। □

साहित्य अकादेमी युवा पुरस्कार घोषित

१२ मार्च को साहित्य अकादेमी ने अठारह भाषाओं के २०२० के वार्षिक युवा पुरस्कारों की घोषणा की। पुरस्कार विजेताओं को पुरस्कारस्वरूप एक उत्कीर्ण ताम्र फलक तथा पचास हजार रुपए की राशि प्रदान की जाएगी। पुरस्कृत रचनाकार हैं—कविता विधा में सर्वश्री द्विजेन दास (असमिया), न्यूटन के. बसुमतारी (बोडो), गंगा शर्मा (डोगरी), मसरूर मुजफ्फर (कश्मीरी), रामेश्वर शरुंगबम (मणिपुरी), दीपक धालेवान (पंजाबी), अंजलि (संताली), ऋषिराज पाठक (संस्कृत), शक्ति (तमिल) और साकिब फरीदी (उर्दू)। कहानी विधा में सर्वश्री के.एस. महादेवस्वामी (कन्नड़), सोनू कुमार झा (मैथिली) और मानसा येन्द्लुरी (तेलुगु); निबंध विधा में सर्वश्री अंजन बासकोटा (नेपाली) और चंद्रशेखर होता (ओड़िया); संस्मरण विधा में सुश्री यशिका दत्त (अंग्रेजी); आलोचना विधा में श्री अंकित नरवाल (हिंदी); यात्रा-वृत्तांत विधा में श्री संपदा कुंकलकार (कोंकणी) को पुरस्कृत किया जाएगा। बांग्ला, राजस्थानी, मलयालम, गुजराती, मराठी और सिंधी भाषाओं के पुरस्कार शीघ्र ही घोषित किए जाएँगे। □

साहित्य अकादेमी पुरस्कार घोषित

१२ मार्च को साहित्य अकादेमी पुरस्कार की घोषणा की गई। पुरस्कार-स्वरूप एक उत्कीर्ण ताम्रफलक, शॉल और एक लाख रुपए की राशि प्रदान की जाएगी। पुरस्कृत रचनाकार हैं—कविता-संग्रह के लिए सर्वश्री अरुंधति सुब्रमण्यम (अंग्रेजी), हरीश मीनाश्रु (गुजराती), अनामिका (हिंदी), आर.एस. भास्कर (कोंकणी), ईरुंगबम देवेन (मणिपुरी), रूपचंद हांसदा (संताली) एवं निखिलेश्वर (तेलुगु)। उपन्यास के लिए सर्वश्री नंदा खरे (मराठी), महेशचंद्र शर्मा गौतम (संस्कृत), इमाइयम (तमिल) एवं हुसैन-उल-हक। कहानी-संग्रह के लिए सर्वश्री अपूर्व कुमार शइकीया (असमिया), स्व. धरणीधर औवारी (बोडो), स्व. हृदय कौल भारती (कश्मीरी), कमलकांत झा (मैथिली) एवं गुरदेव सिंह रूपाणा (पंजाबी), ज्ञान सिंह (डोगरी) जेठो लालवानी (सिंधी) को नाटक के लिए और एम. वीरप्पा मोइली (कन्नड़) एवं शंकर (मणिशंकर मुखोपाध्याय) (बांग्ला) को क्रमशः संस्मरण और महाकाव्य के लिए पुरस्कृत किया गया। मलयालम, नेपाली, ओड़िया और राजस्थानी भाषाओं में पुरस्कार बाद में घोषित किए जाएँगे। □

श्रीहरि रजत जयंती कार्यक्रम संपन्न

६ व ७ मार्च को दिल्ली में दो दिवसीय श्रीहरि रजत जयंती कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इस महोत्सव की थीम थी 'भारत के रंग एकल के संग'। कार्यक्रम की शुरुआत भगवान राम के भजन से हुई। वरिष्ठ पत्रकार रामबहादुर राय के अलावा इंडिया टी.वी. के प्रबंध संपादक श्री

रजत शर्मा, विश्व हिंदू परिषद के श्री मिलिंद परांडे, जी न्यूज के श्री सुधीर चौधरी, वरिष्ठ पत्रकार श्री अंशुमान तिवारी, राज्यसभा सदस्य श्री सुभाष चंद्रा और वरिष्ठ पत्रकार श्रीमती किरण चोपड़ा कार्यक्रम के अतिथि थे। कार्यक्रम में श्री सिद्धार्थ शंकर गौतम द्वारा लिखित पुस्तक 'स्वराज का शंखनाद-एकल अभियान' का विमोचन भी हुआ, जिसमें श्री श्याम गुप्त ने अपने विचार व्यक्त किए।

इस अवसर पर वरिष्ठ पत्रकार रामबहादुर राय ने कहा कि एकल ने अपने ध्येय वाक्य को साकार किया है। महात्मा गांधी के सपनों का भारत सही मायनों में एकल ने बनाया है। गांधीजी का स्वप्न एकल का सपना बना है। कार्यक्रम को संबोधित करते हुए रजत शर्मा ने कहा कि एकल श्री हरि सत्संग समिति ने शिक्षा और संस्कार के क्षेत्र में नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं। समिति ने समाज को स्वावलंबन का पाठ भी पढ़ाया है। कोरोना काल में जब पूरी दुनिया महामारी से प्रभावित है, भारतीय समाज ने इस बीमारी को अपने जज्बे से हराया है। एकल ने भारत के ४० करोड़ लोगों तक पहुँचकर मानवता की मिसाल पेश की है। पत्रकार सुधीर चौधरी ने एकल अभियान को अद्वितीय बताते हुए कहा कि एकल ने समाज को एक कर असंभव को संभव किया है। उन्होंने एकल में नवाचारों को महत्त्व देने की बात करते हुए कहा कि अब आने वाली पीढ़ी को एकल से जोड़ना जरूरी है। वरिष्ठ पत्रकार अंशुमान तिवारी ने एकल को समाज जीवन की गीता बताते हुए कहा कि शिक्षा पद्धति में विज्ञान और चरित्र का समावेश ही सही शिक्षा है। इसे शासन से दूर रखना चाहिए। शिक्षा समाज के हाथों में ही रहना चाहिए।

इस अवसर पर राज्यसभा सदस्य सुभाष चंद्रा ने कहा कि एकल की ३२ वर्षों की यह यात्रा अविस्मरणीय है। जब मैंने पहली बार वन यात्रा की, तब से किसी न किसी रूप से मैं एकल अभियान से जुड़ा हुआ हूँ। इंसान को दो चीजें जोड़ती हैं—पहला दु:ख और दूसरा भारतीय संस्कृति। एकल का काम दुखों को दूर करता है। भजन, गोसेवा, वनवासी सेवा से इंसान अपना दु:ख भूल जाता है। वरिष्ठ पत्रकार किरण चोपड़ा ने कहा कि एकल का कार्य मेरे दिल से जुड़ा है। आत्मनिर्भर बनाने का मूल मंत्र है शिक्षा। यह जिंदगी का सत्य है, जो सभी को प्रभावित करता है। मेरे पिताजी हमेशा कहा करते थे कि मैं अपनी बच्चियों को दहेज में शिक्षा-संस्कार दूँगा। एकल ने वनवासी समाज में जिस काम का बीड़ा उठाया है, उस पर मुझे गर्व होता है। कार्यक्रम के दौरान एकल कल्चर कनेक्ट नामक ऐप का उद्घाटन नेहा मित्तल द्वारा हुआ। इस ऐप के माध्यम से बच्चों को मॉरल स्टोरीज के साथ संस्कारों की शिक्षा दी जाएगी।

कार्यक्रम का समापन एकल सुर-ताल टोली की भव्य व रंगारंग प्रस्तुति से हुआ। कार्यक्रम की रचना संयोजिका श्रीमती मीना अग्रवाल व सह-संयोजिका श्रीमती मंजू केडिया (मुंबई) ने श्री राजेश गोयल के साथ की। □

त्रिदिवसीय साहित्योत्सव २०२१ संपन्न

१२ मार्च को, साहित्य अकादेमी द्वारा प्रतिवर्ष आयोजित किए जानेवाले 'साहित्योत्सव २०२१' का शुभारंभ अकादेमी के अध्यक्ष श्री चंद्रशेखर कंबार ने किया। अकादेमी के सचिव श्री के. श्रीनिवासराव ने पिछले वर्ष साहित्य अकादेमी द्वारा किए गए महत्त्वपूर्ण कार्यों के बारे में विस्तृत जानकारी दी। 'साहित्योत्सव २०२१' के दूसरे दिन का मुख्य आकर्षण साहित्य अकादेमी अनुवाद पुरस्कार २०१९ अर्पण समारोह था, जो कमानी सभागार में संपन्न हुआ। समारोह की मुख्य अतिथि प्रख्यात हिंदी कथा लेखिका श्रीमती चित्रा मुद्गल थीं। इससे पहले साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष श्री चंद्रशेखर कंबार ने कहा कि हमारी बहुआयामी संस्कृति की एकता का आधार अनुवाद ही है। पूरे भारतीय महाद्वीप में जो सांस्कृतिक एकता हम देखते हैं वह विभिन्न भाषाओं और उनसे हुए अनुवादों के चलते ही हैं। हमारी कई प्राचीन पौराणिक कथाओं ने अनुवाद के जरिए ही एक पहचान पाई है। साहित्य अकादेमी अनुवाद पुरस्कार-२०१९ प्राप्त करनेवाले अनुवादक थे—नव कुमार संदिकै (असमिया), तपन बंद्योपाध्याय (बांग्ला), रत्न लाल बसोत्रा (डोगरी), सुसन डैनियल (अंग्रेजी), आलोक गुप्त (हिंदी), विट्ठ-लराव टी. गायकवाड (कन्नड़), रत्न लाल जौहर (कश्मीरी), जयंती नायक (कोंकणी), केदार कानन (मैथिली), सई परांजपे (मराठी), सचेन राई 'दुमी' (नेपाली), अजय कुमार पटनायक (ओड़िआ), देव कोठारी (राजस्थानी), प्रेमशङ्कर शर्मा (संस्कृत), खेरवाल सोरेन (संताली), ढोलन राही (सिंधी), के.वी. जयश्री (तमिल), पी. सत्यवती (तेलुगु) एवं असलम मिर्जा (उर्दू)। अनुवादकों को पुरस्कार के रूप में ५००००/- रुपए की राशि और उत्कीर्ण ताम्र फलक साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष श्री चंद्रशेखर कंबार द्वारा प्रदान किए गए। गोपीनाथ ब्रह्म (बोडो), बकुला घासवाला (गुजराती), सी.जी. राजगोपाल (मलयालम), खुमांथेम प्रकाश सिंह (मणिपुरी) एवं प्रेम प्रकाश (पंजाबी) अपरिहार्य कारणों से पुरस्कार ग्रहण करने नहीं आ सके। कार्यक्रम के अंत में समापन वक्तव्य देते हुए साहित्य अकादेमी के उपाध्यक्ष श्री माधव कौशिक ने कहा कि अनुवादक साहित्य के सबसे बड़े मिशनरी हैं। वे लेखकों द्वारा रचे मौन को भी पढ़कर उसको सार्थक अभिव्यक्ति देते हैं। □

'मनवा रे' पुस्तक विमोचित

मार्च माह में वाराणसी में दुर्गाकुंड स्थित पिलग्रिम्स पब्लिशिंग हाउस में सुपरिचित कवयित्री-लेखिका श्रीमती ज्योत्स्ना प्रवाह की सद्य:-प्रकाशित पुस्तक 'मनवा रे' के विमोचन के अवसर पर विद्वानों ने अपने विचार व्यक्त किए। मुकेश कुमार मिश्र व कुशाग्र मिश्र ने आगंतुकों का स्वागत किया तो लेखिका ज्योत्स्ना प्रवाह ने अपना मंतव्य व्यक्त किया। कार्यक्रम के अध्यक्ष पंडित हरिराम द्विवेदी तथा मुख्य अतिथि जितेंद्र नाथ मिश्र ने अपने विचार व्यक्त किए। सर्वश्री अत्रि भारद्वाज, रवि प्रकाश पांडेय, राम सुधार सिंह, अंकिता खत्री, स्नेहलता शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन श्रीमती मंजरी पांडेय ने और आभार श्री रामानंद तिवारी ने व्यक्त किया। □